मिलकर सोचें

अहल्या चारी

अनुवादिका
राजी रमणन्

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

जनवरी 1994
माघ 1915

PD 10 T-SD

प्रकाशन सहयोग

सी० एन० राव: अध्यक्ष, प्रकाशन विभाग

प्रभाकर द्विवेदी: मुख्य संपादक
शर्मा दत्त : सहायक संपादक

यू० प्रभाकर राव: मुख्य उत्पादन अधिकारी
सुरेन्द्र कान्त शर्मा : उत्पादन अधिकारी
प्रमोद रावत : सहायक उत्पादन अधिकारी
अतुल कुमार सक्सेना : उत्पादन सहायक

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन विभाग के कार्यालय

एन सी ई आर टी कैम्पस	सी.डब्ल्यू सी कैम्पस	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी डब्ल्यू सी. कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	चितलापक्कम, क्रोमपेट	डाकघर नवजीवन	32, बी टी रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110016	मद्रास 600064	अहमदाबाद 380014	24 परगना 743179

आवरण : डी०के० शेन्डे

मूल्य रु० 14.00

प्रकाशन विभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा पुष्कर इंटरनैशनल, बी–35, अंसल चेम्बर्स II भीकाजी कामा प्लेस द्वारा लेजरटाइपसेट होकर, जे०के० आफसेट प्रिंटर्स, 315, जामा मसजिद, दिल्ली 110006 द्वारा मुद्रित

प्राक्कथन

बच्चों के व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए यह आवश्यक है कि विद्यालय में वे आवश्यक कौशल तो सीखें ही, साथ ही उनमें ऐसी मनोवृत्तियाँ भी विकसित हों जो उनको बेहतर मनुष्य बना सकें। यदि अल्पायु में ही, जब बच्चों का मन बहुत कोमल और ग्रहणशील होता है, इन मनोवृत्तियों का विकास नहीं होता, तो आगे चलकर उनके विकास को स्वस्थ दिशा में ले जाने में कठिनाई होती है। इसलिए सारी शिक्षा समितियों और आयोगों ने स्कूल के स्तर पर ही नैतिक या मूल्याधारित शिक्षा देने पर बल दिया है। वस्तुतः नई शिक्षा नीति 1986 में कहा गया है: ''समाज में नैतिक मूल्यों के ह्रास और बढ़ते हुए द्वेष तथा कटुता के प्रति चिन्ता ने पाठ्यक्रम में पुनः समायोजन की जरूरत को महत्वपूर्ण बना दिया है ताकि सामाजिक, नैतिक और आचार संबंधी मूल्यों को पैदा करने के लिए शिक्षा को शक्तिशाली साधन बनाया जा सके''।

जहाँ नैतिक शिक्षा की आवश्यकता को विश्व स्तर पर स्वीकार किया गया है, वहाँ कई देशों में, बच्चों में सही मूल्य-चेतना विकसित करने की सर्वोत्तम विधि को लेकर अब भी बहस जारी है। यह खोज का नया क्षेत्र है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि आरंभ में हमारी कोशिश प्रयोगात्मक स्तर की ही होगी। इस बात को ध्यान में रखकर राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने नैतिक शिक्षा को लेकर एक परियोजना प्रारंभ की। आरंभिक कदम के तौर पर छात्रों तथा अध्यापकों के लिए हमने कुछ सामग्री तैयार करने की कोशिश की है। इसमें चेतना जागृत करने और नैतिक मूल्यों का विकास करने में मदद मिलेगी।

''मिलकर सोचें'' की रचना प्रो. कु. अहल्या चारी ने की है। ये रीजनल कॉलेज ऑफ एजुकेशन, मैसूर की भूतपूर्व प्राचार्या तथा केंद्रीय विद्यालय संगठन की भूतपूर्व आयुक्त हैं। इस समय वे भारत में कृष्णमूर्ति न्यास की शैक्षिक गतिविधियों के दिशानिर्देश में लगी हुई हैं। यह पुस्तक मूलतः कक्षा में छात्रों और अध्यापकों के बीच विचार-विमर्श को बढ़ावा देने के

लिए लिखी गई है। इस पुस्तक का प्रभाव सार्वभौमिक है तथा इसमें कुछ आधारभूत मानव मूल्यों पर विचार किया गया है। इसका आधार अधिक व्यापक और उदार है। इसमें संकीर्णता को स्थान नहीं दिया गया है। इस पुस्तक में विषय वस्तु को प्रस्तुत करने की शैली सरल, स्पष्ट और आत्मीय है, इसलिए युवा पीढ़ी इसमें विशेष रूप से रुचि लेगी।

मैं इस अवसर पर कु. अहल्या चारी के प्रति इस सुन्दर पुस्तक की रचना के लिए धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने अपनी व्यस्तताओं के बावजूद समय निकालकर इस पुस्तक की रचना की है। इस पुस्तक से बच्चों के प्रति उनका प्रेम और शिक्षण के प्रति उनकी प्रतिबद्धता उजागर होती है।

परिषद् के सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी शिक्षा विभाग के भूतपूर्व अध्यक्ष प्रोफेसर अनिल विद्यालंकार ''नैतिक शिक्षा कार्यक्रम'' की देखरेख करते रहे हैं। यह पुस्तक उसी कार्यक्रम का एक हिस्सा है। इस महत्वपूर्ण कार्यक्रम में उनकी गहरी रुचि रही है, इसके लिए मैं उनको धन्यवाद देता हूँ।

एस.आई.ई.टी.महिला कॉलेज, मद्रास की अंग्रेज़ी विभाग की अध्यक्षा (अब अवकाश प्राप्त) कु. तेलमा रोजारियो के भी हम आभारी हैं जिन्होंने इस पुस्तक की पांडुलिपि को पढ़कर अपने बहुमूल्य सुझाव दिए।

मैं श्रीमती राजी रमणन् के प्रति भी अपना धन्यवाद ज्ञापित करता हूँ जिन्होंने अनुवाद प्रक्रिया में कृष्ण मूर्ति शिक्षा की आत्मा तथा दोनों भाषाओं के ज्ञान का प्रयोग किया है। वे स्वयं भी कृष्णमूर्ति विद्यालय में अध्यापिका रही हैं और सम्प्रति अध्यापन व अनुवाद कार्य में रत हैं।

हमें आशा है कि जिन मुद्दों को लेकर यहाँ विचार-विमर्श किया गया है, उनसे किशोरों को खोज के नए रास्ते और विचार के लिए नई दृष्टि भी मिलेगी। इस पुस्तक के विषय में विद्वानों के सुझावों और टिप्पणियों का स्वागत किया जाएगा।

के. गोपालन

निदेशक

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

अध्यापक से

इस पुस्तिका का नाम है ''मिलकर सोचें''। नैतिक शिक्षा शृंखला के अंतर्गत बच्चों के लिए राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने इसको प्रकाशित किया है।

लंबे अरसे तक मैं अध्यापिका रही हूँ। इस पुस्तक में प्रस्तुत विचारों और सरोकारों में अन्य अध्यापक-अध्यापिकाओं को मैं सहभागी बनाना चाहूँगी क्योंकि अनेक लोगों के विचारों को इसमें समाविष्ट किया गया है।

यद्यपि हम अध्यापक सारे दिन अलग-अलग विषय कक्षा में पढ़ाते रहते हैं तथापि इस बात का भी हमें एहसास है कि पढ़ाने के अलावा हम और भी बहुत कुछ कर रहे हैं। बच्चों के मन और मस्तिष्क को उससे कहीं अधिक गहराई तक जितना ऊपर से जान.पड़ता है, हम प्रभावित करते हैं। कक्षा में एक व्यक्ति कई बच्चों से बातें करता है और इनमें से जो सर्वोत्तम है, वह हमारे सामने आ जाता है। हज़ारों चीज़ें हमारी परेशानी का कारण हो सकती हैं। जीवन की जिज्ञासा को लेकर संभव है हमारे मन में द्वंद हो रहा हो। लेकिन कक्षा में अपनी ओर टकटकी लगाए उन युवा आँखों और प्रसन्न चेहरों के साथ केवल संप्रेषण की कला उनके मन को उस क्षण में बांधने की सामर्थ्य रखती है। जैसा मैंने अनुभव किया है, आपने भी किया होगा कि कक्षा में कुछ क्षण अत्यंत गहन जीवंतता से परिपूर्ण होते हैं। संभवतः वे ऐसे क्षण होते हैं जिनमें बच्चों की आँखों की चमक इस तथ्य का संकेत देती है कि आप जिस सच्चाई को उन तक पहुँचाना चाहते थे, उसे उन्होंने पा लिया है। शिक्षण कला, बच्चों को सत्य के साक्षात्कार कराने में, मदद करने की कला है। शब्द और हाव-भाव तो इसके लिए उपकरण मात्र होते हैं।

इसी प्रकार नैतिक शिक्षा का अर्थ बच्चों को कुछ अवधारणाओं से, चाहे ये अवधारणाएँ बहुत ही उदात्त क्यों न हों मात्र परिचित कराना नहीं है जिन्हें सैद्धांतिक स्तर पर छात्र अपने दिमाग में बैठा ले। इसका अर्थ उन्हें मतों, सिद्धांतों अथवा विश्वासों की पोटली पकड़ाना भी नहीं है। इसको सिखाया भी नहीं जा सकता। ऐसा करने की कोशिश भी नहीं करनी चाहिए

क्योंकि आजकल के बच्चे ऐसे नहीं हैं, वे एकदम भिन्न हैं, उनसे जब हम उस यथार्थ की बातें करते हैं जिस यथार्थ में हम नहीं जी रहे हैं, तो यह बात उनमें विश्वास नहीं जगाती है। वे हमारा आदर नहीं करते और बिना आदर के कोई आदान-प्रदान संभव नहीं है। इसलिए नैतिक शिक्षा को बच्चों को अपने और अपने आसपास के लोगों के बारे में समझने की सूक्ष्म कला मानना चाहिए जिसको प्राप्त करने में अध्यापक उनकी मदद करता है। संबंधों के इन्हीं आधारों पर आप जीवन का सुंदर खेल देख सकते हैं। यहीं पर लोग छोटे और बड़े की परिकल्पना करते हैं।

यही कारण है कि इस पुस्तक में विभिन्न मूल्यों के बारे में लिखा गया है, जैसे--दायित्व, सहभागिता, सहयोग, ईमानदारी, प्रश्न पूछना, अपने मन में अपने बारे में सवाल पूछना आदि। बच्चों को इसमें उपदेश देने की कोशिश नहीं की गई है। इन 35 पाठों में 12 से 15 साल की उम्र के बंच्चों के जीवन में घटी घटनाओं को लिया गया है। ये घटनाएँ रोजमर्रा की जिंदगी से संबंधित हैं। इसमें वे कहीं भी स्वयं को पहचान सकते हैं और ऐसा करने में आत्मसाक्षात्कार कर सकते हैं। इस पुस्तक की सामग्री सरल और सुबोध है।

इसलिए इस पुस्तक का उपयोग करके नैतिक शिक्षा देने के लिए अलग तरीका अपनाना चाहिए। सबसे पहले तो हमारे मस्तिष्क में यह बात स्पष्ट हो जानी चाहिए कि हम कुछ अमूर्त सिद्धांतों को कक्षा में, ऐसी कक्षा में जो खुद भी अमूर्तन का दूसरा नाम है, सिखाने का उपक्रम नहीं कर रहे हैं। इसके ठीक विपरीत विनय को यह जताने में सहायता कर रहे हैं कि यदि कोई अपना वायदा नहीं निभाता है, तो क्या होता है। मीरा से हम यह कहना चाहते हैं कि वह छोटी-छोटी बातों को लेकर दुखी होती है यद्यपि वे बातें उसे बहुत बड़ी लगती हैं। हम असलम और शेफाली से यह कह रहे हैं कि वे इस बात पर विचार करें कि मानवीय संबंध क्या होता है, भागीदारी और सहयोग किसे कहते हैं। प्रतिस्पर्धा नामक लेख में प्रतिस्पर्धा की तीव्र भावना रखने वाले अन्य बच्चों से हम कहना चाहते हैं कि इस घटना में छोटी हमीदा की समझ के भीतर से नए विचार का जन्म हो सकता है। इसके विभिन्न पाठों में बच्चों की अलग-अलग मानसिकता का विवेचन है, उनकी अपनी उन दुविधाओं और संघर्षों का चित्रण है जिनसे वे प्रायः गुजरते हैं। मैं यह कहना चाहती हूँ कि अपने ही विचारों को, उनकी प्रक्रियाओं और अनुभूतियों को समझने के बाद ही बच्चों में इसका बोध विकसित होता है कि

क्या अच्छा है और क्या बुरा है।

इसमें ऐसे संदर्भ भी हैं जो बच्चों को अपने पर्यावरण के प्रति, समाज और उसकी समस्याओं के प्रति, देश और विश्व के प्रति जागरूक बनाने में उनकी सहायता करते हैं। इस पुस्तक में ऐसे भी अनुच्छेद हैं जिनमें उनसे पृथ्वी की देखभाल की बात कही गई है क्योंकि यह पृथ्वी उनकी है, यह उन्हें विरासत में मिली है। आरंभ से अंत तक इसमें देश और उसकी जनता के प्रति चिंता का बोध विकसित करने का उपक्रम है, खासतौर से गरीब और कमजोर वर्ग के लिए और अंततः मानवजाति के लिए। यह पुस्तक मनुष्य के अंतर में छिपे मानवीय तत्व को प्रमुखता देने का प्रयास करती है।

आप चाहें तो छूट ले सकते हैं और इन अनुच्छेदों के आधार पर अपने परिवेश के संदर्भ के अनुसार सार्थक बातें इनमें जोड़ सकते हैं। हाँ इसको अनुच्छेद के मिज़ाज के मेल में होना चाहिए। इसको वर्णनात्मक बनाने और नैतिक सीख का रूप देने के लोभ से हर कीमत पर बचें। बच्चों के अपने जीवन में जो कुछ भी महत्वपूर्ण है, वह कक्षा में उनके साथ बातचीत के दौरान सबसे अधिक उद्घाटित होगा। इस प्रकार बच्चे को ठीक से समझने में यह पुस्तक अध्यापक की मदद करती है।

और फिर, जैसा कि इस पुस्तक में अनेक स्थानों पर संकेत किया गया है प्रत्यक्ष ज्ञान, अनुभूति और क्रिया को जन्म देता है। लड़कियाँ तथा महिलाओं के साथ होने वाले दुर्व्यवहार को अदिति अपनी आँखों से देखती है। इसको देखकर वह चिंतित होती है और उसके प्रतिकार में सक्रिय हो जाती है। आसपास कूड़ा डालने की बुराई को बच्चे अपने भीतर महसूस करते हैं। इस प्रकार और भी बातें हैं। अगर आपके स्कूल के लिए संभव है तो विचार-विमर्श और वार्तालाप के अतिरिक्त आप बच्चों को परियोजनाओं और तरह-तरह की गतिविधियों के द्वारा भी सिखा सकते हैं। लेकिन ध्यान रखें कि पुस्तक को जैसे-तैसे पूरा करने की जल्दबाजी न करें। आराम से इसका गंभीरतापूर्वक अध्ययन करें तथा जिन मूल्यों की यह शिक्षा आपको देती है, वह एक अनुच्छेद लेकर धैर्यपूर्वक उस पर तीन या चार अथवा इससे अधिक पाठ तैयार करके पढ़ाने का प्रयास करें।

और किसी की मानसिक स्थिति कैसी है, यह भी उतनी ही महत्वपूर्ण बात है। क्या किसी ने खुद इन सच्चाइयों की गहराइयों में उतर कर किसी एक या दूसरे मुद्दे को जानने का

यास किया है ? क्या किसी का सार्वभौम मानस है ? या वह व्यक्ति किसी विशेष क्षेत्र, भाषा या संप्रदाय से जुड़ा है ? यदि हमारा दृष्टिकोण संकीर्ण है, तो चाहे हम किसी भी तरह से सिखाएँ, ये विचार उसे सच नहीं जान पड़ेंगे, क्योंकि नैतिक शिक्षा का अर्थ अंततः अपने प्रति और बच्चों के प्रति ईमानदार होना है। इसलिए यह गंभीरता से लिया जाने वाला काम है। इसमें सावधानी और सरोकार की अपेक्षा है। इसमें वैज्ञानिक भावना की जरूरत है।

विद्यार्थियों का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया जाए कि उनके दैनिक जीवन में घटित घटनाओं का महत्व अधिक है जैसे उनका प्रकृति से नाता, उनके परिवेश में दिखनेवाले वृक्ष, पानी, पृथ्वी से संबंध, विभिन्न लोगों तथा अपने संबंधियों और साथियों के साथ संबंध, निजी वस्तुओं के साथ अटूट लगाव आदि विद्यार्थियों को इस पुस्तक का अध्ययन करने की प्रेरणा दे सकते हैं। पुस्तक में इन्हीं की चर्चा की गई है। हमारे पास ऐसी पुस्तकें बहुत कम हैं जिनसे विद्यार्थियों की निरीक्षण शक्ति का विकास हो या अपने खुद के अंदर तथा अपने पर्यावरण में रोजाना घटनेवाली घटनाओं का विवरण मिल सके। अतः विद्यार्थियों को स्वयं सोचने, प्रश्न करने तथा उसे सुलझाने के उपाय ढूँढ़ निकालने के लिए यह पुस्तक मार्गदर्शन करती है। यही इस पुस्तक की प्रमुख विशेषता है।

अंत में मैं विश्वास करती हूँ कि यह पुस्तक आपको और आपके विद्यार्थियों को विश्व प्रसिद्ध चिंतक जे. कृष्ण मूर्ति की पुस्तकों को पढ़ने के लिए प्रेरित करेगी। यह किताब मुझ पर उनकी शिक्षा के प्रभाव का ही फल है।

अहल्या चारी

कृष्ण मूर्ति न्यास, भारत

64-65 ग्रीनवेज रोड

मद्रास-600028

विषय सूची

नवीन का नया विद्यालय 1

नई पाठशाला में नवीन का पहला दिन था और उसी दिन प्रवेश परीक्षा भी होनी थी। यह एक प्रतिष्ठित विद्यालय था जहाँ विद्यार्थियों की संख्या आठ सौ से अधिक थी। फिर भी नवीन को अपना पुराना स्कूल अच्छा लगता था, एक छोटा अनजान सीधा-सादा स्कूल। अधिकांश अध्यापक बड़े ही दयालु थे और लड़कों का व्यवहार स्नेहपूर्ण था। वह तो वहीं अपनी पढ़ाई जारी रखना चाहता था किन्तु उसे आठवीं कक्षा में भेज दिया गया था और उसके माता-पिता यह अनुभव करते थे कि वह एक जाने माने स्कूल से दसवीं कक्षा पास करे ताकि उसे एक अच्छे कालेज में प्रवेश मिल सके। खाना खाते समय इस विषय पर बहुत चर्चा हुई थी और अन्ततः उन्होंने उसे ऐसे पुराने स्कूल से निकालने का निश्चय कर लिया। नवीन को कभी उनका तर्क नहीं समझ आया किन्तु उसने अपने आप को यह कह कर आश्वस्त किया कि वह बड़े लोगों की कितनी ही बातें नहीं समझ पाता और इसीलिए जो वस्तुएँ उसकी समझ से बाहर थीं उन पर दिमाग खपाना उसने छोड़ दिया।

उसके माता-पिता उसे इस बड़े स्कूल में भेजना चाहते थे जहाँ विद्यार्थी चमकदार सफ़ेद वरदी, लाल टाई और काले चमकते जूते पहनते थे। वहाँ की हर वस्तु चमकदार लगती थी। कभी उसके पिता ने कहा था कि वे किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति से बात करेंगे ताकि उसे इस विशिष्ट (प्रतिष्ठित) विद्यालय में प्रवेश मिल सके। नवीन को यह सुनकर बड़ी ठेस पहुँची। उसे यह बिलकुल अच्छा नहीं लगा। क्या उससे यह नहीं कहा गया था कि जो प्रवेश परीक्षा में उत्तीर्ण हो जाएंगे उन्हें प्रवेश दिया जाएगा। वह अपने विद्यालय में सदा प्रथम आता था और उसे पूरा विश्वास था कि वह इस परीक्षा में अच्छी प्रकार उत्तीर्ण हो जाएगा किंतु उसकी समझ में यह नहीं आया कि उसके माता-पिता इतने घबराए क्यों हैं।

प्रवेश परीक्षा के दिन उसने सौ से अधिक विद्यार्थी और उनकी चौगुनी संख्या में माता-पिता देखे। उसकी समझ में कुछ नहीं आ रहा था और इतने में उसे जल्दी से एक छोटे से कमरे में अंदर के एक कोने में ले जाया गया जहाँ बीस और बच्चे थे। सबसे पहले उसकी

गणित की परीक्षा ली गई जिसमें उसे कोई मुश्किल न हुई क्योंकि गणित उसका प्रिय विषय था। उसे अपने प्यारे गणित अध्यापक की याद आई जिन्हें वह छोड़ आया था, उसका गला भर आया और आँखें आँसुओं से डबडबा गईं। उसने आँसू पोंछ डाले। वह सोचने लगा कि पता नहीं नया शिक्षक कैसा होगा। अगली परीक्षा हिन्दी की थी जिसे वह अच्छी तरह से नहीं कर पाया। उससे व्याकरण के कई प्रश्न पूछे गए हालांकि वह हिन्दी इतनी अच्छी तरह तो जानता था कि कविता रच सके किंतु व्याकरण की बातें कुछ उसकी समझ में नहीं आती थीं। वह सोचता, इन बड़े लोगों के पास सीधी सादी वस्तुओं को उलझाने का अपना ही ढंग है। इसके बाद अंग्रेजी की बारी थी जिसको लेकर वह बड़ा ही आत्मसंदेही था क्योंकि उससे यह कहा गया था कि उसे उन लड़कों के साथ मुकाबला करना होगा जो कि इस विषय में बहुत अच्छे थे और पास के शहरों से आए थे। सत्य तो यह था कि बड़ी मुश्किल से उसने किसी एच. डब्ल्यू. लांगफेलो नाम के एक कवि की एक लंबी कविता याद की थी और जब उससे कविता पाठ करने को कहा गया तब उसके मुख से शब्द नहीं फूटे। अंग्रेजी शिक्षक की कठोर दृष्टि ने रहे सहे साहस को भी समाप्त कर दिया और इसके बाद तो ''मैंने गर्मी की छुट्टियाँ कैसे बिताईं'' नाम से निबन्ध लिखने को दिया गया था। इस निबन्ध में तो उसने बड़ी गड़बड़ी कर दी। उसे याद ही नहीं आया कि उसकी कोई छुट्टी भी थी, छुट्टी बिताने की बात तो दूर ही रही क्योंकि उसने सारी छुट्टियाँ इन परीक्षाओं की तैयारी में बिताईं थीं। उसके माता-पिता और रिश्तेदार उसके पीछे हाथ धो कर पड़ गए थे। माँ, पिताजी, चाचाजी और चचेरे भाई सब को केवल एक ही चिंता थी कि उसे एक अच्छी श्रेणी मिले।

जब परिणाम घोषित हुए नवीन पाठशाला नहीं गया। न ही उसके पिताजी गए और न माँ। उसका चचेरा भाई गया और खुशी से हाथ हिलाता हुआ आया। नवीन को प्रवेश मिल गया था, हालांकि सूची में उसका नाम सबसे नीचे था। इसका मतलब है कि 'क' महाशय ने प्रवेश दिलवा ही दिया। अच्छा हुआ, पिताजी ने कहा इस बात से नवीन को फिर ठेस पहुँची क्योंकि उसे पूरा विश्वास था कि उसने प्रवेश परीक्षा अच्छी तरह से की थी, इस वजह से उसे प्रवेश मिला है।

उस रात सोते समय नवीन उदास था। वह अपने पुराने विद्यालय को बहुत प्यार करता था। उसकी पाठशाला की इमारत टूटी-फूटी थी, पीने का पानी बहुत कम था और कमरों में अंधेरा रहता था किंतु उसके मुख्य अध्यापक उसे प्यार करते थे और उसके गणित

के शिक्षक बड़े दयालु थे। चूंकि उनके पास खेल के मैदान तथा हॉकी स्टिक नहीं थे इसलिए वह सुबह और शाम को कई तरह के काम चलाऊ खेल खेलते थे। नया विद्यालय इससे भिन्न था। इसकी इमारत शानदार साफ़-सुथरी थी और यहाँ अच्छे घरों से लड़के आते थे। नवीन यही सोचता था कि अन्दर के व्यक्ति किस प्रकार के होंगे। उस रात उसने एक सपना देखा कि एक बहुत बड़ा पक्षी एक डरे हुए बालक को उठाकर ले जा रहा है और उसे एक नए अजनबी स्थान में गिराने के लिए तैयार है। इसमें कितनी सच्चाई है, है ना। किसी भी स्थान में अपनापन हमें वहाँ के लोगों के व्यवहार से महसूस होता है। अच्छी इमारत का होना एक महत्वपूर्ण बात है और साथ ही अच्छी कुर्सी मेज भी और इसके साथ यदि खुले बड़े खेल के मैदान हों और यदि सुंदर वृक्ष तथा फूल हों तब पाठशाला जाने के समान और अच्छी बात क्या हो सकती है। परंतु इन सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात है कि उस भवन के व्यक्तियों की भावनाएँ और यह बात नवीन को जल्दी ही समझ में आ गई। क्या नई परिस्थितियों में आपको किसी प्रकार की दिक्कतों का सामना करना पड़ा है ? एक अच्छे स्कूल के विषय में आपके विचार क्या हैं ? आपके आसपास बड़े-बूढ़े क्या कहते या करते हैं जो आपकी समझ में नहीं आता ? इन पर विचार करो तथा कक्षा में इन विषयों पर चर्चा करो।

घर और उसका प्रभाव 2

कुछ बच्चों में स्वभावतः दूसरों की सहायता करने की भावना होती है। उन्हें किसी की सहायता करने के लिए कहने की आवश्यकता नहीं होती। यही बात आयशा के साथ थी। जैसे ही वह अपनी या किसी अन्य अध्यापिका को हाथ में किताबों और कापियों का बोझा लेकर चलती हुई देखती वह दौड़कर उनके पास पहुँचती और उनके हाथ से पुस्तक का गट्ठर ले लेती। अध्यापक के कक्षा में आने से पहले उसका ध्यान ब्लैक बोर्ड (श्याम पट्ट) पर अवश्य जाता और वह उसे साफ़ कर एक चॉक तथा डस्टर अवश्य रख देती। अगर वह माली को दो घड़ों में पानी उठाकर जाते हुए देखती तो वह उससे एक लेकर पौधों को पानी देना प्रारंभ कर देती। सड़क पर गिरा हुआ कोई पत्थर उठाना, कागज़ के टुकड़ों को कूड़ेदान में डालना, किसी गिरे हुए बच्चे को उठाना, स्कूल के कार्यक्रम में मंच के पीछे हर प्रकार की मदद देना, कक्षा के बाद आर्ट कक्षा की सफ़ाई करना, तानपुरे को उसके खोल में डाल देना, हॉकी स्टिक को खेल के मैदान में ले जाना और खेल के बाद उन्हें फिर बटोर कर लाना, किसी खास मौके पर मिठाई बाँटना, यह सब उसके लिए बड़ा ही स्वाभाविक था। वह चुपचाप शांत भाव से मुसकुराते हुए यह सब कुछ करती थी। उसे ऐसा कभी नहीं लगता था कि वह कोई असाधारण बात कर रही है। उसके लिए तो यह सब बहुत की स्वाभाविक था और दूसरों की सहायता करने में उसे बहुत खुशी होती थी।

जब पाठशाला में सामाजिक दस्ता (समाज सेवा दल) बनाने की योजना की घोषणा की गई तब सबसे पहले उसने अपना नाम दिया हालांकि यह कार्य बड़े विद्यार्थियों के लिए था। उसने अपनी अध्यापिका से प्रार्थना की कि उसे भी चुन लिया जाए और नौवीं तथा दसवीं कक्षा के स्वयंसेवकों की सहायता के लिए उसे रखा जाए। वे सब उसे इतना प्यार करते थे कि उन्होंने इस बात का स्वागत किया। पहला अभियान स्थानीय अस्पताल के बच्चों के शिशु केंद्र का था। वहाँ पहली बार उसने मनुष्य की ऐसी पीड़ा का सामना किया जो पहले कहीं नहीं देखी थी। यह देखकर उसका दिल भर आया। वह उस समय केवल बारह साल

की थी और एक लड़के को जिसके घुटने की हड्डी टूट गयी थी पलस्तर में देखना, एक लड़की को बैसाखी के सहारे लंगड़ाते हुए चलते देखना, एक छोटे बच्चे को गाड़ी में देखना, पोलियो वाले एक बच्चे को एक प्रकार की गाड़ी में देखना जिसे पोलियो की बीमारी हो गई थी, एक अन्य लड़के के कंधे में पलस्तर देखना और इसी प्रकार के कई दूसरे बच्चों को देखना उसके लिए एक पीड़ा दायक अनुभव रहा होगा। पहले दिन वह एकदम चुप थी और बड़ी कक्षाओं के छात्रों के साथ रहने में ही उसने संतोष कर लिया। सरला ने बड़े प्यार से उसका हाथ थामा था। इससे उसने बड़ी बहादुरी का अनुभव किया और एक दो मुलाकातों के बाद तो वह नियमित रूप से केंद्र में जाने लगी। वह छोटे बच्चों को कहानियाँ पढ़कर सुनाती, चुटकुले सुनाती या उनकी मदद करती। सब लोग कहते कि वह बड़ी होकर एक अच्छी नर्स या डाक्टर बनेगी क्योंकि उसके दिल में इतनी दया थी। इन बच्चों की सहायता करते-करते वह अपने घर के पास-पड़ोस के विभिन्न तरह के विकलांग लोगों के बारे में सोचने लगी, बैसाखी के सहारे चलता बूढ़ा, एक नेत्रहीन लड़की जो बहुत ही अच्छा गाती थी, टोकरी बुनने वाला आदमी जिसके पैर नहीं थे और जो सड़क के किनारे बैठ कर टोकरी बुनता था। सचमुच वह एक संवेदनशील लड़की थी।

शायद आयशा के अंदर यह संवेदनशीलता भरने में उसके घर के वातावरण का बहुत बड़ा हाथ था। उसकी माँ प्राइमरी स्कूल की अध्यापिका थी और पिताजी बैंक में काम करते थे। वे दोनों ही बहुत मेहनती थे लेकिन आयशा सदा ही यह देखती कि किस प्रकार पिताजी घर के कामों में उसकी माँ का हाथ बँटाते हैं। वे बाजार जाते, सब्जी काटते, खाना बनाते और बरतन साफ़ करते। जब तक आयशा पाँच साल की नहीं हुई तब तक उसे सुलाने की जिम्मेदारी भी उन्होंने अपने ऊपर ली थी। उसकी माँ भी घर के काम-काज में बहुत ही कुशल थी और इसके साथ ही वह पिताजी की चिट्ठियाँ लिखने और अन्य कार्य में हाथ बँटाती थी क्योंकि वह अंग्रेजी में एम.ए. थी। आयशा ऐसे सुरक्षित तथा संतोषप्रद वातावरण में बड़ी हुई और बिना किसी कठिनाई के बड़े ही स्वाभाविक रूप से उसने दूसरों की सहायता करना सीख लिया।

लेकिन एक दिन आयशा ने यह अनुभव किया कि रूमी के पिताजी उसके पिता के समान नहीं। रूमी में घर के कामों में हाथ बँटाने की भावना नहीं होती। वह अपने पड़ोसी के घर गई हुई थी। उसका मित्र शंकर वहाँ रहता था। वह भी उसी की उम्र का था हालांकि वह

शहर में लड़कों के दूसरे स्कूल में जाता था। शंकर की माँ सारा खाना खुद बनाती। आयशा ने देखा कि उनका अधिकांश समय रसोई घर में पति और बेटे के लिए पूरी, आलू, गुलाब जामुन तथा अन्य कई प्रकार के पकवान बनाने में बीत जाता है। शंकर के पिता का अपना धंधा था और वह पूरा दिन बाहर रहते। जब वह शाम को घर लौटते तो वह चाहते कि उनकी पत्नी उनकी देखभाल करे।

अपनी पत्नी से वे बहुत कम बात करते। उनका बात करने का ढंग भी बड़ा कठोर था और वे मानते थे कि औरतों को अधिक बोलने के लिए प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए। इसका नतीजा यह कि पति-पत्नी आपस में बहुत कम बातें करते और यह बात बड़ी स्पष्ट थी कि घर में केवल उनके पिता की चलती है। शंकर की माँ यह सब भाग्य की बात सोच कर स्वीकार कर लेती। यहाँ तक कि वह तो शंकर के सामने ही आयशा से यह कहती कि कुछ भी हो वह एक औरत है और औरतों का काम ही घर की देखभाल करना और पुरुषों का ध्यान रखना है। शंकर इन सब बातों को बिना कुछ पूछे स्वीकार कर लेता। ऐसे ही विचारों को लेकर वह बड़ा हुआ। एक दिन जब आयशा ने शंकर से यह पूछा कि वह रसोई घर के कामो में अपनी माँ की सहायता क्यों नहीं करता तब उसने बड़े घमण्ड से जवाब दिया, ''अरे वह तो लड़कियों का काम है। मैं रसोई घर में नहीं जाता। मैं तो पायलट बनकर हवा में उड़ने वाला हूँ। देखो यह मेरा छोटा हवाई जहाज''।

आयशा यह सुनकर दुखी हो जाती और सोचने लगती कि क्या केवल लड़कों को ही बाहर के रोमांचक तथा मज़ेदार जीवन के आनंद का हक है और लड़कियों के लिए क्या घर पर रहकर खाना पकाना ही सब कुछ है। उसने अपनी माँ से पूछा कि क्यों शंकर के माता-पिता का स्वभाव अलग है और क्यों लड़कियों को घर के अंदर ही कैद रहना चाहिए। उसकी माँ ने उसे बताया कि आज कल लड़कियों के लिए कई व्यवसायों के रास्ते खुले हैं। वे डाक्टर तथा अध्यापिकाओं के अलावा वायुयान परिचारिका, इंजीनियर, नर्स, टूरिस्ट गाइड, अनुसंधाता, रिसेपशनिस्ट, टेलिफोन ऑपरेटर आदि बन रही हैं। लड़कियाँ अंतर्राष्ट्रीय खेलों, पर्वतारोहण आदि में भी भाग ले रही हैं। इसी तरह आजकल पुरुष घर के कामों में सहायता करते हैं क्योंकि नौकर या तो मिलते नहीं और यदि मिलते भी हैं तो बहुत महंगे हैं। उसकी माँ ने कहा कि अब समय बदल रहा है और औरत केवल घर नहीं देखती हालांकि घर की

देखभाल भी उतनी ही जरूरी है और माँ को घर की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। उन्होने कहा कि आयशा के पिताजी बहुत ही अच्छे हैं और अन्य पुरुषों को भी उन्हीं के समान होना चाहिए।

अब यह बताओ कि तुम क्या सोचते हो। क्या तुम यह सोचते हो कि लड़कियों को केवल रसोई घर में ही रहना चाहिए और लड़कों को उससे कोई संबंध नहीं? शंकर का यही विचार था क्योंकि उसके माता–पिता ने उसके सामने वही उदाहरण रखा था। शायद तुम इस विषय पर चर्चा कर सकते हो।

साथ ही यह भी सोचो कि आयशा में दूसरों की सहायता करने की भावना कैसे आई। क्या यह उसे जन्म से ही मिली थी या उसके घर के वातावरण में मिली ? तुम्हारे अंदर के गुणों के विकास में घर के वातावरण का कितना हाथ है ? शिक्षकों के विचारों की तुम्हारे विचारों के निर्माण में क्या भूमिका है ? क्या तुम उनसे प्रभावित होते हो ?

क्या तुम अपने स्कूल के बाहर के दोस्तों से प्रभावित हुए हो ? इन पर ज़रा सोचो।

वायदा पूरा करना

श्रुति बी.ए. की परीक्षा की तैयारी कर रही थी। बीमारी के कारण वह पिछले वर्ष इस परीक्षा में नहीं बैठ पाई थी और इस साल वह व्यक्तिगत छात्रा के रूप में परीक्षा दे रही थी। वह मेहनती छात्रा थी और उसने बड़े ही सुन्दर ढंग से अपने अध्ययन की योजना बनाई थी। उस शाम वह स्कूल से अपने भाई के आने की राह देख रही थी क्योंकि उसने वायदा किया था कि घर लौटते समय वह अपनी चचेरी बहिन के घर से उसके लिए ईश्वरी प्रसाद की लिखी पुस्तक "भारत का इतिहास" ला देगा। उसकी चचेरी बहिन भी इसी परीक्षा की तैयारी कर रही थी और अक्सर वे एक दूसरे से किताबें लेते देते थे। स्कूल में खेल के बाद धूल से भरे विनय ने जैसे ही घर में कदम रखा, श्रुति का पहला प्रश्न था, "क्या तुम किताब ले आए?" विनय झिझका, उसे याद आई,उसे बड़ी शर्म आई, वह मन ही मन कुछ बुड़बुड़ाया और वहाँ से चला गया। वह अपने आपको अपराधी महसूस कर रहा था कि उसने अपनी बात न रखी। अंदर ही अंदर उसे बहुत बुरा लग रहा था क्योंकि वह अपनी बहिन को बहुत चाहता था और विशेषकर जबसे वह बीमारी से उठी थी, वह उसका और ध्यान रखता था। श्रुति ने देखा कि उसने अपनी बात नहीं रखी और चूंकि वह दिन भर से उस किताब की प्रतीक्षा में थी इसलिए उसे बहुत क्रोध आया। उसने उसे याद दिलाया कि इसके पहले भी वह एक बहुत जरूरी दवाई लाना भूल गया था जिसकी उसे विशेष आवश्यकता थी। भाई-बहिन के बीच ऐसा दृश्य उपस्थित हुआ कि घर में शांति लाने के लिए माँ को बीच बचाव करना पड़ा। विनय को लेकर माँ बहुत चिंतित थी। वह दूसरों की परवाह नहीं करता, उसमें अहंकार की भावना आ रही थी और उसकी माँ सोचती कि पंद्रह साल की अवस्था में वह क्यों इतना लापरवाह तथा आत्मकेंद्रित है।

अगर तुम अपने दोस्तों की ओर ध्यान दो और चारों ओर देखो तो तुम्हें कई छोटे और बड़े लोग मिलेंगे जो अपना वायदा पूरा नहीं करते और अगर तुम इसकी गहराई तक जाओ तो तुम यह पाओगे कि इस कारण कई मुश्किलें तथा कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। उदाहरण

के लिए लक्ष्मी ने अपनी माँ से वायदा किया था कि वह अपने भाई के दाखिले के लिए स्कूल के दफ्तर से प्रवेश पत्र के बारे में पूछताछ करेगी परंतु वह एक सप्ताह तक उसे याद ही नहीं रहा। उसकी माँ को बहुत क्रोध आया। लक्ष्मी ने बेकार मे अपने को बचाने का प्रयत्न किया और इस प्रयत्न में उसे कई झूठ बोलने पड़े। उसकी माँ को बहुत परेशानी हुई और कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। उसे पता लगा कि प्रवेश पत्र जमा करने की अंतिम तारीख निकल चुकी है और उसके भाई को छः महीने तक प्रवेश पाने के लिए रुकना पड़ा।

कभी-कभी ऐसा होता है कि किसी कक्षा के सभी विद्यार्थी अपनी शिक्षिका से वायदा करते हैं और उसे निभाते नहीं। सूसन फर्नांडीस बहुत ही परिश्रमी शिक्षिका थीं और अपने विद्यार्थियों से उच्च आचरण की उम्मीद करती थीं। वह सातवीं कक्षा की अध्यापिका थीं। उस दिन उन्हें अंतिम घंटे में अध्यापकों की बैठक में जाना था। उन्होंने अपनी कक्षा के तीस बच्चों से पूछा कि क्या वे आगामी दिन की प्रदर्शनी के लिए कक्षा की सफ़ाई कर, किताबें और कापियों को सुंदर ढंग से रखकर, नोटिस बोर्ड के चित्रों को बदलकर, कमरे की सफ़ाई कर कमरे की कुर्सी और टेबिलों को अच्छी तरह से रख सकेंगे ? उन्होंने छोटे-छोटे दल बनाकर उन्हें सब कुछ समझा दिया था। एक स्वर में बच्चों ने उनसे कहा कि वे किसी भी बात की चिंता न करें। उनके आदेशानुसार सारा कार्य हो जाएगा। जब घंटी बजी तो सबने मिल-जुलकर काम शुरू तो किया लेकिन शीघ्र ही ये बात स्पष्ट हो गई कि हर दल में केवल एक या दो ही काम करना चाहते हैं। बाकी छात्र आपस में खेलने लगे और एक दूसरे को तंग करने लगे। उन्होंने इतना उपद्रव मचाया कि अजीत ने उन्हें बाहर जाने का आदेश दे दिया। वह उन सबका मुखिया था। अजीत बहुत ही जिम्मेदार लड़का था और सारी कक्षा में उसका आदर था। बात स्पष्ट थी कि अधिकांश छात्रों ने जब शिक्षिका से वायदा किया था कि वे कमरे को साफ़ कर देंगे, तो वे यंत्र के समान बिना सोचे समझे बोल रहे थे। अगर तुम अपनी ओर ध्यान दो तथा अपने चारों ओर के लोगों की ओर ध्यान दो तब देखोगे कि हम अक्सर ऐसा करते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि कई बड़ी उम्र वाले लोग भी अपने वायदे के प्रति लापरवाह होते हैं। उदाहरण के लिए हम उस मैकेनिक को लें, जो कहता है कि वह चू रहे नल को ठीक करने सुबह आएगा। और तुम सारा दिन उसकी राह देखते रहते हो, वह आदमी जो अपने मित्र से बाजार में मिलने को वचन देता है और भूल जाता है अथवा वह औरत जो सहायता का वचन तो देती है लेकिन फिर उसका कहीं पता नहीं लगता। सबसे

बढ़िया उदाहरण तो कुछ नेताओं का है जो चुनाव के समय हजारों वायदे करते हैं जैसे कि गरीबों के लिए पीने के पानी की सुविधा, अच्छी सड़क, स्कूल आदि और फिर कुछ भी पूरा नहीं करते।

इसके विपरीत माँ का उदाहरण लो जो हमेशा अपनी बात रखती है चाहे फिर वह कोई छोटी सी वस्तु क्यों न हो, जैसे तुम्हारे लिए हलवा बनाना, तुम्हारे लिए कमीज़ या फ्राक खरीदना अथवा गृह कार्य में तुम्हारी सहायता करना। अगर वह किसी काम को करने में असमर्थ है तो वह उसके लिए माफी मांगती है, उसकी कथनी और करनी में अंतर नहीं होता। इसका क्या कारण है? क्या कारण है कि वे हमेशा अपने वचन को निभाने का प्रयत्न करती हैं? उनमें ऐसी कौन-सी विशेषता हैं? क्या ये हो सकता है कि उन्हें तुम्हारी इतनी परवाह है कि उनके लिए वह बहुत ही स्वाभाविक है कि वे जो कहें वह करें भी? इससे क्या ये अर्थ निकलता है कि वे व्यक्ति जो वचन निभाना भूल जाते हैं उसका कारण ये है कि वे इतनी परवाह नहीं करते? क्या यह हो सकता है कि वे वायदे इसलिए करते हैं कि उस समय वे समस्या से छुटकारा पा सकें? शायद यह भी कारण है कि हम जो कुछ कहते हैं, वह वास्तव में हमारा मन्तव्य नहीं होता, हम यह नहीं अनुभव करते कि किसी भी हालत में हमें अपना वायदा पूरा करना है। वायदा पूरा न करने के कई कारण हो सकते हैं। पता लगाओ कि वे क्या कारण हो सकते हैं।

खाली समय में क्या तुम उन वायदों की सूची बनाओगे जो तुमने दूसरों से किए हैं और पूरे किये हैं और उन वायदो को भी जो तुमने नहीं पूरे किए। साथ ही दूसरों ने तुमसे जो वायदे किए, पूरे किए अथवा नहीं पूरे किए, उनकी भी सूची बनाओ।

अपने मित्रों के साथ उस मस्तिष्क के बारे में चर्चा करो जो वायदा करता है और वह जो साधारणतया ऐसा नहीं करता। इनके कारणो को ढूंढने का भी प्रयत्न करो।

स्वभाव और व्यवस्था 4

अनिता स्वभाव से ही बड़ी साफ सुथरी लड़की थी। अपनी आदतों में अपने पहनावे में हमेशा से वह व्यवस्थित थी, उसके बाल सदा अच्छी तरह दो चोटियों में सँवरे होते जिन पर उनकी पोशाक से मेल खाते रिबन होते, जो दोनों चोटियों में सुंदर रूप से बंधे होते। वह हमेशा सादे कपड़े पहनती जो कि धुले तथा इस्तरी किए होते। वह जो भी जूते या चप्पल पहनती वे सफ़ेद अथवा भूरे रंग की पालिश किए हुए होते। वह केवल बारह साल की थी और देखने वाले हैरान रहते थे कि इस छोटी सी अवस्था में वह किस तरह इतनी सुव्यवस्थित है। जो बस्ता वह स्कूल लेकर जाती, वह भी देखने लायक होता। उसकी किताबें बड़ी साफ ढंग से जमीं रहतीं, उसकी कापियाँ भी एक के ऊपर रखी रहतीं। उसकी लिखाई भी बहुत सुंदर थी और वह हमेशा हाशिया खींचने का ध्यान रखती। बाएँ हाथ के ऊपर के कोने में वह हमेशा दिनांक लिखती और हर अभ्यास के बाद एक रेखा अवश्य खींचती क्योंकि उसकी शिक्षिका ने उसे उसकी आवश्यकता समझाई थी। वही थी जो घर में चीजों को सहेज कर रखती। उसकी माँ को उस पर बहुत गर्व था।

अपने सहपाठी विजय को वह बहुत चाहती थी क्योंकि वह बहुत बुद्धिमान था और वे दोनों एक दूसरे को किताबें, कहानियाँ देते और घटनाओं के विषय में बातें करते। परंतु विजय अलग स्वभाव का था। उसका अव्यवस्थित ढंग और लापरवाह स्वभाव अनिता के लिए प्रायः चिन्ता का कारण होता था। वह अपने कपड़ों की परवाह नहीं करता था। उसकी कमीज के बटन अक्सर गायब रहते, पैंट में कभी इस्तरी न होती और उसके जूते भी बहुत साफ न होते। उसके बाल बिखर कर सदा माथे पर लटकते रहते थे। वह साफ सुथरा रह सकता था – और चीज़ों को सँभाल कर व्यवस्थित रूप से रखना भी वह जानता था। यह बात बिलकुल सच्ची थी क्योंकि जब भी अध्यापक उसके साथ सख़्ती का व्यवहार करते उसकी आदतों में थोड़ा सुधार आ जाता। लेकिन जल्दी ही वह पुरानी आदतों का शिकार हो जाता और फिर से लापरवाह हो जाता। इस बात के लिए अनिता के साथ उसका सहमत

होना मुश्किल था कि जब हमारे चारों ओर एक व्यवस्था होती है तब हमें अपूर्व संतोष मिलता है।

अध्यापिका ने उसे व्यवस्था की आवश्यकता को समझाने के लिए एक दूसरा रास्ता अपनाया। उन्होंने उसे कक्षा की व्यवस्था का भार सौंपा। उसने आपत्ति की कि वह इस कार्य के लिए उचित व्यक्ति नहीं है परंतु अध्यापिका ने जोर दिया और अनिता के आग्रह पर वह मान गया। इसका अर्थ था कि उसे कक्षा की हर वस्तु के प्रति सचेत होना था। उसे दस मिनट पहले आना पड़ता और देखना होता कि टेबल कुर्सियाँ ठीक से रखी हैं कि नहीं, यदि नहीं तो उन्हें ठीक करना पड़ता। उसे यह देखना होता कि खिड़कियों में चटकनियाँ लगी हैं और वे गंदी तथा अधखुली नहीं हैं। उसे इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता कि कक्षा का टाइम टेबल तथा अन्य चित्र दीवारों पर सीधे लगे हैं। क्या तुमने ध्यान दिया है कि कई स्कूलों में दीवारों पर चित्र होते हैं परन्तु उनमें से कुछ साधारणतया 45^0 पर झुके होते हैं। सब लोग उन्हें देखते हुए निकल जाते हैं और कोई भी उन चित्रों के भाग्य पर दया नहीं दिखाता। विजय को अपने सहपाठियों की पोशाकों और जूतों का भी निरीक्षण करना होता, जब वे कक्षा में आते। वह अपने से कमजोर लड़कों पर तो रोब जमाता परंतु कक्षा के बड़े लड़के उसे दूर रखते, वे उसे चिढ़ाते परंतु वे सब उसके साथ सहयोग भी करते। सारी कक्षा अब साफ सुथरी दिखने लगी। अधिक महत्वपूर्ण बात तो यह थी कि उसे ही सारी कक्षा के सामने सफ़ाई का उदाहरण पेश करना था और यह देखने की आवश्यकता थी कि उसके अपने जूतों के फीते ठीक ढंग से बंधे हैं और उसके बालों में ठीक ढंग से कंघी हुई है। अनिता को विजय का यह बदला रूप बहुत अच्छा लगता और वह मन ही मन में हर्षित होती।

क्या तुमने ध्यान दिया है कि जब तुम अपने पर कोई उत्तरदायित्व लेते हो तब तुम अधिक जागरूक रहते हो ? इस कारण विचारों में और स्पष्टता आ जाती है और तुम्हारी अपनी उलझनें दूर हो जाती हैं। इसका अर्थ है कि तुम्हारा मस्तिष्क व्यवस्थित है और इस कारण वह बाहर की सब वस्तुओं को भी व्यवस्थित रखता है। आंतरिक व्यवस्था ही बाहरी व्यवस्था को जन्म देती है। अंदर की यह व्यवस्था स्वभाव की वस्तु नहीं। यह अवलोकन और सतर्कता से आती है और हम सब यदि चाहें तो वैसा हो सकते हैं। आदतें एक यांत्रिक वस्तु हैं जो प्रशिक्षण का परिणाम है परंतु व्यवस्थित रहने की लालसा बहुत सुंदर वस्तु है जो व्यक्ति के अंतरमन से आती है।

तुम्हारा स्वभाव कैसा है ? क्या तुम साफ सुथरे कपड़े पहनते हो, अपनी किताबें और कापियों को सावधानी से रखते हो अथवा तुम इस प्रकार के व्यक्ति हो जिसे बार-बार याद दिलाने की आवश्यकता है? क्या तुमने ध्यान दिया है कि अपनी रोज़ाना की ज़िंदगी में तुम कितने व्यवस्थित हो ? क्या तुम निम्नलिखित बातों को आज़माना चाहोगे ?

साफ सुथरे कपड़े पहनना, अपने बालों में कंघी करना और साफ रहना; जूतों के फीते बाँधना, जूतों और चप्पलों पर नियमित रूप से पालिश करना, हर सुबह अपना बिस्तर ठीक करना, खाने के पहले हाथ साफ करना, जल्दी-जल्दी खाने की आदत, साधारणयता जोर से बोलना, दूसरे जब बोल रहे हों तब उनके बीच में बोलना, हमेशा समय का पाबन्द रहना, जब जल्दी हो तो कतार तोड़ना, चलते-चलते पौधों की पत्तियाँ तोड़ना, कागज़ आदि फेंकने के लिए कूड़ेदान का प्रयोग, सड़क उसी समय पार करना जब सिगनल अनुमति दें, किसी पिकनिक या अन्य पार्टी के बाद जगह को साफ करना, आवश्यकता पड़ने पर दूसरों को धन्यवाद देना, किसी टेबल अथवा कुर्सी पर धूल दिखने पर उसे साफ करना, सार्वजनिक वस्तुओं का उपयोग करते समय सावधानी बरतना, नौकरों से मृदु व्यवहार करना। इस तरह की अन्य कई बातें हैं। तुम इस प्रकार की अपनी अन्य कुछ आदतों की सूची बना सकते हो और अपने दैनिक जीवन में उन पर ध्यान दे सकते हो।

मैं बताती हूँ कि इस पाठशाला में क्या होता है।

उस सप्ताह स्कूल में दो मेहमान आए। वे दोनों जापान से आए थे और बड़े ही प्रतिभाशाली शिक्षक थे। चूंकि यह एक छोटा-सा नगर था उन अतिथियों के आने से लोग बहुत खुश थे क्योंकि ऐसी छोटी जगहों में विदेशी कम आते थे। अतिथियों ने पाँच दिन स्कूल में बिताए। इस बीच उन्होंने कक्षाओं तथा स्कूल के विभिन्न कार्य-कलापों को देखा तथा अध्यापकों और विद्यार्थियों से बातचीत की और यह बात उन्हें बड़ी स्पष्ट लगी कि यह स्कूल अन्य स्कूलों से भिन्न है। यह एक छोटा-सा स्कूल था जिसमें कुल पाँच सौ विद्यार्थी थे। यहाँ लड़के और लड़कियाँ सुशिक्षित परिवार के थे। नगर की यह सर्वोत्तम पाठशाला मानी जाती थी।

अतिथियों ने एक आश्चर्यजनक बात यहाँ देखी। वह यह कि प्रतिदिन सुबह एक घंटे तक बारह बच्चे स्कूल में हर प्रकार का कार्य करते थे, इनमें हर कक्षा के बच्चे होते थे। वे विभिन्न काम करते थे, जैसे पाठशाला और उसके चारों ओर की सफाई, स्कूल के छोटे उद्यान में से घास-फूस निकालना, पौधों को पानी देना, कैंटीन में सहायता करना, घंटी बजाना, मेहमानों को स्कूल दिखाना, बीमार बच्चों की देखभाल करना और खराब नल तथा बिजली संबंधी गड़बड़ी को ठीक करना। वास्तव में वे स्कूल के हर कोने में होते और स्कूल को चलाने में सहायता देते। हर बच्चे की बारी आती और सभी काम शांति, कुशलता तथा खुशी से किए जाते। प्रत्येक दिन एक अध्यापक उनके कामों की निगरानी रखता।

मेहमानों के सामने नए भारत की यह जो तस्वीर थी उससे वे इतने प्रभावित हुए कि उन्होंने यह इच्छा प्रकट की कि विद्यार्थियों के साथ एक परिचर्चा रखी जाए। करीब सौ बच्चे जो कि कक्षा आठ से ऊपर के थे, इसमें शामिल हुए। मेहमानों ने छात्रों को बताया कि उन्हें छात्रों का कार्य बहुत अच्छा लगा और उन्होंने बच्चों को उनके काम के लिए बधाई दी। इसके बाद उन्होंने पूछा कि वे क्यों ये काम करते हैं ? क्या स्कूल जाकर शिक्षा प्राप्त करने का

अर्थ विभिन्न विषयों जैसे इतिहास, भूगोल, भौतिकशास्त्र, गणित की शिक्षा है? उन्होंने पूछा कि क्या शारीरिक श्रम को स्कूल में स्थान मिलना चाहिए? वास्तव में वे यह जानने का प्रयत्न कर रहे थे कि बच्चे जो भी कर रहे हैं, वे उसकी कीमत जानते हैं या नहीं। उन बच्चों के उत्तर से यह बात बिलकुल साफ थी कि उनके मस्तिष्क अछूते थे और उनमें मौलिकचिंतन की शक्ति थी:

''यह भी शिक्षा है क्योंकि हम कई नई चीजें सीखते हैं।''

''किताबी शिक्षा से यह अधिक व्यावहारिक है।''

''यह काम बहुत रुचिकर है। हमें हाथ से काम करने में बहुत मज़ा आता है।''

''किताबों से बंधे रहने से अधिक इसमें मज़ा है।''

''यह बहुत आवश्यक है कि हम अपने हाथ से काम करना सीखें क्योंकि आजकल नौकर आसानी से नहीं मिलते।''

''मैंने घर की वस्तुओं की मरम्मत भी सीख ली है।''

''हम मिलजुलकर काम करना सीखते हैं।''

मेहमानों के जाने के बाद मुख्याध्यापक ने यह चर्चा जारी रखी और बच्चों से पूछा कि वे स्कूल के कार्यकलापों में और सुधार लाने के लिए क्या सुझाव देना चाहते हैं। विद्यार्थियों ने बड़े ही उत्साह के साथ उत्तर दिया:

''हमें विभिन्न प्रकार के और कार्य दिए जाने चाहिए।''

''हम समय-समय पर स्कूल के बाहर जाकर नगर में लोगों की सहायता करना चाहते हैं।''

''हमें साबुन, तौलिया और धोने की सुविधा चाहिए।''

''हम मशीनों के बारे में जानना चाहते हैं जैसे इंजिन, मोटरगाड़ी आदि।''

''हम खेत में काम करना चाहते हैं। दूध निकालना, धान की कटाई आदि सीखना चाहते हैं।''

स्पष्ट है कि इस स्कूल के बच्चे आत्मनिर्भर होना सीख रहे हैं। हाथ से करने वाले काम के लिए वे नौकरों पर निर्भर नहीं थे।

क्या तुमने अपने घर या पड़ोस में इस बात पर ध्यान दिया है कि घर के नौकरों को किस प्रकार के काम करने पड़ते हैं? पुरुष और स्त्रियाँ जो बड़े ही निर्धन हैं और जिनका बड़ा परिवार है घरों में नौकरों का काम करते हैं। वह घरों की सफ़ाई, कपड़े धोने, बर्तन मांजने,

कचरा निकालने, बाजार जाने और कभी घरों की चौकीदारी का काम भी करते हैं। कुछ लोग अपना काम नौकरों से क्यों करवाते हैं? इसका कारण क्या है कि वे सोचते हैं कि कुर्सी पर सारे दिन बैठकर, साफ-सुथरे कपड़े पहनकर दिमागी काम करना, अपने आप काम कर गर्मी में पसीने में नहाने से कहीं अधिक ऊँचा है? क्या इसका कारण यह है कि वे आलसी हैं? और नौकरों के विषय में सोचो, बिना शिक्षा प्राप्त किए उन्हें घर के कामों के अलावा और कौन-सा काम मिल सकता है? उनके लिए देश क्या कर सकता है? इन पर ज़रा सोचो।

अगर ध्यान दोगे तो पाओगे कि नौकरों का भी एक वर्ग है जिन्हें नीची जाति का माना जाता है, हालांकि वे भी हमारी ही तरह मनुष्य हैं। यह वह लोग हैं जिन्हें हम भंगी या जमादार कहते हैं जो सड़कों का कचरा साफ करते हैं और हमारे घरों का पाखाना भी साफ करते हैं। क्या तुम यह देखकर अपने आपको अपमानित नहीं अनुभव करते कि शिक्षित व्यक्ति इसकी अनुमति देते हैं? क्या तुम यह समझते हो कि यदि एक भंगी के बच्चे को स्कूल जाने का अवसर नहीं दिया गया तो उसे बड़े होने पर अपने पिता का ही काम करना होगा? ऐसा क्यों? यह बात ठीक है कि आज हमारे देश में परिस्थिति बदल रही है और कई व्यक्ति यह अनुभव करने लगे हैं कि इस प्रकार के रीति रिवाज गलत हैं। अब वे आत्मनिर्भर हो रहे हैं और समाज के इन कम भाग्यशाली लोगों के बच्चों के लिए भी कई अवसर हैं। फिर भी इस ओर बहुत कुछ करना है।

क्या तुम इस बात से अवगत हो कि महात्मा गांधी ने समाज के निर्धन से निर्धन व्यक्ति के लिए कार्य किया? वे कभी भंगी कहे जाने वाले लोगों के मुहल्ले में रहते, वे अपना पाखाना स्वयं साफ करते और अपने साबरमती या वर्धा के आश्रमवासियों को भी ऐसा ही करने के लिए कहते। उन्होंने हमें सिखाया कि हर काम यदि सही भावना से किया जाए तो पवित्र होता है। उन्होंने हमें यह भी सिखाया कि मनुष्य को जातियों में नहीं बाँटना चाहिए, जन्म से कोई भी व्यक्ति बड़ा या छोटा नहीं होता।

अब क्या तुम घर तथा स्कूल में अपना काम स्वयं करोगे और हाथों से मेहनत करना सीखोगे? क्या तुम छोटे-छोटे काम जैसे झाड़ू लगाना, सफ़ाई करना, बागवानी लगाना, पालिश करना, बिजली के फ्यूज या नल की मरम्मत, कपड़े धोना, बर्तन धोना, खाना बनाना, सफ़ेदी करना जैसे काम करना सीखोगे? अपने हाथों से काम करने में एक अपूर्व आनंद तथा सुख है।

निर्णय लेना

6

सोनाली स्कूल-बस से स्कूल जाती थी। वह छठवीं कक्षा में पढ़ती थी और हमेशा कुछ न कुछ सोचती रहती थी। अधिकांश बच्चे बस में बक-बक करते रहते और कभी-कभी वे इतना अधिक शोर मचाते कि अध्यापिका को उन्हें चुप कराने के लिए अपनी आवाज़ और ऊँची करनी होती। तब तत्काल चुप्पी छा जाती किंतु थोड़ी देर बाद ही बक-बक की आवाज़ फिर आने लगती। परंतु सोनाली औरों जैसी न थी। वह खिड़की से बाहर आँख के आगे आने वाले हर दृश्य को ध्यान से देखती थी।

उस दिन उसका ध्यान सड़क के दोनों ओर लगे विशाल साइन बोर्ड की ओर गया। वह उन पर सोचने लगी। एक सबसे अच्छे मक्खन के बारे में था, दूसरा ए.बी.सी. टायर का, तीसरा एक नई घड़ी का, चौथा एक होटल का, एक बैंक और जाने कितने थे। उन पर बड़े मनोरंजक तथा बड़े-बड़े चित्र थे और वे सब अपने को सर्वश्रेष्ठ बताते से प्रतीत हो रहे थे। सोनाली ने उस दिन अपनी अध्यापिका से पूछा कि शहर में इतने अधिक साइन बोर्ड क्यों लगे हैं और उन्हें कौन लगाता है। उसकी अध्यापिका ने समझाया कि वे विज्ञापन कहलाते हैं और हर कम्पनी जो कुछ बनाती है या किसी प्रकार का जो भी कार्य करती है जैसे होटल या बैंक, वे इन तख्तों का उपयोग अपने उत्पादन के विज्ञापन के लिए करते हैं ताकि लोग उन वस्तुओं के बारे में जान सकें। विज्ञापन जितना बड़ा और आकर्षक होगा बिक्री उतनी ही अधिक होगी।

सोनाली को यह जानकर काफी हँसी आयी कि उन सारी वस्तुओं जैसे दाँत का ब्रुश-पेस्ट, क्रीम-पाउडर, रस की बोतल-जैम, सूती और ऊनी चादरें, तौलिए, रेडियो, ट्रांजिस्टर जिनका वह घर में इस्तेमाल करती है, का भी किसी न किसी रूप में विज्ञापन हुआ है। उसने यह भी जाना कि ये कम्पनियाँ विज्ञापनों पर बहुत अधिक धन खर्च करती हैं क्योंकि वे अधिक से अधिक लोगों को आकर्षित करना चाहती हैं ताकि उनकी बिक्री बढ़े और उन्हें अधिक लाभ मिल सके। व्यवसाय की दुनिया भी अजीब है। इसका संबंध न केवल

वस्तुओं के उत्पादन से है परंतु लोगों को इन वस्तुओं को खरीदने के लिए प्रभावित करने से भी है। जितना अधिक वह लोगों को प्रभावित कर सकता है, उतना ही सफल व्यापारी वह होता है।

सोनाली ने यह भी जाना कि सड़कों पर लगे विज्ञापनों के अतिरिक्त व्यापारी अपनी वस्तुओं को और अधिक प्रभावशाली ढंग से प्रचारित करने के लिए सिनेमा, रेडियो तथा दूरदर्शन का भी प्रयोग करते हैं। उसे याद आया कि सिनेमा शुरू होने से पहले अथवा मध्यांतर में घरेलू वस्तुओं का विज्ञापन दिखाया जाता है।

सोनाली की अध्यापिका एक दयालु महिला थीं और सदा उसे प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करती थीं। सोनाली ने अगली बार उनके सामने एक और प्रश्न रखा। अगर एक प्रकार की वस्तु जैसे विभिन्न प्रकार के कपड़े अथवा कलम के लिए एक जैसे दो प्रभावशाली विज्ञापन हों तो हम यह निश्चय कैसे करें कि इनमें से हमें कौन-सा खरीदना चाहिए? क्या हम अधिक प्रभावशाली विज्ञापन के आधार पर निर्णय लेंगे ? दुकान में जाकर हम किस प्रकार ठीक निर्णय ले सकते हैं–सोनाली के लिए यह प्रश्न पहेली बन गया।

उसकी शिक्षिका ने उसे प्यार से समझाया कि हमारे सामने दो रास्ते हैं। पहला तो यह कि तुम दूसरों की नकल करो। चूँकि तुम निर्णय नहीं ले सकते और यह नहीं चाहते कि हँसी के पात्र बनो, इसलिए जो भी लोकप्रिय वस्तु है, उसे चुन लो। "क्या यह ठीक है ?" उन्होंने पूछा। सोनाली को लगा कि बिना सोचे समझे अंधानुकरण करना ठीक न होगा। उसने कहा "मुझे नहीं लगता कि ऐसा करना ठीक है।" एक और रास्ता यह है कि जो भी वस्तुएं उपलब्ध हों उनकी जानकारी प्राप्त करो, उसके विज्ञापन को देखो, पता लगाओ कि क्या वह तुम्हारे लिए उपयुक्त है और क्या तुम उसे खरीद सकते हो, इन पर सोच कर फिर उन्हें खरीदो। "हाँ यह एक उचित तरीका है" उसने कहा। यदि तुम हर बार अपना निर्णय स्वयं न लेकर दूसरों से ही प्रभावित होगे तो वह हानिकारक हो सकता है। उदाहरण के लिए कुछ विज्ञापन जब भी तुम्हें सिर दर्द अथवा सर्दी हो तो एक गोली खाने की सलाह देते हैं। हो सकता है कि यह सलाह तुम्हारे शरीर के लिए उचित न हो। यह तुम्हें ही ज्ञात करना होगा कि तुम्हारे लिए क्या उचित है। क्रमशः तुम विवेकपूर्ण निर्णय लेना प्रारंभ करोगे, उन्होंने कहा, "ध्यान दो विज्ञापन के प्रभाव के विषय में जो कुछ भी सोनाली ने सीखा वह अन्य वस्तुओं पर भी लागू किया जा सकता है।" उदाहरण के लिए अपने कपड़ों तथा बालों के

संवारने के ढंग की तरफ देखो। क्या तुमने गौर किया है कि तुम अपने प्रिय हीरो तथा हीरोइन से उनके पहनावे, उनके बाल बनाने के ढंग अथवा उनके जूतों से कितने प्रभावित हो। उनके ये ढंग हर फिल्मों में बदलते रहते हैं। इस कारण तुम्हें भी कभी-कभी बदलना पड़ता है।

जब तुम इन विज्ञापनों से अथवा इन हीरो अथवा हीरोइनों से प्रभावित होते हो तब होता यह है कि यदि तुम इन से अलग होकर मौलिक अथवा स्वतंत्र रूप से अपने स्वभाव के अनुसार सोचना भी चाहो तो ऐसा नहीं कर सकते क्योंकि तुम्हें अजीब लगता है। तुम्हें इस बात की चिंता सताती है कि तुम्हारे साथी क्या कहेंगे । क्या तुमने देखा है कि तुम्हारे सहपाठियों का तुम पर इतना अधिक प्रभाव है कि तुम चाहते हुए भी उनसे अलग ढंग से नहीं सोचते, केवल इस डर से कि कहीं कोई तुम्हारी हँसी न उड़ाए। परंतु यदि तुम्हारे अन्दर शक्ति है और तुम में स्वतंत्र-रूप से सोचने की क्षमता हो तो शीघ्र ही तुम्हारे मन से दूसरों का डर दूर हो जाएगा, शायद तब तुम सुखी व्यक्ति बन सकोगे।

निर्णय लेने की कला को चाहे, वह छोटे हों या बड़े अभी सीखने की आवश्यकता है, है ना ? वह दैनिक जीवन की एक छोटी-सी बात हो सकती है यथा "मैं खेलूं या गृह कार्य करूं" अथवा और थोड़ा बड़ा निर्णय यथा "कक्षा दस के बाद विज्ञान का विषय चुनूं अथवा कला।" जो भी हो यदि तुम अपने विषय में अभी सोचना प्रारंभ कर दो तो बड़े होने पर तुम्हें बहुत आसानी होगी। उस समय तुम्हें और बड़े निर्णय लेने होगे, जैसे व्यवसाय के विषय में, जीवन साथी के विषय में, देश के लिए कौन-सा कार्य किया जाए आदि। छोटी अवस्था में ही हमें अपने आप सोचने की कला सीख लेना चाहिए, वरना हम अपना जीवन बिना कुछ सोचे जीएंगे और सदा दूसरों से ही प्रभावित होते रहेंगे जो वास्तव में ठीक नहीं। तुम्हारा क्या विचार है ?

क्या तुम अपने दिमाग पर जोर डालकर इन प्रश्नों के उत्तर ढूंढोगे ?

बातचीत करना एक महान कला है और यह आवश्यक है कि हम इसे समझें। मेरी मित्र कल्याणी के पास अपने चारों ओर की वस्तुओं जैसे फूलों और पक्षियों, नगरों और गाँवों, वातावरण और प्रदूषण, योग तथा जड़ी बूटियों, साहित्य तथा धर्म, रंगमंच तथा संगीत और कई बातों के बारे में ज्ञान का भंडार है। वह जीवन की हर वस्तु में रुचि लेती है। उसमें जीवन तथा चेतना है। उसके साथ बातचीत करना वास्तव में एक शिक्षा है, क्योंकि वर्षों में अपने अनुभवों से उसने जो कुछ भी जाना है, सीखा है, वे अनुभव तथा ज्ञान की बातें, वह बड़े उत्साह से बताती है और लोगों से बातें करने में उसे आनंद मिलता है।

फिर मेरा दूसरा मित्र डेनियल है जो विज्ञान तथा इतिहास जैसे विषयों के बारे में बहुत नहीं जानता परंतु उसने कई जगहों की यात्रा की है और कई बार पर्वतारोहण भी कर चुका है। उसके अनुभवों की कहानियाँ बड़ी रोमांचक होती हैं और उन्हें सुनने में बड़ा मज़ा आता है। उसकी बातें उत्साहपूर्ण होती हैं और वह कई लोगों के समान बातचीत पर केवल अपना ही अधिकार नहीं जमाता। बातचीत के दौरान वह दूसरों के अनुभव संबंधी छोटे-छोटे प्रश्न पूछकर उन्हें भी इस बातचीत का एक अंग बना देता है। इस कारण उसकी बातें सुनते कोई नहीं थकता क्योंकि दोनों ही उसमें भाग लेते हैं।

बेगम खातून का स्वभाव अलग है। शर्मीले स्वभाव की वह स्त्री बहुत मृदु स्वर में धीरे से बोलती है। उसकी सीधी-सादी बातों से दिल पर बहुत प्रभाव पड़ता है। वह तुमसे तुम्हारी कुशलता, तुम्हारी प्रिय वस्तुओं के विषय में पूछेगी और ऐसी छोटी-छोटी चीजों के बारे में बात करेगी जिनमें आपको मज़ा आएगा। यह बात कितनी सच है कि हमें उन लोगों से बातें करना बहुत अच्छा लगता है जो मृदुभाषी होते हैं और जो अपनी बात दूसरों पर नहीं थोपते।

दूसरे प्रकार के लोग मोहन चाचा और उनके मित्रों जैसे होते हैं। वे हमेशा अखबारों तथा पत्रिकाओं में आई खबरों के बारे में जोर शोर से बातें करते हैं, किसी की निन्दा करते हैं, किसी के पक्ष में अथवा किसी के विपक्ष में बोलते हैं। उनके सरकार को लेकर, व्यापार

तथा उद्योग, कपड़े और हाथ करघा, अमरीका तथा रूस को लेकर तरह-तरह के विचार हैं। वे इन विषयों पर बोलते ही चले जाते हैं। कोई उनकी बातों पर ध्यान नहीं देता। कभी-कभी इसकी शुरुआत तो ठीक से होती है परंतु शीघ्र ही वह एक गरमागरम बहस का रूप धारण कर लेती है। इस कारण कई बार इसका शोर रेडियो में आ रहे उस शोर के समान होता है जब उसकी सुई ठीक स्थान पर नहीं होती। यदि प्रत्येक अपने ही विचारों को बताना चाहे तो वहाँ विचारों का आदान-प्रदान नहीं हो सकता। इस कारण अनिता चाची अपने घर में इस प्रकार के शोरगुल व विवादों से इतनी तंग हैं कि वे इसकी अनसुनी कर देती हैं और कोने में बैठकर अपनी बुनाई में व्यस्त रहती हैं। उन्हें यह सब कुछ अपने बचपन के दिनों से बहुत अलग लगता है जब हर व्यक्ति बड़े ही धीरे बोलता था और अतिथि अपने साथ प्रसन्नता लाते थे। क्या तुमने एक और बात पर गौर किया है ? अक्सर लोग अपने से ऊपर के लोगों से बड़ा आदरपूर्ण व्यवहार करते हैं किंतु अपने से निम्न वर्ग जैसे नौकरों के साथ बड़ा ही कठोर तथा रूखा व्यवहार करते हैं।

अब हम देखें कि स्कूलों में बच्चे किस प्रकार बोलते हैं। जब आधी छुट्टी में तुम साथ होते हो तो किस विषय पर बातें करते हो। शायद अपनी छुट्टियों के बारे में, अपनी खरीदी वस्तु के बारे में, तुम क्या करना चाहते हो इस बारे में और साथ ही शिक्षकों के बारे में, पर इतना तो तुम मानोगे कि जब तुम बातें करते हो तो तुम में से कई एक साथ बोलते हैं। कोई किसी की नहीं सुनता। कोई धीमे स्वर में नहीं बोलता। कई बार छात्र चिल्लाते हैं। वार्तालाप की कला बिलकुल भिन्न है। यह अपनी आवाज़ को ऊँची कर पंचम स्वर में बोलना नहीं है। यह बहुत ही अच्छी बात है कि सब में इतनी शक्ति है और इतना बाँटने की क्षमता है परंतु यह बड़े दुःख की बात है कि इसमें से कई दूसरों की बातों को सुनना नहीं जानते, है ना ?

एक बात पर और ध्यान दो। स्कूल में हम अपनी ही एक भाषा बना लेते हैं। कभी-कभी यह अपभाषा होती है और कभी-कभी एकदम काम चलाऊ।

क्या तुमने अपनी भाषा पर ध्यान दिया है और देखा है कि तुम लोगों के साथ बोलने में कितने मधुर और नम्र हो ? क्या तुम सरलता तथा सहजता से वार्तालाप कर सकते हो ? क्या तुम शर्मीले और अल्पभाषी हो ? अगर ऐसा है तो क्या तुमने इसके कारण पर कभी अपने आपसे प्रश्न किया है ? क्या तुममें सुनने का धैर्य है ? क्या तुम्हारा दिमाग एक खुली

किताब है और क्या तुम दूसरों के दृष्टिकोण को देख सकते हो ? इस अल्पायु में क्या तुम वार्तालाप की कला सीखना चाहोगे ?

भविष्य में जब तुम किसी वार्तालाप के बीचों बीच हो तो क्या थोड़ी देर ठहरकर स्वयं पर ध्यान दोगे ?

भागीदारी का सुख 8

उस शाम जब असलम और उसका प्रिय मित्र अर्जुन स्कूल से वापस लौट रहे थे तब उनके चेहरों से यह बात बिलकुल स्पष्ट थी कि उस दिन स्कूल में आई महिला के भाषण से वे बहुत प्रभावित हुए थे। जिस संस्था से वह महिला आई थी उसका नाम था ''चलता फिरता स्कूल''। वे बड़े जोश के साथ उस महिला द्वारा कही गई बातों पर चर्चा कर रहे थे और घर पहुँचते ही उन्होंने उस आन्दोलन के स्वयंसेवक बनने की ठान ली।

उस महिला ने उनका ध्यान शहर में बसने वाले गरीबों की दुर्दशा की ओर दिलवाया था। वे यह भी जानना चाहती थीं कि क्या उस पाठशाला के छात्र और छात्राएँ गरीबों के कठिन जीवन से परिचित थे ? उन्होंने सिर्फ शहर में काम कर रहे मजदूरों की दुर्दशा का वर्णन किया। यह मजदूर विभिन्न नगरों से रोज़ी-रोटी की खोज में शहर आए थे और दैनिक मजदूरी पर कार्य करते थे जिसका परिणाम यह था कि अगर किसी दिन उनका स्वास्थ्य ठीक न होता और वे काम पर न जाते तो उन्हें मजदूरी न मिलती। मर्द प्रायः कारीगरी का काम करते थे जैसे मिस्त्री, बढ़ईगिरी, लोहा जोड़ने, फिटिंग आदि का काम, जबकि औरतें ईंटें, सीमेंट, मिट्टी आदि ढोने का काम करती थीं। उनके बच्चे उन्हीं के साथ एक जगह से दूसरी जगह सदा घूमते रहते थे, इस कारण उन्हें ठीक प्रकार की शिक्षा न मिल पाती। वे आपस में खेलते, झगड़ते और अपने माता-पिता की सहायता करते। उस महिला ने बताया कि यह बड़े दुःख की बात थी कि उन मासूम आँखों वाले बच्चों को पाठशाला जाने के बजाए गंदगी ही मिलती और इसी कारण कुछ व्यक्तियों ने आपस में मिलकर स्वयंसेवकों की सहायता से इन बच्चों के लिए एक मकान में कक्षाएँ लगानी प्रारंभ कीं और जो भी चीज़ें उनके पास थोड़ी बहुत थीं उसी से वे काम चलाने लगे। धीरे-धीरे उनके माता-पिता भी उसमें रुचि लेने लगे और उन्होंने बच्चों के लिए एक अच्छे स्कूल की माँग की और इसी कारण यह महिला विभिन्न पाठशालाओं में जाकर शिक्षकों तथा छात्रों के बीच से स्वयंसेवक इकट्ठे कर रही थी।

यह सब सुनने के बाद असलम तथा अर्जुन ने यह निश्चय किया कि वे अवश्य इस कार्य में हाथ बटाएंगे। अगले शनिवार को अपनी-अपनी माँ से अनुमति लेकर स्कूल के बाद वे इस महिला से मिलने उसके निवास स्थान गए। वहाँ पहुँचकर उनकी खुशी का ठिकाना न रहा जब उन्होने अपने भूगोल के अध्यापक श्री माधव को वहाँ पाया। उन्होंने वह काम चलाऊ स्कूल देखा और उन दोनों को अपनी आँखों तथा कानों पर विश्वास न हुआ। एक कमरे में तीन साल से लेकर बारह वर्ष के बच्चे छोटे-छोटे समूहों में जमीन पर बैठे थे। कुछ बच्चों के हाथों में स्लेटें और कुछ के हाथों में पुरानी कॉपियाँ थीं। वे चुपचाप ध्यान से सुन रहे थे और सीखने के लिए उत्सुक दिखाई पड़ते थे। माधव साहब बहुत ही योग्य और कर्तव्यनिष्ठ अध्यापक थे, वे कुछ बच्चों को बाहर लेकर आए और चित्र बनाने में उनकी सहायता करने लगे। अर्जुन उनके साथ हो लिया। असलम ने एक कोने में कुछ लड़कों को जमा किया और उन्हें गणित सिखाने में लग गया। उन्हें पता ही न चला कि कैसे तीन घंटे बीत गए। जब वे घर लौटे तो उनके चेहरे पर आत्मसंतोष की एक चमक थी क्योंकि जीवन में पहली बार वे उन कम भाग्यशाली बच्चों से मिले थे। जो कुछ भी उन्हें आता था उनके पास था, उसे बाँटने में कितना अच्छा लगा था। वे हर शनिवार जाने लगे और जल्दी ही यह दिन उनके लिए सप्ताह के सब दिनों में एक महत्वपूर्ण दिन बन गया।

उन बच्चों के जीवन के साथ उनके संबंध इतने अटूट हो गए कि वे उनके जीवन को हर तरह से सुंदर बनाने की योजनाएँ बनाने लगे। उन्होंने माधव साहब से अपनी योजनाओं के विषय में चर्चा की और मुख्य अध्यापक से यह अनुमति मांगी कि वे पाठशाला के अन्य छात्रों को इन निर्धन बच्चों की आवश्यकताओं के बारे में समझा सकें। इसका परिणाम यह हुआ कि उन्होंने ढेर सारे पैसे और कपड़े एकत्र किए और 26 जनवरी के दिन उन्हें ले जाकर दिया। पैसों से उन्होंने बच्चों के लिए मिठाइयाँ और छोटे उपहार खरीदे। वे अपने साथ उस दिन कुछ बड़े बच्चों को भी लेकर गए थे जिन्होंने उन्हें नए गाने और नए खेल भी सिखाए। बच्चों ने इससे भागीदारी का अर्थ समझा। इसका मतलब केवल जरूरतमंद बच्चों को पैसा, कपड़े, किताबें आदि देना ही नहीं था अपितु अपना समय, अपनी शक्ति और अपना स्नेह प्रदान भी था।

बात कैसी विचित्र, किन्तु सच है कि हम सिर्फ तब तक एक तात्कालिकता की भावना से कार्य करते हैं जब कोई वस्तु हमारे मर्म को छूती है। यद्यपि हम प्रतिदिन अपने

चारों ओर गरीबों को देखते हैं लेकिन शायद हम ये मान लेते हैं कि यही उनका भाग्य है। कभी-कभी हम उनके दुःखों को अनदेखा कर देते हैं परंतु छोटी उम्र में क्या यह हमारी शिक्षा का ही एक अंग नहीं कि हमारे ान में समाज के प्रति और उसकी समस्याओं के प्रति चिन्ता नहीं होती? क्या शिक्षा का अर्थ केवल परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर, डिग्री हासिल कर अपने चारों ओर के लोगों से पूरी तरह से कटकर नौकरी प्राप्त कर, केवल अपना जीवन संवारना ही है अथवा इसमें हर व्यक्ति के प्रति आदर हो, भले ही वह व्यक्ति गरीब, दुःखी, अपाहिज, भिखारी या कम भाग्यशाली ही क्यों न हो? इन बातों पर सोचो और यह जानने का प्रयत्न करो कि स्कूली शिक्षा में इन सब को कैसे लाया जा सकता है।

क्या तुम्हें कभी ऐसा अवसर मिला है कि तुम ऐसे लोगों की चिन्ता करो जो तुम से कम भाग्यशाली हों? क्या हम लोग उन तरीकों की चर्चा कर सकते हैं जिनके ज़रिए हम दूसरे लोगों की ज़िंदगी को समृद्ध करने में योगदान कर सकते हैं?

प्रतिस्पर्धा

जानेमाने स्कूल की अनुभवी अध्यापिका श्रीमती उमा शंकर को उसकी खास सहेली जुबैदा का पत्र मिला और चूंकि उस पत्र में कुछ महत्वपूर्ण प्रश्नों को उठाया गया था इसलिए उन्होंने उसे कक्षा में सुनाया। पत्र कुछ इस प्रकार था:

प्रिय उमा,

मैं तुम्हें एक ऐसी घटना के बारे में बताना चाहती हूँ जिससे मैं बहुत दुःखी हुई और जिसके संबंध में मैं तुम्हारी सलाह चाहती हूँ। जैसा कि तुम तो जानती हो मेरी बिटिया ने जो बस छः साल की हुई है, स्कूल जाना प्रारंभ कर दिया है। उस दिन स्कूल में चित्रकला की प्रतियोगिता थी। शायद यह उम्मीद की गई थी कि घर में माताएँ इन बच्चों को प्रशिक्षण दे देंगी। पर मैंने ऐसा कुछ नहीं किया पर प्रतियोगिता वाले दिन मैंने उसे कागज और रंग देकर स्कूल भेज दिया। घर से निकलते समय हमीदा बड़ी प्रसन्न थी। जब वह स्कूल से लौटी तब वह रो रही थी और किसी तरह से भी उसे चुप न कराया जा सका। उसे बड़ी निराशा हुई कि उसके अन्य दोस्तों के समान उसे पुरस्कार नहीं मिला। यह बात उसकी समझ के बाहर की थी क्योंकि सभी ने कागज पर चित्र बनाए थे। वह उसी समय चुप हुई जब मैंने उसे यह कहकर समझाया कि उसका चित्र भी सुंदर था और उसे एक छोटा पुरस्कार दिया। मुझे यह देखकर बहुत दुःख हुआ कि छः साल के बाल्य हृदय को चोट पहुँची। रात को जब मैं उसे सुलाने लगी तो मेरी नन्हीं हमीदा ने पूछा ''आज मैंने अच्छा चित्र नहीं बनाया है ना ? भावना ने मुझ से अच्छा बनाया। क्या यह बात ठीक नहीं ?'' छः साल के बच्चे के मुख से यह प्रश्न सुनकर मुझे आश्चर्य और दुःख हुआ।

इस घटना ने मुझे क्रोध और उलझन में डाल दिया। स्वाभाविक था कि अपनी बिटिया की उदासी के कारण मैं बहुत दुःखी थी और मुझे यह चिन्ता थी कि कहीं वह अपना आत्मविश्वास न खो बैठे। मुझे डर था कि कहीं इस छोटी उम्र में ही उसके मन में हीनता और असफलता की भावना घर न कर ले जो शायद जीवन भर रहे। दूसरे दिन मैंने उसकी

अध्यापिका से कहा कि अगर वे इस प्रकार की प्रतियोगिता न रखतीं तो शायद बच्चों को इस प्रकार की निराशा, पीड़ा का सामना न करना पड़ता। वे बच्चों से यदि केवल चित्र बनाने के लिए कहतीं तो अच्छा होता क्योंकि चित्रकला अपने आप में एक सुंदर वस्तु है। उत्तर मिला "किन्तु चित्रकला में निपुण बच्चों को उत्साहित भी करना चाहिए"।

अब तुम्हीं बताओ कि सीखने का प्रतिस्पर्धा से कितना महत्वपूर्ण और गहरा संबंध है। हमारी पाठशालाओं में विभिन्न श्रेणियाँ अथवा पुरस्कार देने की जो प्रणाली है, क्या यह आवश्यक है? क्या बच्चे सरलता, सहजता, बिना किसी से तुलना, बिना किसी प्रतिस्पर्धा की भावना से सुछ सीख नहीं सकते ? यह सब देख कर क्या ऐसा नहीं लगता कि उनकी सफलता दूसरों की असफलता पर निर्भर करती है? क्या शिक्षा का इतना क्रूर होना आवश्यक है, मुझे जल्दी पत्र लिखना।

प्यार सहित,
जुबैदा

हम में से कइयों को इस प्रकार के अनुभव हुए हैं, है ना कि जब हमारी कोई प्रशंसा करता है या कोई पुरस्कार मिलता है तो हम फूल कर कुप्पा हो जाते हैं और जब हमें असफलता मिलती है या हमें उच्च श्रेणी में नहीं रखा जाता तो निराशा में डूब जाते हैं।

कुछ लोगों का विचार है कि तरह-तरह की प्रतियोगिताओं का आयोजन कर और कुछ बच्चों की हर बारं अन्य बच्चों से तुलना करना अच्छी बात है क्योंकि इस प्रकार बच्चों में आगे चलकर भी इसी तरह होड़ की भावना बनी रहती है और वे अन्य सफल व्यक्तियों के समान ही जीवन में सफलता प्राप्त कर सकतें हैं। कुछ अन्य उसी तरह यह अनुभव करते हैं कि स्कूलों में अंकों द्वारा, श्रेणियों द्वारा प्रतिस्पर्धा की भावना को बढ़ावा देने से बच्चों के अंदर का सौंदर्य नष्ट हो जाता है। एक बच्चे की क्षमताओं की तुलना दूसरे बच्चों से करना और सदा एक को दूसरे की तुलना में अच्छे करने की प्रेरणा देना बच्चे के अंतरमन से हिंसा करने वाली बात जैसी है और इस प्रकार बच्चे में ईर्ष्या के बीज अंकुरित होते हैं। क्या यह उचित न होगा कि बच्चों को यह सिखाया जाए कि बड़े होकर वे प्रतिस्पर्धा की भावना से काम न करें परंतु उन्हें इस बात में सहायता दी जाए कि वे इतने बुद्धिमान बनें कि उनमें इस प्रकार की भावना ही न हो ताकि विश्व में और अशांति न फैले। जब बच्चों के अंतरमन को संवारा जाएगा, वे

स्वयं भी खिल सकेंगे और अन्य लोगों को भी इसका अवसर देंगे। इस कारण क्या यह हमारा उत्तरदायित्व नहीं है कि हम उन्हें पाठशालाओं में स्वतंत्र और भयरहित वातावरण दें तथा उनके हृदय और मन को प्रतिस्पर्धा, तुलना आदि के मानसिक दबाव से दूर रखें। उमा को लिखे गए अपने पत्र में जुबैदा ने यही प्रश्न उठाया है कि क्या यह आवश्यक है कि बच्चों को शिक्षा देते समय बुद्धिमान छात्रों की प्रशंसा के पुल बाँध दिए जाएँ।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए उमा ने उस दिन कक्षा में इस विषय पर चर्चा की और अधिकांश छात्रों ने यह स्वीकार किया कि तुलना दुःख देती है। यह उचित भी नहीं है और न ही आवश्यक।

क्या तुम भी इस विषय पर गंभीर रूप से विचार कर सकते हो ?

आपसी संबंध 10

कुछ नौ या दस छात्र एक सुंदर कमलताल के पास बैठे हुए अपने शिक्षकों की शिकायतें कर रहे थे। उनमें से किसी ने भी पानी में तैरती हुई मछलियों की तरफ नहीं देखा क्योंकि उनके कान उस बातचीत को सुनने में व्यस्त थे। वे अपने शिक्षकों की चर्चा कर रहे थे। उनका कहना था एक बार जब कोई शिक्षक विद्यार्थी के बारे में कोई भावना बना लेता है तो उसे कभी नहीं छोड़ता। चाहे वह कितना ही प्रयत्न क्यों न करे, कोई अंतर नहीं आता, एक उदासीन दृष्टि, आवाज़ में वही कटुता और किताबों में वही टिप्पणी। वे शायद यह कहें कि वे विद्यार्थियों के प्रति निश्चित धारणा नहीं बनाते किंतु छात्रों के अनुभव अलग थे। वे बहस कर रहे थे कि शिक्षकों का व्यवहार पक्षपात पूर्ण होता है। उनमें से एक लड़की ने कहा ''मुझे साधारण रूप से ही शिक्षक अच्छे नहीं लगते क्योंकि उनमे से अधिकांश संकुचित दृष्टिकोण के तथा दकियानूसी विचारों के होते हैं।''शायद अंतिम शब्द उसने नया-नया ही कक्षा में सीखा था। इस प्रकार की पाठशालाओं में पढ़ने का क्या फायदा यदि लड़के लड़कियाँ आपस में बातचीत नहीं कर सकते। हमें अलग बैठना, अलग खाना और अलग पढ़ना पड़ता है। उस दिन मैं और सलीम एक साथ पुस्तकालय मे डोलफिन के विषय में विश्वकोष में पढ़ रहे थे और उधर ''कुमारी अ'' मुझे घूर रही थी। मुझे उस समय ऐसा अनुभव हुआ कि मैं स्वयं समुद्र के अंदर समा जाऊँ।

वे एक बात से सहमत थे कि कुछ अध्यापक इसके अपवाद थे और कुछ शिक्षक वास्तव में बहुत ही अच्छे थे पर आम विचार यह था कि उतने बड़े विद्यालय में अधिकांश शिक्षक प्रेम के पात्र नहीं थे। शिक्षकों से डरना चाहिए और उनकी आज्ञा माननी चाहिए।

पाठशाला के दूसरे कोने में पुस्तकें जाँचते हुए विभिन्न कक्षाओं के अध्यापकों का दूसरा दल बैठा हुआ था जिनकी चर्चा का विषय छात्र थे। उनका कहना था कि छात्रों में अब सीखने का कौतुहल नहीं रहा और न ही वह परिश्रमी होते हैं और न ही वे उनके समय के छात्रों के समान भोले-भाले हैं। उनकी शिकायत थी कि वे केवल आलसी और अयोग्य हैं। वे

दिन गए जब आँखों में समझ की चमक होती थी, जब उत्तर देने के पूर्व वे अपने हाथ खड़े करते थे, जब उनका सारा कार्य उचित ढंग से किया हुआ होता था। आज कुछ कमी आ गई है। अपवाद हो सकते हैं पर आमतौर से आज के विद्यार्थियों में शिक्षा के प्रति कोई रुचि नहीं है। उनका दिमाग कहीं और आकर्षित होता है, शायद इन सबके पीछे कारण चलचित्र, रेडियो अथवा दूरदर्शन हों। उनके दिमाग में बेचैनी है। उन्हें केवल आरामदायक वस्तुओं की खोज है। उन्हें उन्हीं वस्तुओं में रुचि है जो उन्हें भौतिक सुख दे सकें। उनका कहना था कि इसकी जिम्मेदारी माता-पिता पर जाती है। ''क्या तुम यह सोचते हो कि आजकल माता-पिता के पास अपने बच्चों के लिए कोई समय है?''

एक अन्य अध्यापिका ने कहा कि मुझे उनके भौतिक सुखों के पीछे भागने में भी कोई आपत्ति नहीं है परंतु आजकल वे इतने अधिक घमंडी हो गए हैं कि उनके मन में आदर की कोई भावना नहीं। वे अपने आप को सर्वज्ञ समझते हैं, वे पाठशाला इसलिए आते हैं क्योंकि उन्हें जबरदस्ती भेजा जाता है। उस दिन एक लड़के ने मेरे प्रश्न का उत्तर इस कटुता से दिया कि अगर पाठशाला में दण्ड के विरुद्ध कोई नियम न होता तो मैं उसे अवश्य दण्ड देती। मेरा तो यह मानना है कि छात्रों के साथ बड़ी ही कड़ी कार्यवाही करनी चाहिए। इस शिक्षक की आवाज़ तथा उसके चेहरे से स्पष्ट था कि उसके दिल को चोट पहुँची है।

एक अन्य कोने में नन्हा शर्मीले स्वभाव का तेजस अपने मित्रों के साथ बैठा था। वे आपस में कानाफूसी कर रहे थे कि कक्षा में रौब जमाने वाले छात्र राकेश के साथ क्या किया जाए। वे सब उससे बहुत डरते थे क्योंकि वह दूसरों पर बड़ा रौब जमाता था, लड़कों से अपना काम करवाता था, उन्हें चिढ़ाता था और एक बार तो उसने नन्हे तेजस को मार भी दिया था। कोई भी शिक्षकों से इन बातों की शिकायत नहीं करता था। कभी-कभी यदि कोई लड़का बहुत तंग आकर कुछ शिकायत कर भी देता तो उसे ''चुगल खोर'' माना जाता। यह बड़ा ही स्पष्ट था कि स्कूल में एक दूसरे के साथ का संबंध बड़ा ही खिंचा हुआ सा था।

उसी दिन कुछ माता-पिता श्री शर्मा के घर जमा हुए थे। उनके बच्चे उसी पाठशाला में पढ़ते थे। वे प्रधानाचार्य से यह प्रार्थना करना चाहते थे कि अभिभावकों तथा शिक्षकों की एक मीटिंग बुलाई जाए। वे पाठशाला के गिरते स्तर के प्रति चिंतित थे। एक अभिभावक का कहना था कि उनके बेटे का परिणाम हर विषय में निराशाजनक था। यह वही छात्र था जो कि अपने पहले स्कूल में बुद्धिमान माना जाता था। उनका विचार था कि शिक्षकों को और

सख्ती से पेश आना चाहिए और विद्यार्थियों से और काम लेना चाहिए। एक दूसरे साहब इस मत से असहमत थे। उनका विचार था कि बच्चों को बहुत अधिक काम दिया जा रहा था और वे चाहते थे कि शिक्षकों को और अधिक नरमी से पेश आना चाहिए। एक पिता यह सोच कर बड़े दु:खी थे कि आजकल शिक्षक बच्चों को व्यवहार से संबंधित कोई शिक्षा नहीं देते। एक माँ का कहना था कि उसका बच्चा कई अपशब्दों का प्रयोग कर रहा था और वह हैरान थी कि बच्चे यह सब बातें कहाँ से सीख लेते हैं।

जो भी हो कुछ अभिभावक यह भी कह रहे थे कि शिक्षकों का जीवन और अधिक कठिन होता जा रहा था क्योंकि आजकल के बच्चों को संभालना बहुत कठिन है। जैसा कि एक माँ ने कहा मेरे लिए एक बच्चे को समझाना कठिन हो जाता है। हम यह कैसे अपेक्षा कर सकते हैं कि एक शिक्षक चालीस बच्चों की देखभाल कर सकेगा। परंतु उस दिन की उनकी बातचीत से यह स्पष्ट था कि अभिभावक शिक्षकों से बहुत अधिक अपेक्षा करते हैं और अपने बच्चों के एक आदर्श स्कूल के संबंध में उनके अपने विचार हैं। घर और स्कूल के बीच किसी भी प्रकार का संबंध नहीं है। वास्तविकता तो यह है कि शिक्षकों का अभिभावकों के साथ कोई संबंध है ही नहीं।

क्या तुमने अपने शिक्षकों के साथ अपने संबंध के बारे में सोचा है? क्या वह भय पर आधारित है या तुम उनसे बिना भय के साथ बातें कर सकते हो? क्या तुमने कभी यह अनुभव किया है कि यदि हम दूसरे व्यक्ति के प्रति निश्चित धारणाएँ न बनाएँ तो हमारे आपसी संबंध और मधुर हो सकते हैं और शिक्षा में मधुर संबंधों का होना बहुत आवश्यक है।

अपने माता-पिता के साथ तुम्हारे संबंध किस प्रकार के हैं? शायद तुम नि:संकोच यह कहो कि तुम उन्हें प्यार करते हो परंतु क्या तुम उनसे निडर होकर बिना कुछ छिपाए सब कुछ कह सकते हो। क्या उनके किसी व्यवहार से तुम्हें दु:ख पहुँचा है? अपने सहपाठियों के साथ तुम्हारे संबंध कैसे हैं? क्या तुम पर कोई रोब जमाता है? क्या तुम शर्मीले स्वभाव के हो? तुम क्यों किसी को रोब जमाने देते हो? क्या तुम स्वयं शक्तिशाली नहीं बन सकते?

लोगों के आपसी संबंध बहुत ही कोमल वस्तु है। यह एक पुष्प के समान है। तुम्हें इसे कुचलना नहीं संवारना है अन्यथा इसका नाश निश्चित है। दूसरों के साथ मधुर संबंधों को बनाने में दूसरों की भावनाओं का ध्यान रखना होता है। कुछ लोग अपने ही ख्यालों में डूबे रहते हैं, वे दूसरों के प्रति नहीं सोचते। यह बड़े ही दु:ख का विषय है।

इसलिए यदि अपनी इस छोटी आयु में तुम इन बातों का ध्यान रखोगे तो बड़े होने पर बड़ी सरलता से दूसरों के साथ सहज संबंध जोड़ सकते हो।

दीवाली की दो सप्ताह की छुट्टियों के लिए स्कूल बंद होने वाला था और छात्र इन छुट्टियों की प्रतीक्षा कर रहे थे। सब के मन में उत्साह भरा हुआ था और उनके चेहरे प्रसन्नता से चमक रहे थे। यह सोचकर कि उन्हें सुबह जल्दी उठकर तैयार होकर बस स्टॉप पर नहीं जाना होगा, वे अपना गृह कार्य आराम से कर सकेंगे, उन्हें रोज शिक्षकों की डाँट नहीं सुननी पड़ेगी, वे अपनी इच्छानुसार पूर्णरूप से काम कर सकेंगे, वे प्रसन्न थे। शायद अधिकांश विद्यार्थियों के लिए छुट्टियों का अर्थ यही होता है।

उस दिन वे आपस में बड़े उत्साह से चर्चा कर रहे थे कि छुट्टियाँ कैसे बिताई जाएँ। उनके मन में तरह-तरह के विचार थे, पिकनिक पर जाना, कम से कम छः पिक्चर देखना, शहर में आने वाले सर्कस को देखना, रिश्तेदारों से मिलना, अच्छी-अच्छी चीजे खाना, टी.वी. या वीडियो देखना, घूमना आदि। बहुत से बच्चे दीवाली के पटाखों की बातें कर रहे थे। कुछ ऐसे बच्चे भी थे जिनकी रुचि डाक टिकटों के संग्रह, सिक्कों के संग्रह, संगीत विशेषकर सितार या तबला, वायलिन या मृदंगम बजाना, फोटोग्राफी, खाना बनाना अथवा बागवानी में थी और वे इन सब के लिए समय चाहते थे। कुछ बच्चे छुट्टियों में ऐसी चीजें सीखना चाहते थे जो स्कूल में नहीं सिखाई जाती थीं जैसे कोई नई भाषा, हाथ करघा का काम, कशीदाकारी इत्यादि। वे कोई सृजनात्मक कार्य करना चाहते थे। बहुत कम बच्चे किताबें पढ़ना चाहते थे। यह पाठशाला एक ऐसे शहर में थी जहाँ दूरदर्शन का केंद्र था और इसी कारण छात्रों में धीरे-धीरे पढ़ने की आदत कम होती जा रही थी। हर वस्तु को परदे पर देखने का एक अपना ही मज़ा था। उन छोटे शहरों में जहाँ दूरदर्शन नहीं था वहाँ छोटे-छोटे चलचित्र घर थे जो यह दावा करते थे कि हर प्रकार का मनोरंजन वे प्रदान कर सकते हैं।

यह लड़के लड़कियाँ जिस ढंग से अपनी छुट्टियाँ बिताना चाहते हैं, क्या उससे तुम्हें कोई बात स्पष्ट जान पड़ती है? क्या तुम्हारा छुट्टियाँ बिताने का ढंग उनसे अलग है ? तुम अपनी छुट्टियाँ कैसे बिताना चाहोगे ? क्या बड़ों और बच्चों के ढंग में अंतर होता है ? क्या

तुमने इस बात पर ध्यान दिया है कि वे अपनी छुट्टियाँ कैसे बिताते हैं ? सबसे पहले तो हम वही काम चुनते हैं जो हमें अच्छा लगता है और जो हमें अच्छा नहीं लगता, जिसमें मज़ा नहीं आता उसे छोड़ देते हैं। आजकल एक प्रवृत्ति ऐसी हो गई है कि हम प्रतिदिन नए प्रकार का मनोरंजन चाहते हैं। एक ही काम को करते-करते हम ऊब जाते हैं, हाँ यदि वह हमारी रुचि का काम हो तो फिर बात कुछ और है। इसलिए यदि हमारी किसी वस्तु में रुचि नहीं तो हम मनोरंजन में भी विविधता ढूंढते हैं। क्या तुमने कभी ध्यान दिया है कि जब हम हरदम किसी नए मनोरंजन की खोज में रहते हैं तब हम उन पर एक तरह से निर्भर हो जाते हैं ? हमारा प्रसन्न रहना इन बाहरी वस्तुओं पर निर्भर हो जाता है। परिणाम यह होता है कि हम सदा बेचैन रहते हैं और हमारी रातों की नींद उड़ जाती है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि हमारी सारी शक्ति नष्ट हो जाती है। पता लगाओ कि इसमें कितनी सच्चाई है। ध्यान दो कि तुम अपना समय किस प्रकार बिताना चाहते हो और यह पता लगाओ कि कुछ घंटों के मनोरंजन के लिए तुम बाहरी वस्तुओं पर कितना निर्भर रहते हो। इसमें कोई संदेह नहीं कि हँसी-मज़ाक का होना बड़ा आवश्यक है। हम में से प्रत्येक को आनन्दपूर्ण क्रीड़ाओं में भाग लेना चाहिए। पर क्या हम ये आनंद गणित, भौतिकी, इतिहास या भूगोल पढ़ते समय भी ले सकते हैं ? क्या तुम दूसरों की मदद करते समय यह आनंद प्राप्त कर सकते हो ? क्या कोई व्यक्ति किसी पौधे को सँवारने और बड़ा करने में यह आनन्द प्राप्त कर सकता है ? इन बातों पर सोचो। अपने अंदर की प्रसन्नता के लिए मनोरंजन के बाहरी साधनों का होना कितना आवश्यक है ? रुचि हृदय के अंदर होती है या बाहर ? अपनी रुचियों का पता कैसे चलता है ? क्या तुमने कभी सोचा है कि किस उम्र के साथ रुचि पनपती है ?

शक्ति क्या होती है ? वे कौन-सी वस्तुएँ हैं जिनसे यह शक्ति जाती है ? क्या तुम "छितराने" का अर्थ जानते हो ? छितराने का अर्थ है शक्ति को नष्ट करना। उदाहरण के लिए यह देखो कि एक घूसे बाजी वाले चलचित्र में हिंसा आदि को देखकर तुम्हारे दिमाग में किस प्रकार के विचार उठते हैं ? क्या उस समय की मन की दशा तथा रात भर अच्छी तरह से सोकर प्रातःकाल मन की दशा में अंतर है ? क्या यह कहना सत्य है कि मनोरंजन के बहुत अधिक साधनों से शक्ति छितरा जाती है ?

अगर इसमें सत्य है तो क्या तुम शक्ति की बचत कर सकते हो ? मनोरंजन के साधनों से दूर रहकर नहीं, वह तो बेवकूफी होगी, बल्कि एक ऐसे साधन को चुनकर जो तुममें

नवजीवन तथा प्रसन्नता भर सके। क्या तुम अकेले बैठकर आकाश, पक्षियों अथवा वृक्षों को देख सकते हो? कभी प्रयत्न करके देखो, शायद तुम्हें अच्छा लगे।

अरुण को यह जिम्मेदारी सौंपी गई कि वह अपनी मौसी को उनके घर छोड़ आए। उसकी मौसी के घर जाने के लिए रेलगाड़ी से दो घंटे का सफ़र तय करना पड़ता था। अरुण बड़ा ही प्रसन्न था क्योंकि इस जिम्मेदारी का अर्थ था कि वह अब बड़ा हो गया है। वह अपनी साइकिल पर स्टेशन गया और वहाँ जाकर उसने द्वितीय श्रेणी के दो टिकट खरीदे और सीटों का आरक्षण करवाया। उसने अपनी माँ द्वारा दिए गए एक छोटे से बटुए में टिकट रखे और सीधे घर आ गया। वह अपनी रेवती मौसी को बहुत चाहता था। उसकी मौसी एक सप्ताह के लिए अपनी बहन के घर आई हुई थी क्योंकि अपने घर में वह बिलकुल अकेली थीं। उनके सबसे बड़े लड़के की शादी हो चुकी थीं। वह दूसरे शहर मे नौकरी करता था। उनकी बेटी डाक्टरी पढ़ रही थी और अंतिम वर्ष होने के कारण वह ज्यादातर अस्पताल में ही रहती थी। इसलिए मौसी अपने छोटे लड़के और उसकी पत्नी सारिका के साथ रहती थीं जिसके साथ दुर्भाग्यवश उनके संबंध इतने अच्छे न थे। सारिका हंसमुख, चुस्त लड़की थी, किन्तु मौसी की दृष्टि में वह बहुत आधुनिक थी। जब भी वह अपनी बहन के घर आतीं, तब वे कितनी ही ऐसी घटनाएँ सुनातीं जिनके द्वारा वह यह बताना चाहतीं कि आधुनिक लड़कियाँ बहुत स्वार्थी और घमंडी होती हैं। उनकी बहन उन्हें हमेशा धीरज बंधाती। कितनी विचित्र बात है कि हम लोगों के रोजमर्रा के जीवन और उनके व्यवहार आदि को देखकर उनके प्रति अपनी धारणाएँ बना लेते हैं। यह घटनाएँ नित्य होती हैं और ऐसे लोगो के प्रति हमारी धारणाएँ भी पक्की होती चली जाती हैं। इस तरह रेवती मौसी के मन में अपनी बहू का एक चित्र था और उसी तरह उस नवयुवती के मन मे भी अपनी सास का एक चित्र होगा कि वह कितने पुराने विचारों की हैं, अपने बेटे पर किस प्रकार अधिकार चाहती हैं। उनका बेटा बड़ी दुविधा की स्थिति में था क्योंकि वह माँ तथा अपनी पत्नी दोनो को ही चाहता था। प्रायः वह बहरा बन जाता और इस पर दोनों स्त्रियो को और अधिक क्रोध आ जाता। जीवन ऐसा ही है, अंतर्द्वंद्वों से तथा हमारी अपनी बनाई गई समस्याओं से भरा हुआ। यदि वे आपस में बैठकर बातें करते

तो शायद समस्या सुलझ जाती किंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया।

जो भी हो अरुण यह सोचकर बड़ा ही खुश था कि वह अपनी मौसी के साथ जाकर एक दिन वहाँ बिताकर वापस आ सकेगा। उसने अपने कपड़े रखे तथा एक छोटे-से डिब्बे में साबुन तथा दाँतों का ब्रुश भी रखा। गाड़ी के डिब्बे में वह अपने आप को बड़ा ही जिम्मेदार व्यक्ति समझ रहा था। उसने अपनी मौसी को बड़े आराम से बिठाया। फिर उसने अपने चारों तरफ बैठे लोगों पर दृष्टि डाली। उसके पिता ने एक बार कहा था कि "इस संसार में तरह-तरह के व्यक्ति हैं"। उस समय तो यह बात पूरी तौर से उसकी समझ में नहीं आई पर अब उनका वह कथन उसे स्पष्ट होने लगा। हर व्यक्ति दूसरे से बिलकुल अलग था। एक ऐसी औरत थी जो अपने बच्चे के हर प्रश्न का उत्तर बड़े प्यार से दे रही थी तो दूसरी ओर एक दूसरी औरत अपने बच्चे के हर कुतुहल भरे प्रश्न पर उसे डाँट रही थी। कोने में आँखों में चमक लिए एक बूढ़ा व्यक्ति बैठा हुआ था जिसके हाथ में चुरुट था तो दूसरे कोने में एक नौजवान अपनी त्यौरी चढ़ाए बैठा था। दस मिनट बाद अरुण के कानों में बहस की आवाज सुनाई दी। चार आदमी टिकट कलक्टर को घूस देने का प्रयत्न कर रहे थे ताकि उन्हें रात में सोने के लिए जगह मिल जाए। अरुण के कान उनकी बातों की तरफ थे क्योंकि पहली बार वह बड़े लोगों के इस प्रकार के व्यवहार को देख रहा था।

उस बड़े डिब्बे के दूसरे कोने में स्त्रियों और पुरुषों का एक समूह देश के गिरते स्तर पर अपने विचार व्यक्त कर रहा था। वे वर्तमान दशा की शिकायतें कर रहे थे। ऊँची-ऊँची इमारतें नगरों का सौंदर्य नष्ट कर रही थीं "किसी को कोई परवाह ही नहीं" वे कह रहे थे। लालची ठेकेदारों के द्वारा जंगल के जंगल काटे जा रहे हैं, हर वस्तु इतनी महँगी होती जा रही है। उसके बाद वे आजकल व्यावसायिक कालेजों में प्रवेश की समस्याओं पर बातें करने लगे कि योग्य छात्रों को भी प्रवेश नहीं मिल पाता। इस तरह शिकायतें जारी रहीं। वे अपनी बातों में इतनी जोर से बोल रहे थे कि वे यह भी भूल गए थे कि उन्हें अपने साथ बैठे लोगों का भी ध्यान रखना चाहिए–उनका उस छोटे बच्चे की तरफ एकदम ध्यान नहीं था जो सोने का प्रयत्न कर रहा था, न ही उस युवा दम्पति की तरफ जो एक नए जीवन का प्रारंभ करने वाले थे, न ही उस विद्यार्थी की ओर जो अपना पूरा ध्यान लगाकर पुस्तक पढ़ने का प्रयत्न कर रहा था। ऐसा अक्सर होता है, है ना? हम इस बात की आलोचना करते हैं कि हमारे देश में क्या हो रहा है, यह सोचे बिना कि हमारे चारों ओर क्या हो रहा है। क्या हम बिना

किसी और को दोष दिए देश में हो रहे गलत कार्यों के लिए स्वयं कुछ नहीं कर सकते? हम भी तो देश का ही एक भाग हैं, हैं ना? अरुण को यह सब देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ।

उसने बाहर देखा तो एक स्टेशन आ चुका था। कपों और गिलासों की आवाज़ें आ रही थीं। खोमचे वाले चाय और खाने की वस्तुओं की आवाज़ें लगा रहे थे। उसने खिड़की से बाहर बड़ी ही उत्सुकता से इन विभिन्न प्रकार के लोगों को देखा। गरीब, अमीर, बहुत गरीब, लम्बे, नाटे, दुबले, मोटे, भूरे, काले, गोरे आदि सब तरह के लोग थे। नल पर भी भीड़ जमा थी। सभी के हाथ में पानी की बोतलें थीं और हर व्यक्ति यह चाह रहा था कि सबसे पहले पानी वह भर सके मानो उसी की जरूरत सबसे अधिक थी। लोग इस प्रयत्न में एक दूसरे को धक्का दे रहे थे। कोने में खड़ा एक छोटा बालक शायद स्टेशन पर ही छूट गया होता यदि एक अधेड़ महिला ने बोतल भरने में उसकी सहायता न की होती। ''ये बड़े लोग, छोटी-छोटी बातों में बिना किसी का ध्यान किए काम करते हैं'', अरुण ने मन में कहा। दूसरों के प्रति ध्यान रखना बहुत बड़ा गुण है। हममें इसके प्रति सजगता आती है, जब हम यह देखते हैं कि किस प्रकार लोग तथा हम स्वयं भी बिना दूसरों के लिए सोचे काम करते हैं। यह भावना आते ही हममें परिवर्तन आता है। कभी कोशिश कर के देखो।

अगले स्टेशन पर लड़के लड़कियों का एक झुंड डिब्बे के अंदर घुसा। वे विश्वविद्यालय के छात्र थे और बड़े ही उत्तेजित लग रहे थे। उनमें बहस हो रही थी कि क्या कुलपति द्वारा विश्वविद्यालय को बंद कर छात्रों को छात्रावास से निकालना उचित था। कुछ छात्रों ने हड़ताल की थी और यह छात्र उस हड़ताल में शरीक नहीं थे। उन्हें देखकर लगता था कि उनकी इन बेकार की बातों में दिलचस्पी न थी और उन्हें क्रोध इस बात का था कि कुछ मुट्ठी भर उपद्रवी तत्वों के कारण उनकी परीक्षाएँ स्थगित कर दी गईं थीं। उनमें इतना उत्साह था कि डिब्बे में सारे व्यक्ति उनकी तरफ आकृष्ट हो गए। अरुण ने उनकी ओर आश्चर्य तथा आदर से देखा।

जब वे अपने स्टेशन पर उतरे तो अरुण को लगा कि इन विभिन्न प्रकार के लोगों के साथ यात्रा करके उसे बड़ा मज़ा आया। अपनी मौसी के साथ वह चुपचाप और विचारों में खोया हुआ चल रहा था। उस पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा था।

लोग कितने अलग-अलग प्रकार के होते हैं, पर फिर भी क्या तुम्हें कोई समान बात दिखाई देती है? वास्तव में हम लोग क्या चाहते हैं? क्या हम अंदर से भी अलग-अलग हैं?

या तुम्हें सबके अंदर कोई एक सामान्य बात दिखाई देती है ? तुम स्वयं इसे जानने की कोशिश करो।

स्कूल का वार्षिकोत्सव

स्कूल के वार्षिकोत्सव के एक महीने पहले से ही स्कूल में बड़ी चहल पहल थी। इस दिन पाठशाला में अभिभावकों और मित्रों के लिए शाम को एक सांस्कृतिक कार्यक्रम का आयोजन था। इस दिन बच्चे विशिष्ट योग्यता का प्रमाणपत्र पाने वाले थे। उन सभी बच्चों को प्रमाण पत्र मिलने वाला था जिन्हे किसी विषय मे 65% या इससे अधिक अंक मिले थे, जिन्होंने खेलकूद, संगीत, कला, वाद-विवाद, नाटक या किसी विशेष विषय में योग्यता प्राप्त की थी। इस पाठशाला में किसी कक्षा के केवल प्रथम तीन बच्चों को ही पुरस्कार नहीं दिया जाता था। वे उन सब बच्चों को पुरस्कृत करना चाहते थे जिनमें प्रतिभा थी या जिन्होंने प्रयत्न किया था। इसका परिणाम यह था कि छात्रों में शैक्षिक योग्यता प्राप्त करने की पूरी उमंग थी क्योंकि यहाँ प्रतिस्पर्धा नहीं थी और अधिक से अधिक छात्र इसके प्रतिभागी हो सकते थे। सब छात्र बड़ी उत्सुकता से इस दिन की प्रतीक्षा में थे।

जो शिक्षक साधारण रूप से कार्यक्रमों का आयोजन करते थे उन्होंने यह निश्चय किया कि मुख्य रूप से तीन कार्यक्रम लिए जाएँ और अधिक से अधिक बच्चों को अवसर दिया जाए। उन्होंने अंग्रेजी में एक ऐतिहासिक नाटक चुना जिसका संबंध महारानी एलिज़ाबेथ तथा सर वाल्टर रेले के समय से था, हिंदी में उन्होंने स्वतंत्रता संग्राम से एक महत्वपूर्ण घटना नमक सत्याग्रह के प्रदर्शन का निश्चय किया जब गांधी जी ने डांडी यात्रा का नेतृत्व किया था। कक्षा आठ के बच्चों ने इस विषय को पढ़ने के बाद स्वयं ही इसे लिखा था, इसके बाद विभिन्न प्रांतों के लोक नृत्यों का संबंध वर्षा ऋतु के आगमन और उनके स्वागत के लिए उत्सुक नर-नारियों से था। ये नृत्य बंगाल, पंजाब, कश्मीर, गुजरात, महाराष्ट्र, केरल, कर्नाटक, उड़ीसा के प्रांतों से लिए गए थे। गीतो का चयन बहुत सोच समझकर किया गया था और नृत्यों को बड़ी ही विशिष्ट शैली में तैयार किया गया था। वेशभूषा के औचित्य पर भी बहुत अधिक ध्यान दिया गया था। यह ध्यान रखा गया कि किसी भी गीत या नृत्य पर फिल्मी प्रभाव न हो।

प्रतिदिन कक्षा के बाद एक घंटा अभ्यास के लिए निश्चित किया गया था किंतु जमा होने में बच्चे काफी अधिक समय लगाते थे। कुमारी चित्रा गोखले पर इन सब सांस्कृतिक कार्यक्रमों की जिम्मेदारी थी। शायद और कोई होता तो यह काम न कर पाता। लेकिन उनमें करने की शक्ति तथा धैर्य और सब पर उनका पूर्ण नियंत्रण था। वे हर कार्यक्रम के लिए स्थान और शिक्षिकाओं का चुनाव बराबर करती थीं। लेकिन एक समस्या जो स्कूल के सामने थी वह यह कि अधिकांश बच्चे समय के पाबंद न थे। कक्षा के बाद बच्चे निकलते तो ऐसा लगता कि वे किसी बंधन से बाहर निकले हों और उन्हे अपने मन की बातें कहने और फिर से जमा होने में समय लगता। इसलिए रिहर्सल को समय पर प्रारंभ करने की जिम्मेदारी के प्रश्न को लेकर विद्यार्थियों की परिषद् बुलाई गई। स्वाभाविक था कि जैसे-जैसे दिन नजदीक आता गया हर कोई अपने उत्तरदायित्व के प्रति सचेत होता गया। क्या यह तय नहीं है कि हममें गंभीरता तथा जागरूकता लाने के लिए एक चुनौती की आवश्यकता पड़ती है?

स्कूल दिवस के दिन मंच के पीछे तरह-तरह के भाव देखने को मिले जैसे घबराहट, उत्साह, ईर्ष्या, निराशा, क्रोध, सहयोग की भावना इत्यादि। शिक्षक और अभिभावक मेकप कर रहे थे। ''रानी'' इतनी सुंदर लग रही थी कि उस लड़की को ईर्ष्या हुई जिसे दासी के कपड़े पहनने थे। लोक नर्तकों के बीच लोक आभूषण और फूलों की खोज जारी थी। हर कोई सुंदर दिखना चाहता था। शिक्षकों को अब बच्चों के अलग भावों को संभालना कठिन प्रतीत हो रहा था परंतु साधारण रूप से प्रत्येक के मन में उमंग और उत्साह की भावना थी। जैसे-जैसे हर चरित्र सजीव होता गया वैसे-वैसे तालियों की गड़गड़ाहट के बीच उनकी सराहना हुई। सज्जा कक्ष एक मंच जैसा प्रतीत हो रहा था जहाँ लगता था कि जीवन का नाटक हर साल सफलता के साथ खेला जाता है।

शामियाने का दृश्य बिलकुल अलग था। कुछ शिक्षक और छात्र कुर्सियाँ लगा रहे थे और परख रहे थे कि हर तरफ से दृश्य दिखाई देगा या नहीं। प्रधानाचार्य इधर-उधर घूम रही थीं और बैठने की व्यवस्था, स्वयंसेवक तथा माइक्रोफोन की व्यवस्था की निगरानी कर रही थीं।

निमंत्रण पत्र पर छपे समय के दस मिनट पहले प्रधानाचार्य, शिक्षक और कुछ वरिष्ठ छात्र प्रवेश द्वार पर अतिथियों का स्वागत करने के लिए तैयार खड़े थे। सब अपने मन में गर्व का अनुभव कर रहे थे। स्कूल की ओर से उन्हें निमंत्रण मिला था, ताकि वे भी अपनी

राजनीतिक चिंताओं को भूलकर फिर से अपने बचपन के दिनों की याद ताज़ा कर सकें। प्रार्थना के पश्चात एक छात्र ने मुख्य अतिथि का स्वागत किया और उसके बाद ठीक समय पर कार्यक्रम प्रारंभ हुआ। शायद मंत्री महोदय इसके आदी न थे। मंच सीधा सादा-सा था केवल पीछे एक गहरे सुनहले रंग का परदा था और कुछ कामचलाऊ वस्तुएँ थीं जो बच्चे स्वयं ही बना सकते थे। यह ऐसी उन्नतिशील पाठशाला थी जहाँ निर्जीव मंच-सज्जा से अधिक बच्चों की प्रतिभा पर बल दिया जाता था।

आजकल देश में अंग्रेज़ी के गिरते हुए स्तर को देखते हुए अंग्रेज़ी नाटक बहुत ही अच्छा था। एक स्थान पर इस नाटक की निर्देशिका शिक्षिका को यह सोचकर घबराहट हो रही थी कि शायद रानी उस एलिज़ाबेथ युगीन वस्त्र को पहनकर ठीक प्रकार से अभिनय न कर पाएगी परंतु रानी ने अपने आपको इस तरह प्रस्तुत किया कि मानो वही महारानी एलिज़ाबेथ है। बच्चे समय की कसौटी पर खरे उतरते हैं। यह प्रशिक्षण की वह अवस्था होती है जब वे कठिनाइयाँ पैदा करते हैं।

नमक सत्याग्रह आंदोलन का दृश्य बड़ा की मर्मस्पर्शी था जिसे देखकर श्रोताओं मे बैठे छोटे-बड़े सब की आँखों में आंसू आ गए। महात्मा गांधी का अभिनय करने बाला लड़का एकदम महात्मा गांधी लग रहा था और उसका अभिनय गांधी जी पर बनी फिल्म के अभिनेता बने किंगसले से किसी भी दृष्टि से कम न था। वास्तव में उसने यह फिल्म कई बार देखी थी ताकि गांधी जी की चाल, मुसकुराहट, कमर का झुकाव, पोशाक आदि के बारे में बारीकी से जान सके। वह अपने स्कूल का सबसे अच्छा लड़का था और अपना हर काम बड़ा मन लगाकर किया करता था। संवाद बहुत ही सरल और सीधे थे क्योंकि वह बच्चों के ही द्वारा लिखे गए थे और इसलिए सारा दृश्य बड़ा ही स्वाभाविक लग रहा था। हर एक बच्चा अपनी भूमिका को समझ कर और जी लगाकर कर रहा था। कुल मिलाकर अस्सी विद्यार्थी इसमें भाग ले रहे थे। संगीत भी बहुत ही मधुर था। श्रोताओं पर बड़ा ही गहरा प्रभाव पड़ा। माता-पिता अपने बच्चों को मंच पर देखकर काफी प्रसन्न थे। माता-पिता के लिए स्कूल दिवस बड़ा ही महत्वपूर्ण होता है और वे बड़ी उत्सुकता से इसकी प्रतीक्षा करते हैं। वे अन्य बच्चों को भी पहचानने की कोशिश कर रहे थे क्योंकि उनके बच्चों ने कई छोटी-छोटी घटनाएँ उन्हें सुनाई थीं।

इसके पश्चात एक ताज़ी हवा के झोंके समान आए लोक नृत्य। वर्षा का अभिनंदन

करते हुए और मुसकुराहट लिए पूरे उल्लास से नृत्य करते हुए उन बच्चों की प्रसन्नता श्रोताओं पर भी छा गई। वास्तव में उस शहर में पिछले दो वर्षों में वर्षा न होने के कारण सूखा पड़ा था और इसी कारण वर्षा ऋतु के इस नृत्य ने बच्चे और बूढ़ो के मन में वर्षा ऋतु के स्वागत करने की उमंग जगा दी। यह गीत विभिन्न भारतीय भाषाओं जैसे मराठी, गुजराती, बंगाली, मलयालम में थे और बच्चों ने भी बड़े मनोयोग से उन्हें सीखा था। भारत की भाषाएँ सीखना कितना सरल है और इन्हें बोलने में कितना आनंद मिलता है। हर भाषा अपने आप में मूल्यवान और सुंदर है, हरेक का अपना अलग स्वरूप है। इससे दिमाग में एक प्रश्न उभरता है कि हम भाषा को लेकर, इसे जटिल बनाकर क्यों एक समस्या का रूप दे देते हैं कि बच्चे स्कूल में कौन-सी भाषा सीखें और कौन-सी न सीखें।

उस शाम के सभी कार्यक्रम सफलता पूर्वक संपन्न हुए। मंच के पीछे बच्चे एक दूसरे को गले लगा रहे थे। शिक्षकों ने आराम की सांस ली। वे थक तो गए थे किंतु प्रसन्न थे।

शामियाने में मुख्य अतिथि को मंच पर ले जाया गया। उन्होंने बच्चों को बधाई देते हुए एक सुंदर भाषण दिया। इसमें उन्होंने बच्चों से आग्रह किया कि स्कूल में रहते हुए भविष्य के लिए उत्साहपूर्वक, नित नई खोज करने वाले जीवन के लिए अपने आपको तैयार करना चाहिए। मुख्य अतिथि की पत्नी ने सबको प्रमाण पत्र दिए। इस प्रमाण पत्र को बड़े ही सुंदर रूप से गुलाबी फीतों में बांधकर कुमारी गोखले ने मेज पर रखा था। कुमारी गोखले स्कूल में तीस वर्षों से थीं और प्रतिवर्ष उन्हें यह करने में बड़ा आनंद मिलता था। शामियाने में अपूर्व शांति थी और श्रोता काफी अच्छे थे। प्रधानाचार्य ने सबको धन्यवाद दिया खास कर बच्चों को, शिक्षकों को तथा स्कूल के अन्य कार्यकर्ताओं को। स्कूल के लिए भावनाओं से भरे अपूर्व अनुभव के ये क्षण थे।

क्या तुमने अनुभव किया है कि स्कूल दिवस मनाते समय कितनी प्रकार की भावनाओं से पाला पड़ता है और कभी-कभी हमारा व्यवहार कितना बेवकूफी भरा होता है ? क्या तुमने देखा है कि दूसरे दिन कितने साधारण होते हैं ? इसका कारण क्या है ? जरा सोचो।

क्या तुम अंग्रेज़ों के विरुद्ध स्वतंत्रता प्राप्ति के संग्राम की इस देश की कहानी से परिचित हो ? अब यह एक कहानी के रूप में, इतिहास के पृष्ठों का एक अंग बन गई है। इसे पढ़ो और इस विषय पर चर्चा करो और यह जान लो कि समय तथा चुनौती का सामना करने पर मानव उत्साह कैसे जागृत होता है जैसे कि हमारे मन मे सामूहिक रूप से गुलामी के

विरुद्ध उठ खड़े होने की भावना जागी थी।

भाषाओं को सीखने के विषय में भी ज़रा सोचकर देखो। तुम कितनी भाषाएँ जानते हो ? क्या कई भाषाओं को जानने का अपना अलग मज़ा नहीं ? क्या तुम किसी अन्य प्रांत की भाषा सीखने के लिए थोड़ा समय नहीं लगाना चाहोगे ताकि तुम वहाँ जा सको और वहाँ अपने आपको उन लोगों से अलग न अनुभव कर सको ? तुम उस भाषा में सरल किताबें पढ़ सकते हो और अगर तुमने वह भाषा अच्छी तरह से सीख ली तो वहाँ का साहित्य भी पढ़ सकते हो। अगर तुम उत्तर भारत में रहते हो तो अच्छी हिंदी सीखने का प्रयत्न करो और कोई एक दक्षिण भारत की भाषा जैसे तमिल भी सीखो। तमिल भाषा संसार की सबसे पुरानी भाषाओं में से एक है और उसका साहित्य विपुल है अथवा तुम कन्नड़, मलयालम या तेलुगु सीख सकते हो। अगर तुम दक्षिण भारतीय हो तो हिंदी के अतिरिक्त बंगाली, उड़िया, असमिया सीखने का प्रयत्न कर सकते हो और इस तरह भावात्मक एकता द्वारा पूरे देश में एकता ला सकते हो। एक देश की संपदा उसकी भाषाएँ,उसका साहित्य,उसकी संस्कृति और उसकी भावना है। क्या तुम इससे सहमत हो ?

ठेस पहुँचना 14

चलो हम देखें कि स्कूल तथा घर से संबंधित ऐसी कौन-सी घटनाएँ हैं जिनसे बच्चों के हृदय को चोट पहुँचती है और इस प्रकार की चोट तुम्हें कितना दुखी करती है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि सबसे अधिक दुख उस समय होता है जब अध्यापक की डाँट सुननी पड़ती है। हो सकता है कि उनके द्वारा कई बार समझाने के बाद भी तुमने कोई गलत कार्य किया हो और इस बार उन्होंने ज़रा कड़ाई से निबटने का निश्चय किया हो। अगर तुम यह अनुभव करते हो कि उनका कहना ठीक है तो तुम्हें इतना अधिक दुखी नहीं होना चाहिए हालांकि तुम यह नहीं चाहते कि दूसरे विद्यार्थियों के सामने तुम्हे डाँटा जाए। अगर तुम बुद्धिमान हो तो अपनी गलती समझकर, इस बात को भूल जाओगे। तुम अपने अध्यापक से क्षमा याचना कर इस बात को वहीं छोड़ दोगे। परंतु यदि तुम में सोचने की शक्ति नहीं तब तुम इस बात को लेकर मन ही मन घुटते रहोगे, तुम तरह-तरह से अपनी बात मनवाने का प्रयत्न करोगे या अपना सारा क्रोध किसी और पर उतारोगे। इस प्रकार का व्यवहार करना मूर्खता होगी क्योंकि इससे तुम और दुखी होगे।

तुम्हें उस समय भी चोट पहुँचती है जब तुम्हारी तुलना ऐसे छात्र से की जाती है जो तुमसे अधिक बुद्धिमान है, है ना ? हो सकता है कि तुम्हारे माता-पिता सदा तुमसे यह पूछें कि तुम्हें अपने सहपाठी के समान अंक क्यों नहीं मिलते। यह बड़े दुख की बात है कि वह यह नहीं सोचते कि इस प्रकार की बातों से तुम्हें कितनी ठेस पहुँचती है। वह यह सोचते है कि इस प्रकार की बातों से तुम अपने आपको सुधारोगे। परंतु ऐसा नहीं होता और धीरे-धीरे तुम्हारी और तुम्हारे मित्र की मित्रता में दरार पड़ जाती है। इसी तरह कक्षाओं में भी शिक्षक छात्रों की एक दूसरे से तुलना करते हैं और उनको उत्तम, मध्यम आदि की श्रेणियों में रख देते हैं। तुमने देखा होगा कि यही कारण है कि जब परीक्षाफल तैयार किया जाता है तो तुम अपने प्रमाण-पत्र छिपाने की कोशिश करते हो और जब तक इन परीक्षाओं में तुम्हें बहुत अच्छे अंक नहीं मिलते तब तक तुम अपना परीक्षाफल किसी को दिखाना नहीं चाहते हो।

तुम उसे छिपाना चाहते हो, यहाँ तक कि अपने माता-पिता को उसे दिखाने से डरते हो। इससे जो बात स्पष्ट होती है वह यह है कि तुम अपने मन को और अधिक ठेस नहीं पहुँचवाना चाहते और कक्षा में अपनी प्रतिष्ठा बनाए रखने का हर संभव प्रयत्न करते हो। हम सदा यह चाहते हैं कि हम दूसरों की दृष्टि से गिरें नहीं और सदा इस प्रयत्न में रहते हैं कि दूसरे हमें सदा उच्च दृष्टि से देखें। केवल अपने निकटतम मित्रों के साथ ही हम अपने वास्तविक स्वरूप में रहते हैं और यही कारण है कि कक्षा में गलत उत्तर देने पर यदि तुम्हारे सहपाठी हंस पड़ें तो तुम्हें बड़ी ठेस लगती है। अगर तुममें ठीक से सोचने की शक्ति नहीं है तो तुम अपनी भावनाओं को अंदर ही अंदर दबा लोगे और शायद बिना किसी से कहे उस छात्र से बदला लेने का प्रयत्न भी करोगे जो तुम्हें अच्छा नहीं लगता। एक ठेस कई दुखों को जन्म देती है।

स्कूल में एक दूसरे को चिढ़ाने में कई बार गंभीर झगड़े पैदा हो जाते हैं। तुम आपस में एक दूसरे को तरह-तरह के नामों से बुलाते हो जैसे मोटू, लम्बू, ट्यूब लाइट, गोलगप्पा, रोनी सूरत आदि, है ना ? साधारण रूप से यदि तुम्हें कोई इन नामों से बुलाए तो तुम्हें बुरा नहीं लगता परंतु यदि तुम्हारा मन खराब हो और तुम्हारा मित्र यह नहीं देखता और तुम्हें चिढ़ाता है तो उस समय हाथापाई की नौबत आ सकती है। हो सकता है कि शायद उस दिन सुबह तुम्हारी माँ ने तुम्हें डाँटा था अन्यथा तुम किसी बात को लेकर चिंतित थे और यह मित्र बराबर तुम्हे चिढ़ाता रहा। जब तुम्हारा गुस्सा हद से बाहर हो गया तो तुमने उसे पीट दिया। यह बुरी बात है लेकिन प्रायः ऐसा होता है। अगली बार अपने मित्र के स्वभाव के प्रति संवेदनशील रहो ताकि तुम उसे इतना न चिढ़ाओ कि उसे किसी प्रकार की ठेस पहुँचे। हमारा आपसी मजाक इस प्रकार का होना चाहिए कि जो किसी और को दुख में न डाल दे। क्या तुमने चार्ली चैपलिन, लारेल हार्डी अथवा जानी वाकर के चलचित्र देखे हैं। उनमें कई स्थान ऐसे आते हैं जो लोगों को हंसी से लोट-पोट कर सकते हैं परंतु तुमने शायद इस बात पर भी ध्यान दिया हो कि जैसे ही उस मज़ाक से किसी को ठेस लगती दिखाई देती है हमारी हंसी बंद हो जाती है, सारे दर्शक चुप हो जाते हैं और हमारी सहानुभूति उस व्यक्ति के साथ हो जाती है जिसको ठेस पहुँची है।

इसी तरह कुछ स्कूलों में जहाँ लड़के लड़कियाँ साथ-साथ पढ़ते हैं, लड़के तथा लड़कियाँ आपस में एक दूसरे को चिढ़ाते हैं या फिर किसी लड़की को लड़कों से बातें करता

हुआ देख अन्य लड़कियाँ उसे चिढ़ाती हैं। ऐसा क्यों होता है? क्या लड़के लड़कियाँ आपस में बातचीत नहीं कर सकते? क्या वह साथ मिलकर पढ़ और खेल नहीं सकते? यह दुर्भाग्य की बात है कि कभी-कभी इसमें बड़ों की गलती होती है। शिक्षक और माता-पिता यह सोचते हैं कि लड़के और लड़कियों को अलग-अलग खानों में रहकर पढ़ना चाहिए और जब तुम थोड़े बड़े हो जाते हो तो वे तुम्हें चेतावनी देना प्रारंभ करते हैं और स्कूल में एक बड़ा अजीब वातावरण बन जाता है। एक छोटी-सी छेड़खानी के रूप में प्रारंभ होकर मामला इतना गंभीर बन जाता है कि छेड़े जाने वाले व्यक्ति को बड़ी ठेस लगती है। परिणाम यह होता है कि लड़कों तथा लड़कियों के आपसी संबंध बड़े अस्वाभाविक हो जाते हैं तथा लड़के और लड़कियाँ अलग-अलग गुट बना लेते हैं। इस प्रकार की परिस्थिति को हम कैसे सुलझाएँ?

क्या तुम बता सकते हो कि कौन-सी ऐसी अन्य बातें हैं जिनसे तुम्हें ठेस पहुँचती है? हमने कई उदाहरण लिए हैं जैसे शिक्षकों की डाँट, सहपाठियों का व्यवहार, तुलना करना, लड़के और लड़कियों का आपस में चिढ़ाने के कारण उनके संबंधों में पैदा हुई अस्वाभाविकता आदि। तुम और कई कारण सोच सकते हो और बता सकते हो कि तुम्हारी अवस्था में ऐसी कौन-सी अन्य वस्तुएँ हैं जो ठेस पहुँचाती हैं। कुछ और परिस्थितियों के विषय में सोचो और अपने शिक्षकों के साथ उस पर चर्चा करो।

अगला जो प्रश्न उठता है, वह यह कि किस प्रकार हम अपने आपको ठेस लगने से बचाएँ क्योंकि हमने देखा कि इसका परिणाम क्या होता है? कभी-कभी हम अपनी शारीरिक चोट की इतनी चिंता नहीं करते जितनी कि मानसिक चोट की। जब तुम्हारी किसी से तुलना की जाए या चिढ़ाया जाए तो तुम पर उसका क्या प्रभाव पड़ता है? वह हमारे दिमाग पर हावी हो जाता है और वही शब्द बार-बार दिमाग में घूमते हैं, तुम या तो अपने आपको अपने अंदर बंद कर लेते हो और तुम्हारी किसी भी वस्तु में रुचि नहीं रह जाती अथवा तुममें बदले की भावना आ जाती है। यदि तुम अपने आप को देखने का प्रयत्न करो तो पाओगे कि यदि तुम्हें किसी ने ठेस पहुँचाई हो तो यह सारी बातें तुम्हारे मन के अंदर जन्म लेंगी। वास्तविकता तो यह है कि ठेस तो हर मनुष्य को पहुँचती है फिर चाहे वह युवा हो या वृद्ध, बड़ों के व्यवहार भी इसी प्रकार के होते हैं और चूंकि अन्य लोगों को बदला नहीं जा सकता, हमें अपने मन की ठेस को स्वयं समझना होगा, ठेस पहुँचने का क्या कारण है? किस प्रकार वह हमारे मन को प्रभावित करती है और हमें और अधिक ठेस पहुँचती है। यह भी देखना होगा

कि क्या यह संभव है कि हमारे मन को ठेस पहुँचे ही नहीं ? उसके लिए एक ऐसे मस्तिष्क की आवश्यकता है जो सदा जागरूक हो।

इसलिए बचपन से ही हम यह सीख सकते हैं कि कैसे अपने आपको इस ठेस से बचाएँ।

चुनौती का सामना करना

15

यह एक छोटी-सी लड़की के निश्चय की सच्ची कहानी है। जब सरस्वती बारहवीं कक्षा में थी तब अचानक उसके पिता की मृत्यु हो गई थी। वे एक दुकान मे काम करते थे। उस समय उसका भाई लक्ष्मण आठवीं कक्षा में था। परिवार पर मानो दुखों का पहाड़ टूट पड़ा। उसकी माँ जड़-सी बन गई थी। ऐसे लगा कि उनका जीवन एकदम रुक गया हो क्योंकि परिवार में वे एकमात्र कमाऊ व्यक्ति थे। सरस्वती ने अनुभव किया कि उसे ही कुछ करना होगा। उसने निश्चय कर लिया और वह नौकरी ढूंढने लगी चाहे फिर वह किसी भी प्रकार की नौकरी क्यों न हो। अपनी प्रधानाध्यापिका की सहायता से उसे एक महिला के घर आया की नौकरी मिल गई। चूंकि उसका स्कूल सुबह साढ़े छः से प्रारंभ होकर बारह बजे तक रहता था वह साढ़े बारह तक काम पर पहुँच जाती थी। उसकी मालकिन यह जानते हुए कि वह पढ़ती है उससे दयापूर्ण व्यवहार करती थी। सरस्वती बड़े प्यार से बच्चे की देखभाल करती थी और थोड़े ही दिनों में वह उनसे इतना हिल गई कि परिवार का एक सदस्य मानी जाने लगी। उसका व्यवहार बड़ा मृदु था। घर के काम वह बड़े ध्यान और सावधानी से करती थी। उसे बहुत कम तनख्वाह मिलती थी पर उसकी माँ भी अचार और पापड़ बनाकर बेचती थी जिससे उन्हें कुछ और आमदनी हो जाती थी। उसी शहर में वे एक छोटे घर में रहने लगे। उस घर में एक कमरा था और पानी की कोई व्यवस्था न थी।उन्होने कठिनाइयों का सामना बड़े धैर्य से किया। सरस्वती रात को जब नौ बजे लौटती तो बिलकुल थकी हुई होती। उसकी माँ उसके आने की राह देखती रहती। फिर दोनों मिलकर खाना खाते। खाते समय सरस्वती अपनी माँ को पूरे दिन की बातें बताती। उसके बाद वह अपने स्कूल का काम करती और फिर अपनी आगामी परीक्षाओं की तैयारी में जुट जाती। यह बहुत कठिन काम था पर न जाने कहाँ से उसको शक्ति मिलती थी। उसका भाई आठवीं कक्षा में ठीक से पढ़ रहा था। वह अपनी बहन के कामों की तरफ ध्यान तो नहीं देता था परन्तु वह किसी भी रूप में उनके लिए

समस्या नहीं था। उलटे वह घर के कामों की दौड़ धूप में तथा पापड़ और अचार को बेचने में अपनी माँ की सहायता करता था।

जल्दी ही सरस्वती ने अच्छे अंक प्राप्त कर बारहवीं की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली और अपनी मालकिन की सहायता से उसे टेलीफोन ऑपरेटर की नौकरी मिल गई। उसके दुर्दिन अब समाप्त हो रहे थे और उसे अब कई घंटों की कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी और नई बातें सीखनी पड़ती थी। जल्दी ही वह इतनी कुशल, ईमानदार और अच्छी सिद्ध हुई कि हर कोई उसे चाहता था। दो तीन साल के अंदर उसने प्राइवेट रूप से बी.ए. की परीक्षा भी बड़ी सफलता से उत्तीर्ण कर ली। अब वह एक स्नातक थी।

सदा से ही उत्साही, उसने अपने मुहल्ले और गरीबों की आवश्यकता पर ध्यान देना प्रारंभ कर दिया। समय मिलने पर वह अंध विद्यालय जाती थी और उन्हें पढ़कर सुनाती। उसने समाज में हो रहे अन्याय, कुरीतियों तथा नागरिकों के व्यवहार पर लेख लिखे और समाचार पत्रों में छापने के लिए भेजे। उसका जीवन पूर्णता लिए हुए था। इसी बीच वह चुपचाप एम.ए. की तैयारी भी कर रही थी।

ठीक इसी समय सरस्वती को एक नई समस्या का सामना करना पड़ा। लक्ष्मण ने अपनी बारहवीं की परीक्षा 72% अंकों से उत्तीर्ण कर ली थी। सरस्वती और उसकी माँ दोनों ही प्रसन्न थे किंतु अब आगे की पढ़ाई को लेकर उसे चिंता थी। लक्ष्मण तो विज्ञान के महाविद्यालय में दाखिला लेकर बी.एससी. करना चाहता था किंतु अपने चारों ओर के अनेक स्नातकों को बेरोजगार देखकर उसे लगा कि उसे कोई ऐसा रास्ता चुनना चाहिए जिससे लक्ष्मण को नौकरी मिल सके। उसने अपने मित्रों से सलाह ली और उन्होंने उसे सुझाया कि उसके लिए उचित यही होगा कि वह शहर की पॉलिटेकनिक संस्था में प्रवेश ले ले। सरस्वती एक बार उस संस्था को देखने गई और उसी समय उसने निर्णय ले लिया कि यही लक्ष्मण के लिए उचित स्थान था। वहाँ तीन वर्षों के बाद एक डिप्लोमा दिया जाता था परंतु अंत में यांत्रिक तथा विद्युत कारखानों में प्रायोगिक प्रशिक्षण दिया जाता था। लक्ष्मण को विश्वास दिलाना बड़ा कठिन था क्योंकि अन्य कई व्यक्तियों के समान वह भी यही सोचता था कि कालेज की उपाधि कहीं अधिक श्रेष्ठ है और उसके सारे मित्र कालेज में प्रवेश ले रहे थे। परंतु सरस्वती के मनाने का एक अपना ढंग था। वह अपने निश्चय पर अटल रही। उसने लक्ष्मण से आग्रह किया कि वह एक बार स्वयं उस स्थान पर जाए। वहाँ जाकर देखने पर

लक्ष्मण ने भी प्रवेश लेना स्वीकार कर लिया क्योंकि उसे मशीनों से काम करना बहुत अच्छा लगता था। चूंकि उसे बहुत अच्छे अंक मिले थे, इसी कारण उसे प्रवेश के साथ छात्रवृत्ति भी मिली। सरस्वती फूली न समाती थी।

एक ही साल में लक्ष्मण ने अनुभव किया कि उसने सही चुनाव किया था क्योंकि वहाँ उसने तरह-तरह की कुशलता प्राप्त की और पाठ्यक्रम के समाप्त होते ही उसे एक ऐसी फर्म में शिक्षार्थी के रूप में ले लिया गया जो मशीन के पुर्जे बनाती थी। वह बड़ा अच्छा मैकेनिक था और उसकी काफी पूछ थी। हमारे देश को मैकेनिक, फिटर, बिजली मिस्तरी जैसे लोगों की बहुत आवश्यकता है। हमें यह याद रखना चाहिए कि मेज़ कुर्सी पर बैठकर काम करने वाले उन व्यक्तियों से किसी भी बात में श्रेष्ठ नहीं होते जो हाथों से काम करते हैं।

सरस्वती ने भविष्य के और सपने संजोए थे। उसे आशा थी कि भविष्य में वह अपनी स्वयं की एक छोटी-सी दुकान खोल सकेगी। क्योंकि वह जानती थी कि सरकार उन उद्यमशील, उत्साही नौजवानों को कर्ज दे रही है जो अपना छोटा उद्योग प्रारंभ करना चाहते थे। उसने निश्चय कर लिया कि वह उसकी अवश्य सहायता करेगी।

इस बीच वह अपने जीवन से संतुष्ट थी। उसका जीवन उसके टेलीफोन ऑपरेटर की नौकरी को लेकर, समाज सेवा को लेकर, अपने भाई की नौकरी तथा घर में आती अतिरिक्त आय को लेकर संतुष्ट था। अब वे थोड़े बड़े घर में रहने लगे। उसकी माँ शरीर से कमजोर थी पर उसका दिल कमजोर न था। उसने पापड़ तथा अचार बनाकर बेचना बंद कर दिया पर वह अपने परिचितों के लिए बनाती और अपने बच्चों के लिए खाना बनाना तो उसे बहुत अच्छा लगता था। वह भी अपनी माँ के हाथ से बने खाने की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा करते। माँ के हाथ से बने खाने के सामने उनको हर वस्तु फीकी लगती थी।

क्या यह सच नहीं है कि जब हम स्कूल में होते हैं तो यही चाहते हैं कि कालेज जाएं, उपाधि प्राप्त करें और फिर नौकरी ढूंढें। क्या यह भी सच नहीं है कि वास्तव में विश्वविद्यालय की उपाधियाँ हमें किसी खास काम के लिए तैयार नहीं करतीं। यह एक आम विचार है कि बढ़ई या मोटर के पुर्जे के मैकेनिक होने की अपेक्षा किसी बैंक में क्लर्क होना अच्छा है। लेकिन क्या तुम्हें नहीं लगता कि यह बिलकुल बेतुकी बात है ?

हर समाज को अलग-अलग प्रकार के कार्य करने वाले नागरिकों की आवश्यकता होती है और यदि तुम हाथ के कार्यों में कुशल हो तो तुम निस्संदेह एक अच्छे बढ़ई होने का

अथवा बागवानी का प्रशिक्षण ले सकते हो। इस प्रकार के व्यवहारिक प्रशिक्षण के लिए कई संस्थाएँ हैं। जब तुम बारहवीं या दसवीं की परीक्षा उत्तीर्ण कर लो तब यह बात तुम्हें ध्यान रहे क्योंकि फिर तुम्हें अपने लिए उपयुक्त पेशा चुनना होगा।

अदिति के मन को चिंतित करने वाले प्रश्न

अदिति सरकारी पाठशाला में आठवीं कक्षा की एक मेधावी छात्रा थी। उसके मन में देश तथा विदेश में होने वाली अनेक घटनाओं को लेकर तरह-तरह के सवाल उठते थे। उसके पिता उससे रोज अखबार पढ़ने के लिए कहते। पहले तो वह ऐसा करने में हिचकिचाती रही क्योंकि उसका विचार था कि अखबार स्कूल के बच्चों के लिए नहीं बल्कि बड़ों के लिए होते हैं, परंतु उसके पिता उससे बार-बार कहते रहे। धीरे-धीरे अखबार पढ़ना उसकी आदत बन गई। वह बड़ी उत्सुकता से अखबार की प्रतीक्षा करती और स्कूल जाने से पहले उन पर एक सरसरी निगाह अवश्य डाल लेती। जैसे-जैसे उसकी इस ओर रुचि बढ़ती गई वैसे-वैसे उसके मन में संसार में होने वाली कई घटनाओं को लेकर तरह-तरह के प्रश्न उठने लगे।

अखबार पढ़ते रहने के कारण उसने यह देखा कि प्रतिदिन किसी दुर्घटना, चोरी, डकैती या हत्या की खबर अवश्य छपती है। यह कोई कहानी नहीं बल्कि वास्तविकता थी। शायद ही कोई ऐसा दिन बीतता जब इस देश में या फिर संसार के अन्य किसी भाग मे इस प्रकार की खबर न छपती हो। विमान का अपहरण, बैंक का लूटा जाना, रेल दुर्घटना, किसी का खून ये सब तो रोज की खबरें थीं। वह सोचती कि यह संसार कितना निर्दयी है। उसके मन में विचार उठता कि संसार में इतनी हिंसा क्यों है और अखबार इस प्रकार की खबरों को इतना महत्व क्यों देते हैं? कभी-कभी तो यही अखबारों की प्रमुख खबरें होतीं। यह सब देखकर वह बड़ी दुखी होती।

फिर उसने धीरे-धीरे विभिन्न राष्ट्रों के आपसी संबंधों के विषय में जानना प्रारंभ किया और शीघ्र ही वह जान गई कि रूस और अमरीका अति शक्तिशाली राष्ट्र कहलाते हैं क्योंकि उन्होंने बहुत प्रगति की है, वे धनी तथा शक्तिशाली हैं। उसने देखा कि एक ओर तो वह शांति की बात करते हैं तो दूसरी ओर वे अत्याधुनिक शस्त्र जमा कर रहे हैं। दोनों ही शक्तियों के पास आण्विक अस्त्र हैं और यदि एक भी अणु बम का प्रयोग किया गया तो

धरती का एक भाग पूर्ण रूप से मिट जाएगा और करोड़ों मासूमों की जानें चली जाएँगी। यह सोचकर वह भय से कांप उठती, इसी कारण वे देश शक्तिशाली कहलाते हैं। फिर उसने यहूदियों और अरबों के बीच, ईरान और इराक के बीच हो रहे झगड़ों के बारे में पढ़ा। पड़ोसी देश जैसे अफगानिस्तान, पाकिस्तान, बंगला देश, श्रीलंका, यही नहीं भारत के अंदर भी तनाव की स्थिति थी। उसे पूरी बातें तो समझ में नहीं आती थीं पर जब भी कोई गंभीर विषय पर समाचार छपता वह उसके विषय में प्रश्न अवश्य पूछती। एक बार तो उसने यह भी निश्चय कर लिया कि वह किसी अच्छे विश्वविद्यालय में राजनीतिशास्त्र का अध्ययन करेगी ताकि उसे विश्व के राष्ट्रों की कूटनीति का ज्ञान मिल सके।

किंतु एक दिन उसका ध्यान एक ऐसे समाचार की ओर गया जिसने उसके मन को एक अन्य समस्या के बारे में सोचने पर मजबूर किया। उसने अखबार में पर्याप्त दहेज न लाने के कारण एक नवविवाहिता को उसके पति और परिवार के अन्य सदस्यों द्वारा जलाए जाने की खबर पढ़ी। इस लड़की के पिता ने उसे दहेज में बहुत पैसा तथा साथ में कई घरेलू वस्तुएँ भी दी थीं परंतु वह अपने साथ स्कूटर तथा रेफ्रिजिरेटर नहीं लाई थी और इसी बात को लेकर उसे रोज तंग किया जाता था। पति ने तो आत्महत्या की रिपोर्ट लिखवाई थी परंतु पड़ोसी अपनी बात पर अड़े रहे कि यह हत्या का मामला था। उसके पति के खिलाफ पुलिस केस दर्ज किया गया था। अदिति को इस बात पर विश्वास ही नहीं हुआ कि छोटी लड़कियों के साथ भी इस प्रकार का व्यवहार किया जा सकता है। उसने अपनी माँ तथा अध्यापिकाओं से इस विषय में बात की। इस दहेज प्रथा ने समाज में कुरीति का रूप किस प्रकार धारण किया ? उसने क्रोध में भरकर पूछा कि लड़कियों को लड़कों की अपेक्षा नीचा क्यों माना जाता है ? लड़कों को शादी के लिए पैसों का लालच देने की क्या आवश्यकता है ? सरकार इस प्रकार की प्रथा के ऊपर क्यों नहीं रोक लगाती ? उसे यह मालूम हुआ कि दहेज लेने तथा देने के विरुद्ध कानून तो लागू कर दिया गया है परंतु लोग चोरी छिपे दहेज लेते देते हैं। उसने यह भी पता लगाया कि कई महिला संस्थाएँ इस प्रथा के विरुद्ध लड़ रही हैं और लोगों में इस ओर जागृति लाने का प्रयत्न कर रही हैं। उसने एक महिला संस्था का विज्ञापन देखा जो समाज सेवा के लिए चंदे की अपील कर रही थी। यह पढ़कर अदिति का मन बहुत प्रभावित हुआ। उसने अपने गुल्लक से पंद्रह रुपए निकाले। उन्हें लेकर वह डाकघर गई और उस संस्था के अध्यक्ष के नाम मनीआर्डर कर दिया। ऐसा करने के बाद उसके मन को बहुत

अच्छा लगा। यह सच है, है ना, हम जब कुछ करते हैं, हम तभी अपने अंदर से उसके प्रति महसूस करते हैं ? क्या तुम अपने जीवन के उन क्षणों के बारे में बता सकते हो जब किसी बात से बहुत प्रभावित होकर तुमने कार्य किया हो ?

इसके बाद अदिति ने लड़कियों तथा औरतों के विषय में सूचनाएँ इकट्ठी करनी शुरू कर दीं। यह खबरें वह अखबारों, पत्रिकाओं तथा अपने रिश्तेदारों से प्राप्त करती। उसने पाया कि स्कूल जाने वालों में लड़कियों की संख्या लड़कों से बहुत कम थी। यह बात गांवों में खासकर दिखाई देती है। आज भी बहुत से लोग लड़कों को एक वरदान तथा लड़कियों को बोझ समझते हैं। लड़कियाँ पाँच साल की उम्र से ही अपनी माँ के साथ खेतों में काम पर जाती हैं, जंगल में लकड़ियाँ बीनती हैं, झाड़ू पोछा करती हैं, और अपने छोटे भाई बहनों की देखभाल करती हैं। यही कारण है कि वे स्कूल नहीं जा पातीं। यदि कुछ महीनों के लिए जाती भी हैं तो घर के कामों के कारण बीच में जाना छोड़ देती हैं। उनकी माताओं को भी पिता के साथ खेत में काम करना पड़ता है। हमारे अधिकतर निर्धन किसानों का यही जीवन है। अदिति के सामने सवाल था कि क्या हर लड़की को पढ़ाई का अधिकार नहीं ? यह अधिकार उसे किस प्रकार दिया जा सकता है ?

एक बार वह अपनी मौसी के साथ एक सभा में गई। इस तरह की बातों में उसकी दिलचस्पी थी। उसने पाया कि वहाँ समाज में महिलाओं के स्थान को लेकर चर्चा चल रही थी। हर क्षेत्र में उन्नति करने के बाद भी, यहाँ तक कि प्रधानमंत्री के पद पर पहुँचने के बाद भी, साधारणतया घर के प्रश्नों, बच्चों की पढ़ाई, उनके भविष्य तथा समाज में भी उनके निर्णयों को इतना महत्व नहीं दिया जाता। कारखानों में महिला मजदूरों को पुरुषों की अपेक्षा कम वेतन दिया जाता है हालांकि वह भी पुरुषों के जैसे काम करती हैं। उस सभा में महिलाओं पर किए जाने वाले कई अन्यायों पर प्रकाश डाला गया।

अदिति इन विचारों में इतना डूब गई थी कि उसकी माँ को यह याद दिलाना पड़ा कि वह अभी भी स्कूल में है और उसे पहले अपनी पढ़ाई पूरी करनी है। इसके बाद ही वह समाज सेवा में सक्रिय रूप से भाग ले सकती है। उसकी माँ ने उसे समझाया, "इस समय का सदुपयोग कर अपने आप को तैयार करो। इन विषयों की अच्छी तरह जानकारी प्राप्त करने पर समय आने पर तुम अपनी जिम्मेदारी अच्छी तरह से निभा सकती हो।"

क्या तुम्हारे मन में विश्व में अथवा अपने चारों ओर हो रही किसी घटना को देखकर

तीखी प्रतिक्रिया मन में उठती है? सामाजिक अन्याय, गरीबी, अज्ञानता, बीमारी, संसार के देशों के गरीब बच्चों में पौष्टिक आहार की कमी, आदिवासियों की आवश्यकता और स्त्रियों की स्थिति के बारे में जानकारी एकत्र करो और इनसे संबंधित प्रश्नों से अपने आप को जागरूक बनाए रखो।

मोहन के पिता एक व्यापारी जहाज में काम करते थे। वे महीने में बीस दिन या कभी- कभी दो तीन महीने जहाज में रहते। यह जहाज माल लादकर एक देश से दूसरे देश जाया करता था। श्री सिंह को अपनी नौकरी अच्छी लगती थी। बचपन से ही वह एक नाविक बनना चाहते थे और जब से उन्होंने मार्को पोलो, वास्को दि गामा तथा अन्य महान अन्वेषकों की कहानी पढ़ी थी तब से समुद्र में रहने की उनकी रुचि और बढ़ गई थी। लेकिन अब उम्र के अधिक होने के कारण उन्हें परिवार से अलग रहने पर दुःख होता था।

उनके परिवार में उनका बेटा मोहन, बेटी उषा और उनकी पत्नी इरावती थे। वह नियमित रूप से उनको पत्र लिखा करते थे। उनका लड़का कई बातों में उन्हीं के समान था। वह साहसी, चंचल प्रकृति का उत्साही और नटखट था। वह बुद्धिमान था परंतु उसे सही मार्गदर्शन की जरूरत थी इसलिए उसके पिताजी ने नियमित रूप से उसे पत्र लिखना प्रारंभ किया। इस पत्र में उन्होंने मोहन के इस प्रश्न का उत्तर दिया था कि "अधिक पैसा कमाने के लिए यदि काम किया जाए तो उसमें क्या खराबी है? अमीर आदमी आराम से रहते हैं और उन्हें किसी प्रकार की तकलीफ नहीं होती। पापा न जाने कुछ लोग ऐसा क्यों कहते हैं कि पैसा ही बुराइयों की जड़ है? पैसे होने में क्या खराबी है?" मोहन ने अपने मित्र ताहिर के साथ इस विषय पर चर्चा कर एक प्रभावशाली पत्र लिखा था और दोनों ही अपने प्रश्नों के उत्तर के लिए मोहन के पिता के पत्र की प्रतीक्षा कर रहे थे। मोहन के पिता ने पत्र का जवाब दिया। पत्र इस प्रकार था,

मेरे प्रिय मोहन,

जहाज के साउथांगटन पहुँचने पर जब तुम्हारा पत्र मिला तो प्रसन्नता की सीमा न रही। मैंने तुम्हारा पत्र बार-बार पढ़ा। मैं यह जानकर अत्यंत प्रसन्न हूँ कि मेरा नन्हा बेटा और ताहिर इस प्रकार के महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा कर रहे हैं और कई महत्वपूर्ण

प्रश्न उठा रहे हैं। मैं तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर देने का प्रयत्न करूँगा कि अधिक से अधिक पैसे की खोज में जाने में क्या खराबी है। यह ठीक है या गलत है, के सिद्धांत से अपनी बात प्रारंभ नहीं करेंगे। सबसे पहले तो चलो हम इसकी छान बीन करें, इस पर प्रश्न करें।

मनुष्य को धन की आवश्यकता क्यों पड़ती है ? उत्तर तो स्पष्ट है। मनुष्य को जीवित रहने के लिए धन की आवश्यकता होती है। उसे धूप और वर्षा से बचने के लिए एक आश्रय की जरूरत होती है क्योंकि वह सड़कों पर नहीं रह सकता। उसे भोजन चाहिए और भोजन प्राप्त करने के लिए पैसों की आवश्यकता होती है अन्यथा वह भूखों मर जाएगा। उसे उचित तथा आरामदायक कपड़ों की आवश्यकता होती है। अगर उसका परिवार है तो उसे अपने बच्चों को शिक्षा देने, उनके लिए किताब , कापियाँ खरीदने के लिए धन की आवश्यकता होती है। अगर उसे अपने माता-पिता की भी देखभाल करनी हो तो उसे कुछ और अधिक धन की आवश्यकता होती है ताकि उन्हें वह आराम से रख सके। आज के युग में चारों ओर का वातावरण दूषित हो रहा है, कई नई-नई बीमारियाँ जन्म ले रही हैं। लोग बीमार हो जाते हैं और हमें डाक्टर तथा दवाइयों के लिए पैसों की आवश्यकता होती है। एक ही शहर में एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने या एक शहर से दूसरे शहर में जाने के लिए भी पैसों की आवश्यकता होती है। मनुष्य को मनोरंजन की भी आवश्यकता पड़ती है और वह सिनेमा जाने के लिए अथवा रेडियो खरीदने के लिए भी धन का प्रयोग करता है। यह सारी उसकी दैनिक आवश्यकताएँ हैं जैसे भोजन, कपड़े, घर, दवाई, मनोरंजन आदि। एक क्लर्क, कारखाने का कर्मचारी या अन्य कोई मामूली कर्मचारी का वेतन अपेक्षाकृत कम होता है परंतु वह उसका उपयोग सोच समझकर करता है और उसी में संतुष्ट रहता है।

कठिनाई तो उस समय प्रारंभ होती है, जब वह अपनी तुलना उन लोगों से करता है जिनके पास उसकी अपेक्षा बड़ा घर है, बेहतर खाना है, अधिक महंगे कपड़े हैं, बड़ी मोटरें तथा घर और बाहर तरह-तरह के मनोरंजन की वस्तुएँ हैं। यह सच है कि आप लोगों के पास अर्थहीन मनोरंजन अथवा सुविधा के लिए पैसे नहीं होंगे। यह भी सच है कि ऐसे व्यक्ति दूसरों से ईर्ष्या करते हैं। यहाँ आरंभ होती है आपस में होड़ और वे सोचने लगते हैं कि कितना अच्छा होता यदि उनके बच्चों के पास अत्याधुनिक टेलीविजन सेट होता, नए-नए खिलौने होते आदि आदि। इस प्रकार की आवश्यकताओं की सूची जितनी अधिक लंबी होती है, मन में अपने कार्य के प्रति उतना ही अधिक असंतोष भी बढ़ता जाता है। जीवन की

छोटी-छोटी वस्तुएँ उन्हें प्रसन्नता नहीं दे पाती हैं। उनके सामने मैनेजर और बड़े आदमी बनने का भूत सवार हो जाता है। उनके सामने केवल एक धुन रहती है कि वह सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ें क्योंकि उन्हें लगता है कि उन्हें जितनी अधिक सफलता मिलेगी उतने ही अधिक पैसे भी प्राप्त होंगे और उसके साथ उन्हें पद, ख्याति सभी प्राप्त होंगी। समाज में प्रतिस्पर्धा की भावना इसी तरह पनपती है, जब हर व्यक्ति दूसरे को नीचा दिखाना चाहता है। अपनी मनचाही वस्तुएँ पाकर वह बहुत प्रसन्न हो जाते हैं। जब उन्हें सफलता नहीं मिलती तो वे बड़े निराश और उदास हो जाते हैं। अधिक से अधिक पाने की इस इच्छा की कोई सीमा नहीं क्योंकि मनुष्य नित नई वस्तुओं का आविष्कार कर रहा है जैसे बेहतर मोटरें, बढ़िया रेफ्रिजरेटर, बढ़िया मशीनें, अधिक अच्छी सुविधाएँ और मनोरंजन के अन्य साधन। मनुष्य आगे भी इस प्रकार की नई वस्तुएँ बनाता रहेगा, इसलिए अधिक पाने की इस इच्छा का कहीं अंत नहीं। क्या तुम इस बात को समझ रहे हो ?

इसलिए चलो हम उस गरीब क्लर्क का उदाहरण लें। जब उसने नौकरी प्रारंभ की तो वह कम पैसों में ही संतुष्ट था। शायद वह धन बचाना चाहता था। वह अपने माता-पिता की देख भाल करता और अपने आसपास के लोगों को प्रसन्न रखता था। कभी-कभी वह छोटे-मोटे उपहार भी लाता था। क्योंकि उस समय वस्तुओं से अधिक व्यक्तियों का स्थान महत्त्वपूर्ण था। शाम को फुरसत मिलने पर वे बगीचे में घूमने जाते। वे आपस में हंसी मजाक करते और एक दूसरे को कहानियाँ सुनाते। वे आकाश को देखते, वृक्ष और उड़ने वाली चिड़ियों को देखकर अपने आपको प्रकृति के बिलकुल निकट पाते। उनके पास काम के लिए समय था। अपने काम को लेकर भी उनके सामने कोई कठिनाई नहीं थी क्योंकि उनके दिमाग में मैनेजर होने का भूत सवार नहीं था। वे अपने काम को ध्यान और लगन से करते। शाम को उनके मन में संतोष होता। जब हम किसी कार्य को पूरा कर लेते हैं तो उस समय हमारे मन में कैसा अनुभव होता है, इसकी कल्पना करना सरल है।

धीरे-धीरे, जैसे-जैसे व्यक्ति पैसे के पीछे भागने लगा वैसे-वैसे उसके मन में क्रोध और लड़ाकूपन की भावना भी समा गई क्योंकि सीधे सादे व्यक्ति को मनचाही वस्तु नहीं मिलती। परिणाम यह हुआ कि उद्देश्य, पैसे के प्रति प्यार, पद का लोभ, पैसे के साथ जुड़ी अन्य वस्तुएँ ही उसके लिए महत्त्वपूर्ण हो गईं। लेकिन आश्चर्य की बात यह थी कि पैसे के आने के साथ सुख के स्थान पर उसने देखा कि घर में असंतोष, लड़ाई झगड़े और संदेह का डेरा है।

उसकी पत्नी और वे जो कि पहले अच्छे मित्रों के समान थे, अब आपस में बहुत कम बातें करते थे। उसकी पत्नी शापिंग करने तथा सभाओं और पार्टियों में जाने में व्यस्त रहती। वह बच्चों की तरफ ध्यान न देती और बच्चों का लालन-पालन नौकरों के जिम्मे था। एक दूसरे के लिए प्रेम, चिंता आदि की भावना मिट सी गई थी। जीवन को एक सरल ढंग से प्रारंभ करना और उसके बाद प्रतिस्पर्धा तथा ईर्ष्या के कारण, नौकरी के लिए होड़, दूसरों के प्रति जरा भी ध्यान न देना, अधिक से अधिक धन और ऊँचे से ऊँचे पद को प्राप्त करना, नई से नई वस्तुओं को प्राप्त कर सुखी होने का ढोंग रचना और अंदर ही अंदर असंतोष का फैलना, क्या तुम इस प्रकार के जीवन को एक अच्छा जीवन कहोगे ? इस दृष्टि से क्या तुम्हें यह नहीं लगता कि पैसा एक शैतान का रूप है ? क्या यह बेवकूफी नहीं कि हम जरूरत से अधिक वस्तु की मांग करें? ताहिर के साथ इस विषय पर चर्चा कर अगले पत्र में अपने विचार लिखना। अपनी सेहत का ध्यान रखना और माँ तथा उषा की देखभाल करना।

प्यार सहित,
पापा

पैसे के संबंध में तुम्हारे क्या विचार हैं ? क्या तुमने अपने चारों ओर यह देखा है कि लोग किस तरह और अधिक पाने की इच्छा में लगे रहते हैं ? किसी नई वस्तु को पाने पर तुम कितना प्रसन्न होते हो और कुछ खोने पर कितना उदास ?

इन बातों पर ज़रा सोचो।

क्या विज्ञान पूर्ण रूप से वरदान है ? 18

बच्चू उत्तर भारत के पहाड़ी क्षेत्र में रहता था जहाँ स्वादिष्ट सेब, आलूबुखारा, खुबानी, नाशपाती आदि के बगीचे थे। उसके पिताजी एक फल के बगीचे में काम करते थे, उसकी माँ घर के काम करती, जलाने के लिए लकड़ियाँ जमा करती और खाना बनाती। वह और उसकी दो बहनें स्कूल जाते। उसका छोटा भाई केवल दो साल का था इसलिए स्कूल नहीं जा पाता था। बच्चू के दादा-दादी भी उन्हीं के साथ रहते थे। उसकी विधवा बुआ मुन्नी भी उन्हीं के साथ रहती थी। मुन्नी के पति युद्ध में मारे गए थे। बहुत अमीर न होते हुए भी वे सुखी थे। उनके घर में नई-नई बिजली लगी थी और छोटा ट्रांजिस्टर भी था। वह ट्रांजिस्टर बंबई के एक व्यापारी ने बच्चू के पिता को दिया था क्योंकि उन्होंने एक बार उस व्यापारी के लिए बहुत काम किया था। पास के शहर के कालेज के एक विद्यार्थी ने उसे चलाने का ढंग बता दिया था। उस रेडियो की आवाज़ सुनकर उसके छोटे भाई की आँखें आश्चर्य से खुल जातीं और कान खड़े हो जाते।

बच्चू हाल में ही अपने चाचा के घर दो महीने बिताकर आया था। उसके चाचा करीब चालीस किलोमीटर की दूरी पर पास के ही शहर में रहते थे। बच्चू ने अपने घर से दूर रहकर कई नई बातें सीखीं थीं और वह सबको बताने के लिए बेचैन हो रहा था। उसकी माँ ने कई बार उसे बड़ी मुश्किल से चुप कराया था। वह तो ऐसा अनुभव कर रहा था मानो वह कोई एक नए संसार से होकर आया हो। उसके चाचा सेना में कप्तान थे और एक बड़े घर मे रहते थे। बच्चू जिस वस्तु को समझ न पाता उनकी तस्वीर बना देता। ऐसा ही एक चित्र रेफ्रिजरेटर का था। उसके परिवार वालों को यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि उसके चाचाजी के घर बिजली का एक ऐसा बक्सा है जो चीज़ों को ठंडी रखता है। वे कभी पहाड़ों को छोड़कर गए ही नहीं थे। उनके लिए यह बात बड़ी ही बेतुकी थी। फिर उसने एक बड़े रेडियो, रिकार्ड प्लेयर, बिजली का हीटर जो कि कमरे को गर्म रखता था, टेलीविजन जिससे किसी अन्य स्थान पर हो रही उस समय की घटनाओं को देखा जा सकता था, टेलीफोन

जिससे लंदन, न्यूयार्क, टोकियो जैसी दूर-दूर की जगहों से भी बातचीत हो सकती थी, के बारे में बताया। उसने हवाई जहाज को उड़ान भरते देखा था और जेट विमानों तथा अन्य कई युद्ध के शस्त्र देखे थे। वह बहुत ही उत्तेजित था। उसने कहा कि वह अच्छी तरह से विज्ञान पढ़कर कई नई चीजें बनाएगा और एक प्रसिद्ध आदमी बनेगा।

बरामदे में हाथ में हुक्का लिए बैठे हुए उसके दादाजी उसकी सारी बातें सुन रहे थे। बच्चू की बातें सुनकर कभी-कभी उनके चेहरे पर मुसकुराहट छा जाती और कभी उसकी बातें सुनकर वह कहीं खो से जाते। उन्होंने बच्चू से कहा, ''यह सच है कि विज्ञान ने कई आश्चर्यजनक वस्तुओं का आविष्कार किया है और जो इन वस्तुओं को खरीद सकते हैं, उनका जीवन काफी आरामदायक होता है किंतु मुझे यह बताओ कि क्या चाचा चाची और उनके बच्चे वास्तव में सुखी हैं। क्या वह शाम को इकट्ठा होकर गाना गाते हैं और एक दूसरे को कहानियाँ सुनाते हैं? क्या उनके कई मित्र हैं? उनका जीवन किस तरह का है?''

यह सुनकर बच्चू सोच में डूब गया किंतु उसने कहा कि चूंकि उनके घर में कई नई वस्तुएँ हैं वह अवश्य सुखी होंगे। पर वे इस बात को लेकर दुखी थे कि उनका चचेरा भाई मिंटू युद्ध में मारा गया था जो वायुसेना में था और उसकी चाची शोकातुर थी। यह सोचकर बच्चू के सोचने का ढंग बिलकुल बदल गया।

उसके दादा जी ने बच्चू से इस बात पर ध्यान देने को कहा कि जहाँ मनुष्यों ने आराम तथा मनोरंजन के लिए नई वस्तुओं की खोज की है, वहीं ऐसे अस्त्र-शस्त्र भी बनाए हैं जो लोगों के प्राण ले सकते हैं। ''युद्ध में कितने मासूम लोग मारे जाते हैं। क्या यह ठीक है कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य की जान ले और उसके लिए नए-नए शस्त्र ढूंढे? इस संसार में रहते हुए भी डर लगता है'' वे बुदबुदाए और उदास हो गए।

दादाजी की बात से एक चुप्पी-सी छा गई। उनकी आवाज़ की गहराई का प्रभाव पड़ा। बच्चू ने भी बड़े ध्यान से उनकी बातें सुनी। उसके दिमाग में भी उनकी बातें घुस रही थीं फिर भी उसके मन में उन नई वस्तुओं को लेकर एक खलबली-सी मची हुई थी जो उसने चाचा के घर देखी थी। उस समय वह विज्ञान के आविष्कारों के घातक परिणामों तथा युद्ध के बारे में सोच भी न पा रहा था किंतु बच्चू के मन के अंदर इसका बीज पड़ चुका था और बच्चू ने बाद में दादाजी से इसके बारे में पूछा। दादाजी के कुछ पुराने मित्र सेना में थे। दादाजी ने बच्चू को बताया कि किस तरह बहुमूल्य जानें चली जाती हैं, शहर के शहर नष्ट

हो जाते हैं और अनेक व्यक्ति बेघर हो जाते हैं। बच्चू बड़े ध्यान से उनकी बातें सुन रहा था। बच्चू के दादाजी का कहना बिलकुल ठीक था।

क्या तुमने दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान 1945 में अमरीका द्वारा हिरोशिमा तथा नागासाकी पर गिराए गए बमों के प्रभाव के विषय में पढ़ा है? कुछ क्षणों में यह दोनों शहर तहस-नहस हो गए। लाखों लोगों की मृत्यु हो गई और कई जीवन भर के लिए अपाहिज हो गए।

आज हमारे पास और अधिक खतरनाक आण्विक शस्त्र हैं। अगर संसार के किसी भाग में भी इनका प्रयोग किया जाए तो पृथ्वी पर जीना ही कठिन हो जाएगा क्योंकि मनुष्यों के जीवन के अतिरिक्त ये पेड़-पौधों, जानवरों, कीड़े-मकोड़ों को नष्ट कर देंगे। पृथ्वी का एक बहुत बड़ा भाग बंजर हो जाएगा, यहाँ जीवन नाम की वस्तु भी न होगी। क्या यह दुख की बात नहीं है कि मनुष्य अपने वैज्ञानिक ज्ञान का उपयोग विनाश के लिए कर रहा है?

परन्तु इसका एक उज्ज्वल पक्ष भी है। यह बात भी उतनी ही सच है कि विज्ञान के नए आविष्कार को देखकर ही अपनी आँखों पर विश्वास किया जा सकता है। क्या तुम यातायात, प्रौद्योगिकी, कृषि, चिकित्सा-शास्त्र आदि के क्षेत्र में हुए विज्ञान के आविष्कारों की एक सूची बना सकते हो? यह सच है कि विज्ञान ने मानव को बहुत दुख दिए है किंतु मनुष्य को कर्मठ वैज्ञानिकों के प्रयत्नों के कारण कई लाभ भी हुए हैं।

दूसरों के लिए उन्होंने कैसे तन्मयता, लगन और कठिन परिश्रम का जीवन बिताया, इस विषय पर पढ़ कर देखो। तब तुम्हारे लिए विज्ञान का अध्ययन एक अद्‌भुत अनुभव की वस्तु होगी और कई नए अध्ययन के क्षेत्र अपने आप खुल जाएंगे।

क्या तुमने कभी सोचा है कि तुम्हारे माता-पिता तुम्हारे लिए कितने परेशान तथा चिंतित हो उठते हैं? कुछ उदाहरण देखो।

फ़जल की माँ को उसके स्वास्थ्य की बड़ी चिंता थी। उसके स्कूल का समय बड़ा अटपटा था। सात बजे से एक बजे तक। स्कूल की बस को पकड़ने के लिए फ़जल को सुबह साढ़े छः बजे घर से निकलना पड़ता था। कभी-कभी बहुत कहने पर वह एक गिलास दूध पीता तो अन्य दिन कुछ खाए पिए बिना ही चला जाता था। बच्चों को दूध पिलवाना सबसे कठिन कार्य है लेकिन केवल दूध ही एक पूर्ण आहार है। फ़जल की माँ सुबह पाँच बजे के करीब उठकर उसके लिए परांठे अथवा सैंडविच बनाती और फिर प्यार से उसके लिए डिब्बे मे रख देती। कभी-कभी वह उसके लिए कुछ फल भी रख देती। किंतु अधिकांश दिन वे इस बात को लेकर निश्चित नहीं हो पाती थी कि वह छुट्टी में खाना खा लेता है। कभी-कभी कौए डिब्बे में से खाना ले उड़ते। खाने की छुट्टी के समय में स्कूल में कौओं का दल न जाने कहाँ से आ जाता क्योंकि उस समय बच्चे अपना-अपना खाना निकालते थे। कभी-कभी उसे चिढ़ाने के लिए लड़के उसका डिब्बा खाली कर फिर बस्ते में रख देते। इन सब का परिणाम यह होता कि उसे दो बजे तक कुछ न मिलता और घर पहुँचने तक भूख के मारे उसकी बुरी हालत हो जाती। फ़जल की माँ जानती थी कि यह उसके स्वास्थ्य के लिए अच्छा नहीं है। बड़े होते लड़के लड़कियों को नियमित समय पर पौष्टिक आहार करना चाहिए। इस उम्र में शरीर को प्रोटीन, कैलशियम तथा अन्य विटामिनों की आवश्यकता होती है। उसे इस बात को लेकर भी चिन्ता थी कि वह शारीरिक व्यायाम भी नहीं कर पाता था क्योकि स्कूल में खेल के मैदान थे ही नहीं। स्कूल शहर के एक व्यस्त इलाके में था। बड़े होते बच्चों के लिए सही खाना, व्यायाम तथा नींद बहुत ही आवश्यक है। उसकी माँ उसके स्वास्थ्य को लेकर बड़ी चिन्तित रहती। स्कूल समय को लेकर वह कुछ न कर सकती थी क्योंकि स्कूल की अपनी समस्याएँ होती हैं।

जसपाल तथा रामपाल भाई थे। उन दोनों में जसपाल अधिक गंभीर प्रकृति का था और पढ़ाई में बड़ी रुचि लेता था। रामपाल दस साल का था और छठी कक्षा में पढ़ता था। इस कक्षा में कई नए विषय प्रारंभ किए जाते थे लेकिन रामपाल का ध्यान हमेशा खेलकूद में लगा रहता था। उसके शिक्षक अक्सर उसकी डायरी में लिख देते कि उसने गृह कार्य नहीं किया है। उसकी माँ कभी उसे प्यार से कहती, कभी डाँटती, कभी पिताजी बहस करते। तब जाकर बड़ी कठिनाई से वह पढ़ने बैठता। माँ यह सोचकर बड़ी परेशान रहती कि कुछ बच्चे क्यों पढ़ाई की तरफ इतना ध्यान नहीं देते और क्या रामपाल कभी कुछ कर पाएगा ? जसपाल में वह सब कुछ था जो वह चाहती थी किंतु फिर भी वह दोनों बच्चों की कभी आपस में तुलना न करती। परंतु छोटे लड़के का व्यवहार उसकी समझ के बाहर था।

दीपा नवीं कक्षा में पढ़ती थी। यद्यपि वह डरपोक न थी फिर भी उसकी माँ छोटी-छोटी बातों को लेकर बड़ी परेशान रहती। दीपू और उसकी सहेली मारिया रिक्शे में स्कूल जाते थे क्योंकि स्कूल की बस उनके घर के पास नहीं आती थी। रिक्शावाला विश्वसनीय आदमी था और स्कूल जाने में केवल आधा घंटा लगता था, फिर भी उसकी माँ को हमेशा यह भय लगा रहता कि कहीं कोई दुर्घटना या कोई अनुचित घटना न हो जाए क्योंकि उनका स्वभाव ही ऐसा था। रिक्शा आने के निश्चित समय के एक घंटे पहले ही वह दरवाज़े पर खड़ी रहती ताकि वे दूर से रिक्शे को आता देख सकें। आजकल के जमाने में लड़कियों का अकेले जाना बिलकुल सुरक्षित नहीं है। सड़क पर कई आवारा लोग इधर-उधर घूमते रहते थे जिनका काम ही लड़कियों को छेड़ना था और दीपू की माँ की चिंता बड़ी ही स्वाभाविक थी।

विक्रम के पिता ने निश्चय कर लिया कि उनका बेटा भी उन्हीं के समान बिजली विभाग में इंजीनियर बनेगा। वे चाहते थे कि बारहवीं पास करने के बाद वह इंजीनियरिंग में प्रवेश ले ले जिसके लिए अच्छे अंकों की आवश्यकता थी। विक्रम बुद्धिमान था और उसे सत्तर प्रतिशत अंक मिलते थे पर उसके पिता कहते "इससे काम न चलेगा।" जब तक उसे नब्बे प्रतिशत अंक नहीं मिलते तब तक वह प्रवेश परीक्षा पास नहीं कर सकता क्योंकि इस प्रकार के महाविद्यालयों के लिए बड़ी होड़ लगी रहती हैं। बस उनके पिताजी दिन-रात उसके पीछे पड़े रहते थे। ऐसा लगता था कि अपने बेटे में वह अपना विद्यार्थी जीवन देख रहे हो। कभी-कभी माँ बाप अपने बच्चों को लेकर इतने महत्वाकांक्षी हो जाते हैं कि उनकी

अपेक्षाएँ बहुत अधिक हो जाती हैं। इस प्रकार घर का वातावरण तनाव से भर जाता है। अगर तुम ऐसी परिस्थिति में पड़ गए तो क्या करोगे? ज़रा सोचकर देखो।

अर्जुन की माँ स्कूल मे उसके आचरण की रिपोर्ट पढ़कर चिंतित थी। उनकी रातों की नींद उड़ चुकी थी। वह बड़ा ही लड़ाकू प्रकृति का था। स्कूल से खबर मिलती कि वह अशोभनीय भाषा का प्रयोग करता है। बेचारी माँ यह न समझ पाती कि वह कहाँ से ऐसी भाषा सीखता है क्योंकि घर में तो कोई इस प्रकार की भाषा का उपयोग नहीं करता था। उसके पिता की मृत्यु हो चुकी थी और उसका पालन-पोषण माँ ही कर रही थी। कम आमदनी होते हुए भी जितना बन पड़ता वह उतना करती। फिर भी वह माँ का कहना न मानता। वह अनुशासनहीन हो गया था। अपनी सारी शक्ति लगाकर माँ उसे समझाने का प्रयत्न करती। कभी वह कहना भी मानता परंतु फिर भी स्कूल की रिपोर्ट वही थी कि वह छेड़खानी करता है, रौब जमाता है, सदा लड़ता रहता है और पढ़ाई की तरफ बिलकुल ध्यान नहीं देता। उसकी माँ की परेशानी को देख बड़ा दु:ख होता।

मंजु के माता-पिता बहुत गरीब थे। वे तीन भाई बहिन थे और सभी स्कूल जाते थे। स्कूल में पढ़ाई की फीस तो नहीं देनी पड़ती थी परंतु हर साल किताबों, कापियों आदि के दाम बढ़ रहे थे, यूनीफार्म महंगा होता जा रहा था। इसी कारण हर साल जून का महीना आते ही उनकी परेशानियाँ और बढ़ जातीं कि वह दाखिले का खर्च किस प्रकार उठा पाएंगे। वे नहीं चाहते कि बच्चों को इसकी भनक भी पड़े और इसलिए वे हर बात बच्चों से छिपाकर रखते और उनके सामने सदा मुसकुराते रहते। जैसे-जैसे महंगाई बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे माता-पिता को अपने बच्चों को पढ़ाने में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

संजय की माँ चिंतित थी। जब वह छोटा था तो बड़ा ही होनहार था और अब जब वह नवीं क़क्षा में था तो वह सोचता था कि वह अब बड़ा हो गया है और उसके साथ उसी प्रकार का व्यवहार किया जाना चाहिए। वह अपने माता-पिता का कहना मानने के लिए तैयार न था। उसके लिए उसके मित्र ही सब कुछ थे। उसके खिलाफ स्कूल से गायब होकर सिनेमा देखने की शिकायत भी मिली थी। संजय की माँ को उसके मित्र ज़रा भी न भाते थे। वे सब उस अवस्था में थे जब उनके चेहरों पर दाढ़ी मूंछ उगती हैं और लड़के यह नहीं जानते थे कि इन शारीरिक परिवर्तनों को किस प्रकार संभाला जाए। यही कारण है कि वे यह सोच लेते हैं कि वे अपनी देखभाल स्वयं कर सकते हैं और बड़ो का हस्तक्षेप सहन नहीं कर

सकते। संजय की माँ यही प्रार्थना करती कि यह केवल इस अवस्था के कारण है और जल्दी ही दूर हो जाएगा।

सुप्रिया तथा उसकी सहेलियों, यानी शीला, अपर्णा, मुमताज़ तथा रीता की बात लें। सुप्रिया किसी अन्य स्कूल में नवीं कक्षा में पढ़ती है। इन सब की माताएँ इन आधुनिक लड़कियों के तौर तरीकों को समझने का प्रयत्न करतीं परंतु कभी-कभी हार मान लेतीं। वह यह सोचती कि ये लड़कियाँ कभी-कभी पढ़ती है ? स्कूल के बाद का उनका अधिकांश समय फिलमी संगीत सुनने में या फिर गप्पें हांकने में बीतता। वे पढ़ाई को मज़ाक के रूप में देखतीं। वे अपना विद्यार्थी जीवन याद करतीं जब उनके मन में अपने शिक्षकों के प्रति आदर की भावना थी और वह हर काम समय पर करती थीं। वे सोचतीं कि आज लोगों को क्या हो गया है। उनके लिए अपनी लड़कियों को समझाना टेढ़ी खीर थी।

माँ-बाप की चिंता की कोई सीमा नहीं। उनका संबंध मनुष्य के हर जीवन पहलू से है – शारीरिक, भावनात्मक, मानसिक, सामाजिक आदि। वे व्यवहार और आचरण को लेकर चिंतित रहते हैं। मन और बुद्धि की स्थिति को लेकर चिंतित रहते हैं। वे न जाने कितने कारणों से अपने बच्चो को लेकर चिंतित रहते हैं। यद्यपि बच्चे अपने माता पिता को प्यार करते हैं किंतु अनजाने में ही वह उनकी कई चिंताओ का कारण बन जाते हैं।

तुम्हारी स्थिति कैसी है ? सोच कर देखो कि क्या तुमने ऐसा कुछ किया है जिससे तुम्हारे माता-पिता चिंतित हो। इस विषय पर उन लोगो से बात कर के देखो। तुम पाओगे कि वह तुम्हारी भावनाओं को अच्छी तरह समझ सकते हैं और तुम्हारी मदद भी कर सकते हैं। अक्सर छोटी-छोटी बातें परेशानियों का रूप ले लेती है क्योंकि तुम इन विषयों पर उनसे बात करने के लिए तैयार नहीं होते। इस संसार मे माता-पिता सबसे अच्छे मित्र होते हैं और तुम उनकी परेशानियों को कम करने में उनकी सहायता कर सकते हो।

सुंदरता 20

अमोल तथा अमिता अच्छे मित्र थे। दोनों के मन मे सुंदरता से प्रेम था। अमोल रेखा, आकृति तथा आयाम मे विशेष रुचि रखता था। अमिता को रंगो से प्रेम था। जहाँ एक ओर अमोल अपने विचारों, भावों तथा सुंदरता को सजग मूर्तियों द्वारा अभिव्यक्त करता वहाँ अमिता रंगों के माध्यम से अभिव्यक्त करती।

अमिता प्रकृति के चित्र बनाने में अपना सब कुछ भुला देती।

ताजमहल के गुंबदों और खंभों की उत्कृष्टता ने उसके मन मे एक अमिट छाप छोड़ दी थी। वह घंटों लाल किले की भव्यता को निहारता रहता। घंटो किसी मस्जिद या गिरजाघर की विशालता के आकर्षण मे डूब जाता। दक्षिण भारत की यात्रा के दौरान वह मदुरै, कांचीपुरम् और रामेश्वरम् के मंदिरो के गोपुरों की उत्कृष्टता को देखकर हैरान रह गया। जो कुछ वह देखता फुर्सत के समय उसका चित्र बनाकर अमिता को दिखाता। इस देश तथा अन्य देशों की कलाओं की किताबों के पृष्ठो को पलटने मे उसे बड़ा आनंद आता और स्थापत्य कला की कोई भी बारीकी उसकी आँखों से बच न पाती। वह जानता था कि एक दिन वह अवश्य शिल्पकार बनेगा।

अमिता उसकी चचेरी बहिन उसकी अच्छी मित्र थी। वे दोनों समवयस्क थे और दोनो ही सुंदर वस्तुओ को प्यार करते थे। अमिता की रुचि चित्रकला में थी। जब वह छोटी थी तो उसकी यह रुचि पेंसिल तथा क्रेओन से शुरू हुई थी किंतु अन्य माध्यम जैसे तेल चित्र और पानी के रंगों में भी उसकी प्रतिभा स्पष्ट झलकती थी। अपने रंग प्रयोगों के कारण उसके प्राकृतिक चित्रों की सभी सराहना करते। रंगों के चयन में रैम्ब्राँ उसका प्रिय चित्रकार था। विश्व प्रसिद्ध चित्रकारों और उनकी कलाकृतियों से वह परिचित थी।

उसकी दृष्टि में पिकासो एक महान कलाकार था। फुर्सत के समय वह कला की किताबों के पृष्ठ उलटती रहती और इस प्रकार उसने काफी जानकारी प्राप्त कर ली थी।

अमोल के पिताजी कला के इतिहासकार थे। उन्होंने विश्व कला के इतिहास का गहन

अध्ययन किया था। वे विश्व विद्यालय में पढ़ाते थे। उनकी गणना विद्वानों में होती थी। उनके घर में एक विशाल पुस्तकालय था जिसमें कला, विभिन्न रूपरेखाओं, शिल्पकला, संगीत, विश्व सभ्यता संबंधी अनेक पुस्तकें थीं। अमिता और अमोल के मन में पुस्तकों के प्रति प्रेम यहीं से उत्पन्न हुआ था। वे अपने सहपाठियों से बिलकुल भिन्न थे। उनमें इस प्रकार की किताबों के प्रति कोई रुचि न थी। अमोल तथा अमिता भी हलकी फुलकी किताबे पढ़ते तो थे परंतु साधारणतया सुंदरता के प्रति उनका लगाव अधिक था। उनके माता-पिता जब भी देश के विभिन्न भागों की यात्रा करते उन्हें अपने साथ अवश्य ले जाते। इस प्रकार उन्होंने यह जाना था कि भारत में कारीगर बड़ी उत्कृष्ट वस्तुएँ बनाते हैं जैसे कढ़ी हुई ऊनी चादरें, जयपुर में बनीं पीतल की वस्तुएँ, दक्षिण भारत की गड़ी सुंदर मूर्तियाँ, बिहार के मिथिला प्रदेश की स्त्रियों द्वारा बनाई गई चित्रकला, हैदराबाद में अभ्रक का काम और सारे देश के हाथ करघों के काम। ऐसा लगता था कि सारी सुंदरता को वे आंखो मे भर लेंगे।

अमोल की माँ तमिलनाडु तथा पिता उत्तर प्रदेश के निवासी थे। माँ की हिंदुस्तानी संगीत में रुचि ही दोनों को निकट लाने का मूल कारण थी। वह वीणा भी बजाती थी और कर्नाटक संगीत पद्धति की शैलियों से भी परिचित थी। परंतु उन्हे पंडित जसराज के गायन और अमजद अली खां के सरोद वादन से बहुत प्रेम था। दोनो को ही यह बात समझ नहीं आती थी कि हमारे देश में उत्तर तथा दक्षिण के बीच इतना तनाव क्यों है? माँ बहुत अच्छी हिंदी बोल लेती थी और पिता ने तमिल भली प्रकार सीखी थी। दोनों को ही एक दूसरे के जीवन की विशिष्टताओं में सुंदरता दिखाई देती थी। वे चाहते थे कि बच्चे बड़े होकर अच्छे भारतीय बनें और उनमें देश के विभिन्न प्रांतों की सभ्यता तथा संस्कृति के प्रति सम्मान का भाव हो। उन्हें ऐसे लोगों को देखकर बहुत दुख होता जो स्वयं को केवल एक विशिष्ट प्रांत, भाषा, संगीत और कला आदि से जोड़े रखते। कला तो सबकी धरोहर है।

एक बार उनके साथ एक ऐसी घटना घटी जब उन्हें एक नया अद्भुत अनुभव प्राप्त हुआ। वे उत्तर भारत की यात्रा पर थे। एक दिन प्रातःकाल गंगा में नौकाविहार करते समय उन्होंने एक अपूर्व सूर्योदय देखा। ऐसा लग रहा था मानो कई सुंदर रंगों का एक गोला धीरे-धीरे जल से बाहर आ रहा हो – गुलाबी, कहरूबा, सुनहरा और लाल। आनंद के कारण उनकी सांस मानों रुकी की रुकी रह गई।

अपनी यात्रा के दौरान कुमाऊँ की पहाड़ियों के बीच एक दिन उन्हें त्रिशूल, नंदादेवी

और अन्नपूर्णा की चोटियों में बर्फ की एक झलक मिली। वह दृश्य इतना वैभवशाली था कि उसे देखकर उनपर चुप्पी सी छा गई। उनका मन मौन था।
माँ ने कहा – ''मन की पूर्णता में ही सौंदर्य है''। किंतु पिता ने कहा ''शायद मन का रिक्त हो जाना ही सौंदर्य है क्योंकि ऐसे क्षणों में मन में कोई विचार नही होते।''

अमोल तथा अमिता बहुत देर तक चुपचाप बैठे रहे। उस अनुभूति के बाद चित्रकला, शिल्पकला तथा संगीत के संबंध में अपने विचारों को लेकर वे इतने निश्चित न थे। उन्होंने ईश्वर की महानता के दर्शन किए थे और उसकी तुलना में कैनवस तथा पत्थरों पर मनुष्य की अनुभूति बहुत सीमित सी लगती थी।

क्या सुंदर वस्तुओं के अवलोकन का आनंद तुमने कभी लिया है ? तुम्हारी प्रिय वस्तुएँ क्या हैं ?

क्या तुमने कभी सूर्योदय या सूर्यास्त को ध्यान से देखा है ? कभी ऐसा करके देखो।

सुरुचि क्या होती है ? कक्षा में इस पर बातचीत करो।

निसंदेह यह मनुष्य की निर्दयता का नतीजा था। जो कुछ हुआ वह इस प्रकार है : सुधा अपने पुराने घर को बहुत प्यार करती थी। यह घर उसके दादाजी का था। यह घर एक टूटा-फूटा घर था और जर्जर अवस्था में था। परंतु उसकी छतें पुरातन काल की थीं, अंदर घुसते ही सुंदर तोरण थे और सुधा को लगता कि उसकी अपनी एक गरिमा है जो बीती शताब्दी के घरों में देखने को मिलती है। सुधा को घर के अंदर बाहर घूमना बड़ा अच्छा लगता और उसे सबसे अधिक अच्छा लगता अहाते में लगा आम का वृक्ष। वह अक्सर उस वृक्ष के नीचे बैठकर उसकी शाखाओं की सुंदरता को, उसके पत्तों को, उसके रंगों को निहारा करती। परिवार में अकेली संतान होने के कारण वह मौन रहने की आदी हो चुकी थी। यह वृक्ष ही उसके मित्र थे और इन वृक्षों में भी विशेष रूप से आम का यह वृक्ष उसका परम मित्र था जिसके साथ बैठकर वह घंटों बातें करती।

उस दिन जब वह पेड़ के नीचे बैठी थी तो उसका हृदय बड़ा उदास था, उसकी आँखों में आंसू भरे थे क्योंकि उसके माता-पिता ने यह निश्चय किया था कि शहर के एक दूसरे भाग में एक आधुनिक ढंग से बनाए गए मकान में वे लोग रहने के लिए जाएँगे। वे यह घर किसी ठेकेदार को बेच रहे थे और सुधा की दृष्टि उस दिन सुबह उस पर पड़ी थी। ठेकेदार के चेहरे के तेवर व मूँछों से इतनी निर्दयता टपकती थी कि सुधा को लगा कि वह हर उस वस्तु को नष्ट कर देगा जिससे सुधा प्यार करती थी जैसे पिताजी के कमरे का वह दरवाज़ा, जिसमें सुंदर नक्काशी की गई थी, पीछे का चक्राकार बरामदा, गुंबद के आकार की खिड़की आदि। इस आम के पेड़ को लेकर उसे विशेष चिंता थी। क्या वह निर्दयी आदमी उसे काट देगा ? आजकल इस बात को लेकर कि पेड़ों तथा जंगलों को कितनी निर्दयता से काटा जा रहा है, कितने चर्चे हो रहे हैं। क्या उसका मित्र उससे छिन जाएगा ? उसने अपने पिता से पूछा था कि उनका घर जब इतना अच्छा है तो किसी और घर में जाने की क्या आवश्यकता है ? परंतु पिताजी ने समझाया कि कारण केवल इतना है कि उसमें आधुनिक सुख सुविधाएँ नहीं हैं।

इस घर में स्नानगृह, सोने के कमरे से अलग हट कर है, हाथ धोने के लिए बेसिन नहीं हैं, भण्डार गृह नहीं, यहाँ तक कि वह हवादार भी नहीं। सबसे मुख्य बात तो यह थी कि नया घर एक अच्छे स्थान पर स्थित है जहाँ उसे मित्रो की कमी नहीं होगी और वह साइकिल से भी स्कूल जा सकती है। नया घर एक बहुमंजलीय घरों में से एक घर था। उस भवन में कुल आठ मंजिल थे और उनका घर चौथी मंजिल पर था। सुधा को यह सब बिलकुल अच्छा नहीं लगा था परंतु वह अपने माता-पिता के साथ बहस नही कर सकी क्योकि बच्चे जो बात उन्हें अच्छी न लगे, उसकी ओर केवल इशारा कर सकते हैं। वह उनसे बहस नहीं कर सकते। यह स्वाभाविक है कि वे तुमसे अधिक जानते हैं क्योकि वे तुमसे अधिक बड़े हैं तथा अनुभवी भी, इस कारण अपना दुःख उसने अपने मन के अंदर ही छिपा कर रखा और अब उस आम के पेड़ के नीचे बैठकर वह धीरे-धीरे रो रही थी। वह थकी हुई थी और धीरे–धीरे उसे नींद आ गई। यह स्वप्न उसने उस समय देखा।

उसके प्रिय आम के वृक्ष ने अन्य वृक्षो का एक सम्मेलन बुलाया था। वह स्थान हिमालय जैसा लग रहा था। वहॉ तरह-तरह के वृक्ष थे जैसे बरगद, पीपल, अशोक, खजूर, देवदार, नीम, रबड़, कटहल, शहतूत, जामुन, सागौन, पारिजात, चंदन, रुद्राक्ष, इमली, कपास, कदंब, दालचीनी, गंध सफेदा, गुलमोहर, अमलताश आदि। आम के वृक्ष ने यह प्रस्ताव रखा कि बरगद के वृक्ष को सम्मेलन का अध्यक्ष बनाया जाए और सभी वृक्षों ने सहमति में अपनी-अपनी शाखाएँ हिलाई। इसलिए बरगद का वृक्ष अध्यक्ष बन गया। फिर उसने सुधा के आम के वृक्ष से इस सम्मेलन को बुलाने का कारण पूछा। इस पर आम के वृक्ष ने एक संक्षिप्त भाषण दिया जिस मे उसने कहा कि कैसे आज के निर्दयी मनुष्यों के व्यवहार के कारण उनका जीवन खतरे में पड़ गया है। उसने बताया कि किस प्रकार उसके निवास स्थान के पास के वृक्षों को काटा गया है, किस प्रकार काले कपड़े पहने दस व्यक्तियों ने कुल्हाड़ी से उन वृक्षों को काट डाला जो कि सुधा के घर के सामने थे क्योंकि वहाँ एक कारखाना बनने वाला था। उसे अपने लिए भी डर लग रहा था क्योकि उसकी प्रिय मित्र सुधा भी वहाँ से जाने वाली थी। वह चाहता था कि कोई ठोस कदम इस विषय मे उठाया जाए। इसके बाद सभी वृक्षों ने अपनी-अपनी कहानी सुनाई जो कि लगभग एक जैसी थी। जंगलों और मैदानो में बड़ी निर्ममता से उनको काटा जा रहा था। वह देखते कि क्षण भर पहले उनके जो भाई बंधु आनंद से झूम रहे थे, उन्हें एक निर्दय आघात से गिरा दिया जाता। उन्हे

यह सब बिलकुल बेतुका लगता था क्योंकि वृक्ष तो कई रूपों मे मनुष्य की सेवा करते हैं और पुरातन काल में वृक्षो की पूजा की जाती थी। सागौन के वृक्ष का भाषण सबसे प्रभावशाली था और उसने पर्वतों की ढलानों और पर्वतों के कटने का विस्तृत विवरण दिया। उसने बताया कि किस प्रकार कुछ अजनबी आदमी लारियों में भरकर चुपचाप आए थे, किस प्रकार वह वहाँ एक दिन ठहरे थे, किस तरह उन्होंने उस स्थान का निरीक्षण कर चिन्ह लगाया था और फिर किस निर्दयता से उनके भाइयों को काट डाला था। यह सारा कार्य निर्दयतापूर्वक बड़ी जल्दी निपटाया गया था, फिर उन वृक्षों के तने को काट कर लारी में रखा गया था और ''ईश्वर जाने कहाँ'' ले जाया गया था। रोनी आवाज़ में वह चिल्लाया कि उनके जीवित रहने का मात्र कारण यह था कि उस दिन ट्रक में जगह न थी। उसका ऐसा विश्वास था कि वे लोग अवश्य फिर लौट कर आएँगे। जैसे ही वह रोने लगा अन्य वृक्ष भी रोने लगे और सारा वातावरण उदास हो गया। वह देखकर बरगद वृक्ष ने उनसे कहा कि यह सारी कार्यवाही विवेकपूर्ण शांत चित्त से की जानी चाहिए। उसने कहा कि उन तथ्यों को सामने रखा जाए कि पेड़ों को काट कर मनुष्य क्या करते हैं और उन्हें क्यो काटते हैं।

जो तथ्य सामने आए वे थे (1) जनसंख्या में अचानक वृद्धि हो गई थी जिसके कारण अधिक घरों के लिए जगह तथा खेती के लिए ज़मीन की आवश्यकता थी। (2) लकड़ी जो पहले मुख्यतः ईंधन के रूप में काम में लाई जाती थी और घर के कुर्सी, मेज़ बनाने के लिए प्रयोग की जाती थी आज वह अन्य कई वस्तुओं के लिए काम में लाई जाती थी। लकड़ी की बनी चीजें बहुत लोकप्रिय हो रही थीं।लकड़ी से कागज, रेऑन, सेलोफेर, फोटोग्राफी के लिए फिल्म तथा अन्य कई वस्तुएँ बनाई जा रही थीं। यही कारण था कि भूमि वृक्षहीन हो रही थी। धरती अब हरी न थी। व्यक्ति इस बात का अनुभव नहीं कर रहे थे कि इस प्रकार पेड़ो के काटने का प्रभाव मौसम पर भी पड़ता है। सभी स्थान या तो बहुत ठण्डे हो रहे थे या बहुत ही गरम। ऋतु चक्र में भी परिवर्तन हो रहा था। गर्मी के स्थान पर सर्दी और ठण्ड के स्थान पर गरम वातावरण हो रहा था। इसका वर्षा पर भी प्रभाव पड़ रहा था। लोगो के लिए यह समझना बड़ा जरूरी था कि वृक्ष उनके भाइयो के समान हैं जो पृथ्वी पर उनके जीवन की रक्षा करते हैं।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए अध्यक्ष ने पूछा कि क्या पृथ्वी की भलाई तथा वृक्ष परिवारों के लिए कुछ आशा बची है। उनमें से कुछ ने धीरे से उत्तर दिया। गुलमोहर ने

उत्तर दिया ''हाँ'' और अपने नन्हें मित्र मिंटू के बारे में बताया। मिंटू नौ साल की एक छोटी लड़की थी।

जामुन के वृक्ष ने भी हामी भरी और अपने मित्र अहमद तथा अख्तर के बारे में बताया कि किस प्रकार वे उसका ध्यान रखते थे।

इसके बाद कई वृक्षों ने मिशन स्कूल के छोटे-छोटे बच्चों के बारे में बताया जो कि उनकी देख-रेख करते थे। ऐसे वृक्षों मे फूलों की संख्या अधिक थी।

सुधा के प्रिय आम के वृक्ष से भी चुप न रहा गया और उसने सुधा के प्यार और मित्रता की चर्चा की।

''इसका अर्थ यह हुआ कि बच्चे ही हमारी आशा हैं'' पीपल ने कहा।

इसके बाद नीम, अशोक, सागौन, देवदार, रबड़, कपास सभी ने एक-एक ऐसी अभूतपूर्व घटना का वर्णन किया जो उनके साथ घटी थी। जब वे अपने विनाश को आता देखकर भयभीत थे तब कुछ दयालु पुरुष तथा स्त्री वहॉ आए। उनमें से प्रत्येक ने हर एक वृक्ष को घेर लिया और जब लकड़ी काटने वाले वहॉ कुल्हाड़ी लेकर आए तो कोई भी वृक्षों को न काट सका क्योकि बिना उन स्त्री पुरुषो को मारे वृक्ष काटना असंभव था और इस तरह उन वृक्षों के प्राण बच गए। इसके बाद उन्होने लोगों को यह कहते सुना कि यह आंदोलन ''चिपको आंदोलन'' कहलाता है और जो व्यक्ति वृक्षों से प्यार करते हैं उन लोगो ने अपने प्रेम तथा साहस के कारण जंगलों को नष्ट होने और अनेक वृक्षों को काटने से बचाया था। इससे और कई नई समितियो का जन्म हुआ है जिसे विभिन्न नाम दिए गए हैं जैसे– ''वृक्षों के मित्र'', ''करोड़ो वृक्ष संस्था'' आदि।

यह सब सुनने के बाद बरगद के वृक्ष ने एक प्रस्ताव पारित किया जिसमे सारे वृक्षों ने अपना मौन सहयोग, स्कूल तथा स्कूल न जाने वाले बच्चों तथा चिपिको आंदोलन के स्त्रियो तथा पुरुषों, विभिन्न संस्थाओं आदि को देने का निश्चय किया जो कि वृक्षों से प्रेम करते हैं। उन्होंने कई शहरों की इस योजना ''एक जन एक वृक्ष'' का भी हार्दिक रूप से समर्थन किया। वे चाहते थे कि उनका परिवार बढ़े। अचानक सुधा चौंक कर जागी। उसका प्रिय आम का वृक्ष वहीं था और कहीं भी किसी सम्मेलन का नामोनिशान न था। ''जाने कैसा सपना था'', कहते हुए उसने गहरी सांस ली।

एक सप्ताह बाद डरते हुए वह अपने प्रिय वृक्ष से मिलने गई। ठेकेदार ने उसे काटा

नहीं था। यद्यपि चेहरे से वह बड़ा क्रूर लगता था। पर वास्तव में वह एक दयालु आदमी था जो यों ही वृक्षों को काटना नहीं चाहता था। उसने उसे घर के अंदर बुलाया और उस आम के वृक्ष के प्रति विशेष लगाव देखकर उसने उससे कहा कि वह जब चाहे अपने वृक्ष से मिलने आ सकती है।

क्या तुम पेड़ों की देख-रेख करोगे? तुम जहाँ भी रहो क्या वहाँ एक नया वृक्ष लगाओगे और उसकी देखभाल करोगे?

किसे चिंता है सार्वजनिक संपत्ति की

श्री प्रसाद एक मेहनती अध्यापक थे। उन्होंने इतिहास में प्रथम श्रेणी में एम. ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की थी और अध्यापन के क्षेत्र में आ गए क्योंकि उनका यह विचार था कि यह एक महान पेशा है। यद्यपि उन्हें कई अन्य अनेक नौकरियाँ मिली परंतु उन्होंने शिक्षण का कार्य ही चुना, वह भी विश्वविद्यालय की अपेक्षा एक स्कूल में। उनके दिमाग में एक बात बहुत साफ थी कि वे तरुणों के मन को समझना चाहते थे और सीखने की इस प्रक्रिया में उनकी सहायता करना चाहते थे। उनसे भी बहुत कुछ सीखना चाहते थे। उनका विश्वास था कि अध्यापकों को जीवन भर सीखते रहना चाहिए और उन्हें सही शिक्षा बच्चों से मिलती है। उनके विचार में सही शिक्षा का अर्थ सिर्फ किताबों से जानकारी प्राप्त कर परीक्षाएँ उत्तीर्ण करना नहीं था। सही शिक्षा का अर्थ था अपने चारों तरफ के जीवन के प्रति सजगता और अपनी आँखों और कानों का सही उपयोग। इसका अर्थ था अपने चारों ओर की ध्वनियों को ध्यान से सुनना, परिवार के सदस्यों, स्कूल तथा समाज के प्रति जागरूक होना और उन्हें उचित सम्मान देना। इसका अर्थ था कि इस पृथ्वी के प्रति सजग होना जहाँ हम रहते हैं और प्रकृति से संबंधित होने के कारण, वृक्षों, पुष्पों, पशु-पक्षियों, आकाश और तारों से मधुर संबंध स्थापित करना। शिक्षा के संबंध में उनकी बड़ी व्यापक दृष्टि थी। बच्चे उनसे बहुत प्यार करते थे क्योंकि वे वास्तव में मनुष्य थे। उनमें दूसरों को समझने की शक्ति थी और साथ ही वह अत्यंत बुद्धिमान थे। उनका मस्तिष्क उत्कृष्ट कोटि का था।

पिछले एक सप्ताह से उनके शहर में जो कुछ भी हो रहा था, उसे देखकर उनका दिल दुःख तथा क्रोध से भरा हुआ था। सूचना मिली थी – कि स्थानीय महाविद्यालय के छात्रों के एक समूह ने एक बस जला दी। जिस बस में विद्यार्थी यात्रा कर रहे थे, उस बस के कंडक्टर तथा छात्रों में कहा-सुनी हो गई। बात इतनी बढ़ गई कि हाथापाई की नौबत आ गई और अंत में छात्रों ने बस ही जला दी। यह एक सरकारी बस थी जिसका अर्थ हुआ कि वह जनता की संपत्ति थी। उन्होंने अन्य स्थानों की सार्वजनिक संपत्ति के विषय में सोचा और पाया कि

जहाँ एक ओर लोग अपने तथा अपने परिवार की वस्तुओं के प्रति बड़ी सावधानी बरतते हैं, वहीं सार्वजनिक संपत्ति जैसे ट्राम, डाकघर, बैंक, रेलवे स्टेशन, सड़क, फुटपाथ, दफ्तरो, उद्यान तथा बगीचों के प्रति तनिक भी ध्यान नही देते। उन्होंने अपने नवीं कक्षा के विद्यार्थियों से इस ओर ध्यान देने को कहा और स्कूल की शिक्षा समाप्त करने से पहले यह सीखने को कहा कि इस प्रकार की परिस्थितियों से कैसे निपटा जा सकता है। उन्होंने उनसे इस विषय पर चर्चा की और उनका ध्यान वास्तविकता की ओर खींचा और अपने मोहल्ले की जानकारी प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित किया।

सभी छात्र छोटे-छोटे समूहों में हाथ में कॉपियाँ और कलम लेकर निकल पड़े। वे अपने मोहल्ले के सार्वजनिक स्थानों मे गए और इन बातों पर गौर किया कि सार्वजनिक वस्तुएँ ठीक हालत में हैं या नहीं। अगर टूटी-फूटी हैं तो किस हद तक नष्ट की गई हैं। यह अध्ययन तथ्यो को जमा करने के उद्देश्य से किया गया था और इस दौरान वे अस्पताल, रेलवे स्टेशन, सरकारी कार्यालय, सड़कों तथा बगीचों आदि मे गए। वास्तविकता तो यह थी कि बच्चों का बगीचा नाममात्र को था क्योंकि यह गंदगी से भरा हुआ था, झूलों पर जंग लगी थी और खेल के सामान टूटे-फूटे थे तथा यहाँ कोई बच्चा नहीं आता था। उन्होंने इन सब कमियों को लिख लिया और कक्षा में लौट आए।

इस संबंध में क्या किया जाए इस पर एक चर्चा हुई। कुछ विद्यार्थियों का विचार था कि वे पैसे जमा करें और स्वयं ही उनकी मरम्मत करें। किंतु फिर उन्हें लगा कि उनका यह कार्य उनके उद्देश्य की पूर्ति नहीं कर पाएगा क्योकि लोग उसके बाद भी चीजों को नष्ट करते रहेगे। एक अन्य सुझाव था कि दफ्तरो मे कर्मचारियो से मिलें और उन्हें समझाएँ। पर शायद दफ्तर के मैनेजर स्कूल के छात्रों की बातों को गंभीरता से न लें। वे विनम्रतापूर्वक यह कह दें कि वे कुछ करने की स्थिति में नहीं है। उन्हें जनता का सहयोग चाहिए था जो वास्तव में एक कठिन कार्य था। एक अन्य छात्र का सुझाव था कि वे दैनिक अखबार के सम्पादक को पत्र लिखें जिसके द्वारा वे अनेक पाठको का ध्यान आकर्षित कर यह बताएँ कि हिंसा और तोड़फोड़ के कारण उनके मोहल्ले का विनाश होता है और चूंकि सार्वजनिक संपत्ति हममें से प्रत्येक की है, इसलिए हममे से प्रत्येक को इसकी देखभाल करनी चाहिए। सब ने इसका समर्थन किया और उनमें से एक दल इस प्रकार की चिट्ठियो का मसौदा बनाने मे व्यस्त हो गया।

इससे इस विषय को लेकर कि क्या दूसरे व्यक्तियो के विश्वास और विचारो को बदला जा सकता है और लोगो मे सार्वजनिक जागरूकता और उत्तरदायित्व की भावना कैसे उत्पन्न की जा सकती है, एक चर्चा प्रारंभ हुई। यद्यपि कई सुझाव दिए गए किंतु कक्षा का सर्वमान्य मत यह था कि समाज व्यक्तियो द्वारा निर्मित होता है और इसलिए हर व्यक्ति मे सार्वजनिक संपत्ति तथा स्थानों के प्रति सम्मान का भाव होना चाहिए। तभी उनके मुहल्ले में परिवर्तन आ सकता है। इस बात को उन विद्यार्थियो ने इतनी गहराई से अनुभव किया कि अपने अध्यापक की प्रेरणा से उनमें से हर एक ने अपने आप के प्रति सतर्क रहने का निश्चय किया। वे यही सतर्कता दूसरों में भी देखना चाहते थे। जैसे कि पुरानी कहावत है, ''घर मे चिराग जलाकर मंदिर में जलाते हैं।'' उन्होंने सबसे पहले अपने स्कूल के अहाते में पड़े कागज़ के टुकड़ो को बटोरकर कूड़ेदानों में फेंकना शुरू किया। जितने भी नल चू रहे थे उनकी मरम्मत की ताकि पानी बेकार न जाए। बिजली बचाने के प्रयत्न में कमरे से बाहर जाने के पहले वे पंखे बंद कर देते। उन्होने छोटे-छोटे बच्चों को भी समझाया जो कभी खेल मे कुर्सियों तथा मेज़ों को ब्लेड या चाकू से खोदते रहते। फटे सूचना पटों की मरम्मत की। उसके बाद उन्होंने स्कूल के फाटक के बाहर पड़े कूड़ा करकट को जमा करने आए आदमियो की सहायता के लिए प्रबंध किया। इसके बाद वे स्वयं भी पास के घरो में गए और उन्होंने अपने हाथ से बनाई गई पर्चियाँ बांटीं जिसमें लोगो से यह आग्रह किया गया था कि वे सार्वजनिक वस्तुओ का ध्यान रखें, सड़कों को साफ रखें, वृक्षो को काटने से रोककर उनकी देखभाल करें आदि। कुछ घरो में उनका स्वागत किया गया तथा उनके कार्य की सराहना की गई। कुछ घरो में लोगो का व्यवहार बड़ा रूखा था और लोग दरवाज़ा खोलने को भी तैयार न थे। उन्होने प्रशंसा और कटुता को समान भाव से स्वीकार किया। जी जान से लगे इस प्रयत्न मे एक महत्वपूर्ण बात जो उन्होने सीखी वह यह थी कि यदि तुम चाहते हो कि सार्वजनिक संपत्ति का लोग आदर करे तो सबसे पहले तुम्हें स्वयं उसका आदर करना होगा।

क्या तुम इसे शिक्षा का एक हिस्सा समझते हो या तुम इसे समय की बरबादी मानते हो? कक्षा में इस प्रश्न पर चर्चा करो। अगर तुम्हे यह महत्वपूर्ण लगता है तो क्या तुम इस बात के प्रति सतर्कता, जागरूकता बरतोगे कि तुम्हारे स्कूल, घर तथा मुहल्ले के चारों ओर क्या हो रहा है? क्या तुम अपने छोटे भाई अथवा बहिन की भी इस बात मे सहायता करोगे?

मुख्य अध्यापक कम उम्र के थे किंतु उनमें उत्साह की कमी नहीं थी। वे नए विचारों के व्यक्ति थे, वर्तमान में जीने वाले मनुष्य थे और नए आविष्कारों तथा वैज्ञानिक खोजों के नए आयामों के प्रति पूर्णतया सजग थे। पर्यावरण से उन्हें बेहद प्रेम था और उनके छात्रों में भी काफी उत्साह था। मुख्य अध्यापक का विश्वास था कि उनके छात्रों को अच्छे विचारों के व्यक्तियों को जानने का अवसर मिलना चाहिए और इसे ध्यान में रखते हुए वे अक्सर विशेषज्ञों को निमंत्रित करते रहते थे जो ऊँची कक्षाओं के छात्रों को अपने विचारों से अवगत कराते थे। हाल ही में बनी शहर की पर्यावरण संस्था का भी यह स्कूल सदस्य था। उन्होंने पर्यावरण पर एक परियोजना भी तैयार की थी और उस दिन एक जाने माने विद्वान पर्यावरण की देख-रेख पर एक भाषण भी देने वाले थे।

संयोग की बात थी कि भारत और इंग्लैंड के बीच खेले जा रहे तीसरे टेस्ट मैच का वह दूसरा दिन था। यह मैच कलकत्ते में खेला जा रहा था और गावस्कर भारत की टीम के कप्तान थे। उनमें से एक लड़का ट्रांजिस्टर लेकर आया था और सबके कान उसी से चिपके हुए थे। उनके चेहरों के भावों से उनकी रुचि और उमंग का पता चल रहा था। रॉय आउट हो चुका था, विश्वनाथ अड़तालीस रन पर बल्ले बाजी कर रहा था और गावस्कर अभी छियासी रनों पर खेल रहे थे। सब लोग बड़ी बेचैनी से गावस्कर के शतक की प्रतीक्षा कर रहे थे। ऐसे समय स्कूल की क्रिकेट टीम के कप्तान रघु ने सब बच्चों को जमा किया। बड़ी अनिच्छा से वे जमा हुए। उनमें से कुछ एक तो बड़बड़ा रहे थे, कुछ एक रास्ते के पत्थरों को ठोकर मारते हुए अपनी खीझ प्रकट कर रहे थे, कुछ एक रघु की बातें सुन रहे थे जो कह रहा था "हमने जिस वक्ता को निमंत्रित किया है, कम से कम उनके प्रति हमें आदर तो दिखाना चाहिए। आखिर वह इतनी दूर से भाषण देने आए हैं।"

वक्ता कम उम्र का व्यक्ति था जिसके चेहरे से सौम्य टपक रहा था और उनकी आँखों में चमक थी। पहले उन्होंने सबसे इस बात की क्षमा मांगी कि उन्होंने यह भाषण उस दिन

देना स्वीकार किया जबकि उन्हे क्रिकेट का ऑखो देखा हाल सुनना चाहिए। उन्होंने कहा कि वास्तविकता तो यह थी कि वह स्वयं भी सुनील गावस्कर के शतक के बारे में सुनना चाहते थे। उनकी सहजता तथा सरलता ने सबके मन का विरोध दूर कर दिया। उनका वक्तव्य इतना रोचक था कि शीघ्र ही सारे विद्यार्थी उस प्रवाह मे बह चले, वे उनके विचारो को बड़े ध्यान से सुन रहे थे। उनका विषय था ''पर्यावरण को खतरा''। उन्होने कहा कि किस प्रकार मनुष्य पृथ्वी तथा पर्यावरण से बड़े गहरे संबंधों से जुड़ा है। मनुष्य अपने आप मे अकेला प्राणी बनकर नहीं जी सकता। उसे हवा, पानी तथा पृथ्वी की आवश्यकता होती है। ये वे स्रोत है जिनसे वह शक्ति प्राप्त करता है। प्राचीन काल में मनुष्य और प्रकृति के बड़े मधुर संबंध थे और अपने जीवन की छोटी से छोटी आवश्यकता की पूर्ति वह प्रकृति की गोद से पाता था, परंतु जैसे- जैसे वह अपने आप को अधिक सभ्य मानने लगा वैसे-वैसे अपने ऐसो आराम के लिए वह बड़ी क्रूरता से प्रकृति को नष्ट करने लगा। और अब वह प्रकृति की शांति और उसकी ध्वनियों के प्रति तनिक भी संवेदनशील नहीं है।

अपने भाषण के बीच-बीच में उन्होंने तस्वीरें भी दिखाईं। यह समझाने के लिए कि मनुष्य किस प्रकार अपने पर्यावरण को नष्ट कर रहा है, किस तरह पर्यावरण के प्रदूषण की समस्या एक गंभीर समस्या बन गई है, उन्होंने कहा कि हम प्रदूषण के तीन प्रकार पाते हैं, ''हवा, जल तथा शोर''। हवा प्रदूषित कैसे होती है ? यह बसों, ट्रको, मोटरो, वायुयानो द्वारा छोड़े गए धुएँ से होता है जो वातावरण को अस्वास्थ्यकर बनाती है। इनकी वजह से सॉस लेना भी कठिन हो जाता है। बस्तियों तथा मुहल्लों के पास उद्योग तथा कारखानो के होने के कारण वातावरण रासायनिक वस्तुओं तथा बेकार की वस्तुओं से प्रदूषित हो जाता है। मनुष्य उद्योगों के लिए रसायनों का प्रयोग करता है और इस प्रक्रिया मे बहुत अधिक मात्रा में रासायनिक अपशिष्ट उत्पन्न कर लेता है। अगर इनको पुनः काम में न लाया जाए तो ये पृथ्वी और वातावरण को दूषित कर देते हैं। वे पशुओ, पक्षियों, पौधो तथा मनुष्यो के लिए खतरे का कारण है। इसके अलावा कारखानो में से निकली हुई कार्बन मोनोक्साइड हवा की स्वच्छता को नष्ट करती है और इन क्षेत्रों के लोग स्वच्छ वायु मे सॉस भी नहीं ले सकते। उन्होंने सारे विश्व मे फैले वातावरण के प्रदूषण के अनेक उदाहरण दिए। उनकी बातें सुनकर बच्चे हैरान थे।

इसके बाद उन्होंने जल के प्रदूषण का प्रश्न उठाया। शहर की नालियो की ओर क्या

तुमने कभी ध्यान दिया ? किस तरह शहरों की गंदगी नदी में जमा होती है और वहाँ से समुद्र में जाकर मिल जाती है ? इसी प्रकार कारखानों की गंदगी भी नदी में जमा होती है।

नदी पानी का सबसे अच्छा स्रोत है। इसलिए कई स्थानों में नदी ही मनुष्य का जीवन होती है, किंतु जिस निर्दयता से हम उसमें सारी गंदगी फेंकते हैं, उससे वह इतनी गंदी हो जाती है कि उसे साफ कर पाना अत्यंत कठिन कार्य हो जाता है। समुद्र के तल में कई छोटे-छोटे प्राणी जन्म लेते हैं किन्तु उन्हें साफ तथा ताजे पानी के वातावरण की आवश्यकता होती है। समुद्र के प्रदूषित होने के साथ-साथ उनकी भी मृत्यु हो जाती है। समुद्र के सतही स्तर पर करीब दस से बीस फीट तक मल तथा गंदगी इकट्ठी होती है। अगर हम इसी तरह नदी को प्रदूषित करते रहे तो पृथ्वी की यह अमूल्य संपदा शीघ्र ही नष्ट हो जाएगी। मनुष्य की इस संपत्ति के विनाश को देखकर कई वैज्ञानिक तथा अन्य व्यक्ति चिंतित हैं। इन सब बातों को उन्होंने चित्रों की सहायता से समझाया और इस ओर भी ध्यान दिलाया कि किस तरह मनुष्य अपने भोजन के लिए ह्वेल मछली तथा सील मछली की दुर्लभ जातियों को नष्ट कर रहा है और डालफिन भी अब दुर्लभ होते जा रहे हैं।

अगली समस्या जो उन्होंने उठाई वह थी शहर के बढ़ते हुए शोर प्रदूषण की। संयोग यह हुआ कि उसी समय मुहल्ले में माइक पर एक फिल्म का गाना जोर-जोर से बजने लगा। स्कूल की शांति भंग हो गई और साथ ही बच्चे हँस पड़े। वे सभी इस प्रकार के प्रदूषण से भलीभांति परिचित थे। यह बात उनकी दृष्टि से छिपी न थी कि होटलों, सार्वजनिक स्थानों, मंदिरो तथा पवित्र स्थानों में लाउडस्पीकरों का प्रयोग ध्यान आकर्षित करने के लिए अथवा मनोरंजन के लिए किया जाता था। उन्होंने पूछा, ''क्या तुम्हें नहीं लगता कि इस प्रकार से ध्यान आकर्षित करना चिंता की बात है ? इस बात की ओर ध्यान लोग कम ही देते हैं कि सड़क के कोनों में जोर से बजाए जाने वाला संगीत वातावरण को प्रभावित करता है।''

शोर प्रदूषण का अन्य स्रोत सड़कों पर दौड़ती हुई मोटरों तथा ट्रकों के हॉर्न हैं। जनसंख्या के अधिक होने के साथ-साथ यातायात भी अनियमित हो रहा है और अधिकांश शहरों के रास्ते बड़ी-बड़ी गाड़ियो तथा ट्रकों से भरे पड़े हैं। किसी को उनका ठीक से संचालन करने की चिंता नहीं। उन्होंने कहा कि औद्योगीकरण के चाहे जो भी लाभ हो लेकिन उनसे बहुत सारी हानियाँ भी हैं।

बच्चों के भी अपने-अपने मत थे और उनके मन में तरह-तरह के प्रश्न उठ रहे थे।

बच्चों ने ध्यान दिलाया कि किस तरह उनके घरों के पास और स्कूल के सामने भी कूड़े करकट का एक पहाड़-सा है जिसे नगर निगम बराबर साफ नहीं करता जिसके कारण वहाँ रहना भी असहनीय हो गया है। ''कुछ किया जाना चाहिए'' उन्होंने कहा। वक्ता ने उनकी सराहना की और उनकी बात का समर्थन करते हुए कहा कि सबसे पहले तो तीन प्रकार के कूड़े-करकट के बारे में अलग-अलग जान लेना चाहिए, पहले तो रसोई घर का कचरा, फिर उसके बाद पत्तियों, फलों के छिलके, फूल आदि सूखा कचरा जैसे कागज, बोतलें, प्लास्टिक आदि। अगर हम अपने घरों में इन तीन प्रकार के कचरों को अलग-अलग रखें तो केवल रसोई घर के कचरे को नगर निगम के कूड़ेदानों में डाला जा सकता है, पत्तों तथा फलों की खाद बनाई जा सकती है और कागज तथा बोतलों को बेचकर उन्हें फिर से काम में लाया जा सकता है। इस प्रकार कूड़े करकट की समस्या बहुत कम हो जाएगी। बच्चों ने बहुत कुछ सीखा और बाद में उन्होंने अपनी-अपनी माँ से इस विषय पर चर्चा की।

इसके बाद बच्चों ने वक्ता से निर्दयतापूर्वक काटे जा रहे जंगलों तथा वृक्षों के विषय में पूछा। वक्ता ने उन्हें बताया कि किस तरह वन कटाई के कारण पृथ्वी का जैव मंडल तथा वातावरण प्रभावित होता है। जब वृक्ष काटे जाते हैं तब वहाँ के वर्षा चक्र पर प्रभाव पड़ता है और वहाँ हमेशा कम वर्षा होती है। ''क्या तुमने ध्यान दिया है कि किस प्रकार हमारा मौसम बदल रहा है ?'' उन्होंने पूछा। अधिकांश शहर तापमान के एकाएक अधिक होने के कारण और गर्म हो रहे हैं। चूंकि वाष्पीकरण तथा संघनन की क्रिया जिसके बारे में तुम पढ़ चुके हो पर इसका बुरा प्रभाव पड़ता है इसलिए सूखे तथा बहुत कम वर्षा की स्थिति आ जाती है। इसके अलावा भूमि के कटाव के कारण जमीन को भी बहुत क्षति पहुँचती,है। वृक्षों की रक्षा हजारों साल तक की जानी चाहिए और पृथ्वी को हरा-भरा तथा सुन्दर बनाए रखना चाहिए। यही कारण है कि हर बच्चे को एक वृक्ष लगाना चाहिए और उसकी देख रेख करनी चाहिए। जैसे-जैसे तुम बड़े होते जाओगे तुम वातावरण के प्रति इस पृथ्वी की देख-रेख के प्रति और सजग होते जाओगे। यहाँ पर उन्होंने अंतरिक्ष यात्रियों द्वारा अंतरिक्ष से लिए गए पृथ्वी के कुछ अभूतपूर्व चित्र दिखाए। उन्होंने बच्चों से इस सुंदर पृथ्वी की देख भाल का आग्रह किया।

बच्चों तथा अध्यापकों का दिल भर आया। वे उस भाषण में इतना डूब चुके थे कि किसी को क्रिकेट की याद भी न रही। कुछ उत्सुक छात्रों ने उन्हें घेर लिया और कुछ फिर से

उन चित्रों को देखना चाहते थे।

उस दिन के बाद शहर के पर्यावरण संस्था के कार्यक्रमों में स्कूल बड़े उत्साह के साथ भाग लेने लगा। हर कक्षा ने स्थानीय नागरिक समिति के लिए एक परियोजना का कार्य सँभाला।

क्या तुम्हें पर्यावरण के विषय में सोचने का अवसर मिला है ? क्या तुम कुछ करना चाहोगे? क्या तुम्हें यह बहुत महत्वपूर्ण नहीं लगता ?

मुझे डर लगता है

24

वह सब लड़कियाँ छात्रावास में रहती थीं और उस दिन सुबह नदी के किनारे इकट्ठी हुई थीं।

''कल बत्ती बंद करने के बाद एक जोरदार धमाके की आवाज सुनाई पड़ी थी?'' लाल स्वेटर वाली लड़की ने पूछा। ''मुझे तो बहुत डर लगा आखिर वह क्या था?''

''मैं नहीं जानती'' शीला ने कहा, ''पर मुझे भी बड़ा डर लगा। बाहर इतना अंधेरा था, मुझे तो बाहर जाते भी डर लग रहा था''।

''मुझे तो बाहर अंधेरे में जाने से सख्त नफरत है। ऐसा लगता है कोई भयानक घटना घटेगी'' अनीता ने कहा। ''तुम्हें किससे डर लगता हैं''? उन्होंने नई लड़की से पूछा। ''साँप से'' उसने कहा और सब मुसकरा दिए। अरे ललिता! अपनी कहो, क्या तुम्हें किसी भी वस्तु से डर नहीं लगता?

ललिता लड़कियों की इस बातचीत में भाग नहीं ले रही थी। वह नदी के किनारे कुछ खोई-खोई सी बैठी थी। परंतु जैसे की उसने अपना नाम सुना उसके कान खड़े हो गए। ''हाँ, भूतों से'' उसने कहा। वास्तव में उसने इसके बारे में पहले कभी सोचा भी न था। यह तो उसकी मनगढ़ंत बात थी। कितनी विचित्र बात है, है ना, हम लोग हमेशा मनगढ़ंत बातें बनाते हैं।

वनिता ने हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा, आनंद सर ने आज कक्षा में कुछ भूतों की कहानियाँ पढ़कर सुनाई थीं। सुनकर मेरे तो पसीने छूट गए।

''मुझे किसी भी बात से डर नहीं लगता।'' सुजाता ने कहा जो कि अपने माता-पिता के साथ अमरीका घूम आई थी और दुनिया के अन्य भागों को भी देखा था।

''और कल की गणित की परीक्षा''। बीच में टोकते हुए लाल स्वेटर वाली लड़की ने कहा। ''क्या तुम्हें उससे भी डर नहीं लगता?''

''बाप रे बाप। मैं तो भूल ही गई थी'' और उसकी आँखों से यह स्पष्ट था कि गणित

की परीक्षा से उसे बड़ा डर था।

ललिता खोई खोई सी थी, उसने धीरे से कहा "जानती हो मैं अपनी माँ के बारे में सोच रही थी। वह मेरे पिताजी से बहुत डरती है। वह शराब पीते हैं और रात को जब घर लौटते हैं तो हम सबको बड़ा डर लगता है।" "हमारे घर तो इसका बिलकुल उलटा होता है," शीला ने कहा, "मेरे पिताजी माँ से बहुत डरते हैं। वह बड़ी सख्त हैं" वे सब अपने-अपने डर के बारे में बातें करतीं रहीं। उन्हें हमेशा इस बात का डर लगा रहता था कि कोई अध्यापिका उन्हें कुछ करने पर या न करने पर डांट देंगी। कभी उन्हें लगता कि अगर उन्होंने कक्षा में किसी प्रश्न का गलत उत्तर दिया तो उनके सहपाठी उन पर हंसेंगी। इस डर से वे कक्षा की चर्चाओं में भाग न लेती, कभी-कभी उन्हे इस बात का डर रहता कि पी.टी. खेल अथवा नृत्य की कक्षाओं के लिए उन्हें देर न हो जाए और परीक्षा का भय तो सदा की लगा रहता। किसी विषय में अनुतीर्ण हो जाएं तो उनके माता-पिता उनके प्रगति पत्र को देखकर क्या कहेंगे। यह भी एक आम भय था और कुछ एक ने कहा कि जब उनकी तुलना, उनके भाई-बहिनों अथवा किसी से भी की जाती है तो बिलकुल अच्छा नहीं लगता और वे यह जानते थे कि उनके माता-पिता निश्चित रूप से ऐसा करेंगे। फिर उनके मन में लड़कों का डर था कि वे उनसे छेड़खानी करेगे, उन पर ताने कसेगे, अभद्र व्यवहार करेंगे और नम्रता से पेश न आएंगे आदि आदि। इन लड़कियों को छोटे-छोटे भय खाए जा रहे थे।

परंतु क्या तुमने इस बात पर गौर किया कि वे सब लोग भविष्य में कुछ होने वाले को लेकर भयभीत थे और वह भी सबके अपने दिमाग की उपज थी। पहले तो दिमाग में विचार उठता है कि "कुछ होगा" और उसी समय मन में भय उत्पन्न होता है। इस प्रकार का भय और कुछ नहीं बल्कि एक ऐसा विचार है कि भविष्य में कुछ हो सकता है या फिर एक याद है कि "पहले कभी ऐसा हुआ था"। हम सदा इससे बचने का प्रयत्न करते हैं। इस तरह भय या तो भविष्य में होता है या भूत में कभी वर्तमान का नही होता।

इस पर भी सोचो कि जब तुम डर से भरे हुए होते हो तब क्या होता है ? सोचो कि तुम्हारे मन में इस बात का डर है कि तुम अपने सहपाठियों में लोकप्रिय नहीं हो, या यह सोचकर कि वह तुम्हारे बारे में क्या सोचते हैं, या यदि वह तुम्हें पूर्ण रूप से स्वीकार नहीं करते तब क्या होता है ? तुम हर बात में उनकी नकल करने लगते हो, है ना ?

तुम हर बात में जैसे उनके कपड़े, उनका बातचीत करने का ढंग, उनकी भाषा, उनकी बातें, उनकी चाल, काम करने का ढंग आदि में उनकी देखा-देखी करते हो। अगर तुम अलग ढंग से कपड़े पहनना या कुछ और करना चाहो तो भी अपने विचारों को दबाकर वही करते हो जो और करते हैं क्योंकि तुम किसी प्रकार की लड़ाई नहीं चाहते। धीरे-धीरे इन छोटी-छोटी बातों से आगे बढ़कर तुम्हारा सोचने का ढंग भी औरों के समान हो जाता है क्योंकि तुम औरों से अलग कुछ सोचना ही नहीं चाहते। तुम्हारी मौलिकता नष्ट हो जाती है। इस प्रकार भयभीत होकर तुम सृजनात्मक शक्ति खो बैठते हो। अगर तुमने अपने आपको सदा दूसरों के भय रूपी पिंजड़े में बंद रखा तो यह कभी न जान पाओगे कि स्वतंत्रता क्या होती है और ध्यान रखो, यह बात बड़ों पर भी उतनी ही लागू होती है। कई पुरुष स्त्रियाँ समाज के विचारों से बड़े डरते हैं। उनके मन में सदा इस बात का भय रहता है कि लोग उनके बारे में क्या कहेंगे। इस दृष्टि से वे बिलकुल बच्चों के समान हैं। वे भी स्वतंत्र और खुश नहीं होते और इसी कारण उनकी मौलिकता तथा सृजनात्मकता नष्ट हो जाती है।

फिर सोचो कि हम इस वस्तु ''भय'' के साथ क्या करें। क्या यह उचित है कि हम उसकी अनदेखी कर दें और अपने स्कूली जीवन में छोटे-छोटे भयों को इकट्ठा होने दें और यह आशा करें कि एक दिन हम उस भय से मुक्त हो जाएँगे। क्या यह संभव है यदि हम इन छोटे भयों को दूर हटाने का प्रयत्न अभी न करें? क्या यह उचित है कि हम भय से भागकर कोई खेल खेलें या फिर कोई मजेदार सिनेमा देखें और यह आशा करें कि उससे भाग कर हम भय को दूर कर सकते हैं? अथवा क्या हम उसे दबा लें और रोज अपने आप से कहें, ''मैं बहादुर हूँ, मैं किसी से नहीं डरता'' जबकि वास्तविकता यह है कि हम डरे हुए हैं।

अथवा क्या यह अधिक बुद्धिमानी का कार्य होगा कि तुम हर घटना को समझने का प्रयत्न करो जब वह घटती है ताकि भय की जड़ तुम्हारे मन में पनपने ही न पाए और ये छोटे भय तुम्हारे दिल में जमा होकर एक बड़े डर का रूप न ले लें। कुछ दिन प्रयत्न करो और देखो कि क्या होता है।

साथ ही घर तथा स्कूल में इस विषय पर चर्चा करो। अपने भय को दूसरों के साथ बांटना काफी मजेदार हो सकता है।

भावनाएँ क्या हैं ? वे किस प्रकार जन्म लेती हैं ? क्या तुम अपने अंदर किसी प्रबल मनोभाव के उत्पन्न होने के प्रति सजग रहे हो ?

उदाहरण के लिए, क्या तुम कभी किसी छत या बरामदे में गए हो और अचानक पूनम के चाँद की ओर देखा है ? तुम्हें उस क्षण कैसा लगा ? क्या तुम्हें चाँद की चमक को देखकर ऐसा नहीं लगा कि वह दृश्य असाधारण है ? क्या तुम्हारे दिल की धड़कन तेज नहीं हुई और क्या तुम्हारा पूरा शरीर एक आनंद से भर नहीं गया ? क्या तुम्हारे साथ कभी ऐसा हुआ है ? अथवा क्या अपने संगी इकलौती तारे के साथ नए चंद्रमा के रूप ने तुम्हारा ध्यान आकर्षित किया है ?

क्या तुमने किसी पहाड़ की विशालता या गरिमा का अनुभव किया है ? किसी किताब में दी गई तस्वीरों से नहीं परंतु उसके सामने खड़े होकर उसकी बर्फीली चोटियों को निहारते हुए, क्या तुमने किसी पहाड़ का अनुभव किया है ?

सागर और उसकी विशालता को देखकर तुम्हें कैसा लगता है ? समुद्र के किनारे की रेत पर खड़े होकर क्षितिज के उस पार देखना, थिरकती नाचती लहरों के संगीत को सुनना, जो कभी तो शांत होती है, कभी खिलवाड़ करती है और कभी क्रोध में गर्जन करती है, तुम्हें कैसा लगता है ? क्या तुमने कभी इस पूरे दृश्य को आँखों तथा अपने कानों से अपने अंदर भरा है ? अगर नहीं, तो अगली बार प्रयत्न करो और देखो कि तुम्हारे अंदर किस प्रकार की भावनाएँ जन्म लेती हैं।

प्रकृति बड़ी दानी है और उसके पास लुटाने को बहुत कुछ है। अगर तुम अपना दिल खोलकर रखो तो प्रकृति-ध्वनियों को सुन सकते हो और पत्तियों के बीच हवा की सरसराहट, पक्षियों के मधुर स्वर, बहते नाले का स्वर समझ सकते हो। तुम पुष्पों पर ओस की बूंद, आकाश के बीच वृक्ष की रूपरेखा और सागर की लहरों पर डूबते हुए सूर्य की सुन्दरता को देख सकते हो। ध्वनियों तथा दृश्यों का यह सौंदर्य हमारे अंदर आश्चर्य और सुखद भावनाएँ

उत्पन्न करता है।

कुछ अन्य अवसर ऐसे होते हैं, जब हमारी भावनाएँ दूसरे प्रकार की होती हैं। कभी-कभी तुम किसी भिखारी की तरफ से मुँह फेर लेते हो क्योंकि उसकी दशा का दुःख तुमसे सहन नहीं होता अथवा किसी अपाहिज व्यक्ति के प्रति दया या करुणा का भाव हो सकता है जिसकी तुम सहायता करना चाहते हो। यह भावना किसी ऐसी औरत के प्रति भी हो सकती है जिसके हाथ में छोटा-सा बच्चा है और अपने सिर पर एक बड़ी सी टोकरी को सँभालती सड़क पार करने की कोशिश कर रही है। यह भावना एक ऐसे दुःख के रूप में भी हो सकती है जिसका अनुभव तुम्हारे हृदय ने किया हो। जब किसी कुत्ते को किसी ने पत्थर मारा हो, किसी घोड़े को तेज भगाने के लिए चाबुकों द्वारा पीटा गया हो अथवा किसी कमजोर आदमी को बड़े बोझे से भरा हुआ रिक्शा खींचता देखना। इसके बाद एक भावना ऐसी होती है जो शांति और भय से भरी होती है जब तुम किसी अर्थी को कंधों पर ले जाते देखते हो।

अन्य परिस्थितियों पर भी गौर करो। गंदी गली की दुर्गंध, खुले शौचालय की दुर्गंध, आँखों के सामने सड़क पर गरीब व्यक्तियों की दशा, रेलवे स्टेशन की अनोखी आवाजें और वहाँ की मिश्रित गंधों को भी निश्चित रूप से सूची में मिलाया जा सकता है।

विभिन्न परिस्थितियों में हमारी प्रतिक्रियाएँ विभिन्न प्रकार की होती हैं। हम इन परिस्थितियों से किस प्रकार निपटते हैं। इनका हम पर क्या प्रभाव पड़ता है ? यह एक रोचक अध्ययन होगा। हम कितनी प्रबलता के साथ अनुभव कर पाते हैं ? क्या तुम यह प्रयत्न कर देखोगे कि तुम परिस्थितियों का सामना कैसे करते हो ? और यदि तुम्हें डायरी लिखने की आदत है तो जिन बातों को तुम देखते हो उनके प्रति उत्पन्न होने वाली भावनाओं के बारे में भी लिखते चलो।

अब चलो हम एक ऐसी भावना को लेते हैं जो छोटे, बड़े, शिक्षक, विद्यार्थी, माता-पिता, मित्रों सभी द्वारा अनुभव की जाती है, क्रोध की भावना। क्या तुम पता लगा सकते हो कि वह कौन सी बातें हैं जिनके कारण तुम क्रोधित होते हो ?

एक बार तुम जैसे विद्यार्थियों के समूह से यह प्रश्न किया गया कि वे उन बातों का वर्णन करें जिनसे उन्हें बहुत क्रोध आता है। कुछ दिलचस्प उत्तर मिले जो इस प्रकार हैं:

''जब मुझे उस कार्य के लिए दोषी ठहराया जाता है जो मैंने नहीं किया।''

"जब किसी ने मेरे मित्र का अहित किया हो।"

"जब अध्यापक बिना किसी कारण मेरे विरुद्ध हों और पक्षपात करें।"

"जब मैं कोई वस्तु दिल से चाहता हूँ और वह नहीं मिलती।"

"यह करो वह करो कहकर जब माँ हमेशा मेरे पीछे पड़ जाती है।"

यह सोचो कि जब शरीर क्रोध से भरा हुआ होता है तब हमारे शरीर की कितनी शक्ति नष्ट हो जाती है। ध्यान दो कि तुम किस तरह अपने अंदर भावनाओं को दबाकर अंदर ही अंदर खौलते हो या फिर क्रोध में बरस पड़ते हो और ऊटपटांग बकने लगते हो या फिर कभी-कभी क्रोध में रो भी पड़ते हो। सोच कर देखो कि ऐसी घटना के बाद फिर साधारण स्थिति में आने में कितना समय लग जाता है।

हमारे लिए अपने आपको और अंदर की भावनाओं को समझना बड़ा महत्वपूर्ण है। जिस तरह हमारे चारों ओर कई अनोखी असाधारण वस्तुएँ हैं, उसी तरह हमारे दिलो दिमाग में भी कई वस्तुएँ हैं जिनको समझाया नहीं जा सकता। हमें लंबी यात्राओं में जाना अच्छा लगता है और रास्ते चलते समय क्या हम गाँवों की सुंदरता, पृथ्वी के अद्‌भुत दृश्य तथा आकाश और सागर के विषय में और जानने का कुतुहल नहीं रखते। इसी तरह हमारे अंदर को ढूढ़ने की यात्रा पर भी जाने का अपना ही एक मजा है। क्या अपने आप के बारे में, अपने विचारों, अपनी भावनाओं अपनी प्रतिक्रियाओं और अपने कार्यो को जानने में मजा नहीं है? सुंदरता तो इसमें है कि अपने अंदर की इस यात्रा के लिए तुम्हें न तो बहुत धन खर्च करने की आवश्यकता है या किसी पहाड़ पर जाने की, तपस्या करने की या फिर कुछ और करने की। यदि तुम अपने पर ध्यान दो, अपनी चाल, बातों, पहनावा, मित्रों के साथ, शिक्षकों तथा माता-पिता के साथ अपने व्यवहार पर ध्यान दो। यदि तुम वृक्ष को देखना सीख सको, फूलों और पृथ्वी की सुंदरता देख सको, यदि तुम लोगों और व्यवहारों के प्रति सजग रहो तब तुम अपने विषय में तथा अपनी भावनाओं के विषय में बहुत कुछ सीखना प्रारंभ करते हो।

चलो हम तुम्हारे जीवन के एक दिन को देखें और जानने का प्रयत्न करें कि क्या उसमें प्रश्नों के लिए कोई स्थान है ? तुम अभी छोटे हो और स्वभावतः कुतुहल से भरे हुए हो और संभवतः तुम्हारा दिमाग अनेक प्रश्नों से भरा हुआ है। तुम्हारे मन में अपने चारों ओर के जीवन को लेकर, किताबों में पढ़े गए विषय को लेकर और दूसरों द्वारा बताई गई वस्तुओं के संबंध में तरह-तरह के प्रश्न उठते हैं। वस्तुतः हम यह कह सकते हैं कि सीखने की कला और प्रश्न करने की कला का गहरा संबंध है।

ध्यान दो कि स्कूल में जो कुछ होता है, वह इससे बिलकुल अलग होता है। शिक्षक प्रश्न करते हैं और तुम उत्तर ढूंढते हो। शायद उन्होंने तुम्हें भौतिकी या इतिहास पढ़ाया है और वह यह जानने के लिए बड़ी सावधानी से प्रश्न करते हैं कि उनकी बात तुम्हारी समझ में आई या नहीं। इस तरह धीरे-धीरे तुम्हारा दिमाग विभिन्न विषयों के प्रश्नों के उत्तर से भर जाता है। उसमें ऐसे प्रश्नों के लिए कोई स्थान नहीं होता जिसका उत्तर तुम स्वयं ढूंढना चाहते हो। यदि कोई बुद्धिमान शिक्षिका हैं तो तुम्हें प्रश्न करने का अवसर देंगी और तुम्हें अपने आप उत्तर खोजने का भी अवसर देंगी। और इस तरह तुम्हारा दिमाग बढ़ता रहेगा क्योंकि उसमें आश्चर्य तथा उत्सुकता दोनों हैं।

वास्तविकता तो यह है कि ज्ञान के हमारे विभिन्न क्षेत्र या हम जिन्हें विषय कहते हैं उनका जन्म इसी आश्चर्य और उत्सुकता के कारण हुआ। गुफाओं के अंदर की गई चित्रकला, चट्टानों पर खुदे हुए शाही परमानों, सिक्कों, चर्मपत्रों आदि को देखकर इतिहासकार के मन में प्रश्न उठा, ''यह किसने बनाया होगा ? वे कब जीवित थे ? उनका जीवन किस प्रकार का था ?'' और इस तरह मनुष्य की कहानी का अध्ययन प्रारंभ हुआ। मौसम तथा वर्षा, पहाड़ों एवं भूचालों को देखकर मनुष्य के मन में पृथ्वी को लेकर तरह-तरह के प्रश्न उठे और फिर जन्म हुआ उस विषय का जिसे आज हम भूगोल कहकर पुकारते हैं। इतिहास का संबंध जहाँ एक ओर मनुष्य तथा समय से जुड़े प्रश्नों से था वहाँ दूसरी ओर

भूगोल मनुष्य तथा अंतरिक्ष के संबंध के प्रश्नों के उत्तर दे रहा था। इस ब्रह्मांड के भौतिक नियमों को देखकर मनुष्य के मन में प्राकृतिक क्रियाओं के प्रति जिज्ञासा जागी जिसके परिणामस्वरूप भौतिकी तथा रसायनशास्त्र का जन्म हुआ।

न्यूटन के गुरुत्वाकर्षण सिद्धांत में उसे अपने इस प्रश्न का उत्तर मिला कि पेड़ से सेब नीचे ही क्यों गिरता है? प्राणि शास्त्रियों ने पौधों तथा अन्य प्राणियों के संबंध में प्रश्न किया। सभी विषयों का जन्म इसी प्रकार हुआ। वे प्रश्नों के उत्तर हैं। उनका प्रारंभिक बिंदु आश्चर्य है जो कि उत्सुकता और फिर अन्वेषण को जन्म देता है। क्या भाषा को भी हम इसी श्रेणी में रख सकते हैं? उसका उद्‌गम कहाँ से हुआ? इस पर जरा सोचो।

अपने रोजमर्रा के जीवन में भी तुम हमेशा इस प्रकार की बातें देखते हो, है ना? तुम बगीचे में एक सांप देखते हो और उससे डरकर भागने की बजाए तुम उसे पास से देखना चाहते हो। उसकी त्वचा को तथा उसकी बलखाती चाल को देखकर आश्चर्य में डूब जाते हो। सड़क पर तुम एक टूटी मोटर देखते हो और तुम्हारे मन में कई प्रश्न उठते हैं कि यह कैसे हुआ और अब इसका चालक इसे कैसे ठीक करेगा? तुम सुनते हो कि स्कूल में कम्प्यूटर लाया जा रहा है और तुम उसके बारे में और अधिक जानना चाहते हो। रात से दिन के होने और अगले दिन के आने में हमारे चारों तरफ के वातावरण को देखकर हमारे मन में कई प्रश्न उठते हैं।

इसी तरह भावनाएँ भी प्रश्नों को जन्म देती हैं। तुम बहुत से ऐसे लोगों को देखते हो जो गरीब हैं और तुम कई ऐसे लोगों को देखते हो जो बहुत अमीर हैं और तुम्हारे मन में यह स्वाभाविक प्रश्न उठता है कि "ऐसा क्यों है?" क्यों कुछ व्यक्ति कष्ट उठाते हैं? क्यों इस तरह का अंतर हैं? "क्या दुनिया में न्याय नाम की कोई वस्तु नहीं?" तुम ऐसे लोगों की कहानी सुनते हो जो आपस में लड़ते रहे हैं और तुम्हारे मन में प्रश्न उठता है "क्या हम प्रसन्नता पूर्वक नहीं रह सकते, लोग क्यों लड़ते हैं" इत्यादि। करुणा भी कई प्रश्नों का स्त्रोत है।

अगर तुमने प्रश्न करने की यह कला सीख ली और अपने दिमाग को सजग बनाए रखा तब तुमको पता चलेगा कि तुम विचारों तथा विश्वासों का अंधानुकरण नहीं करते। जब तुम समाचार पत्र पढ़ोगे तो किसी भी समाचार को पढ़कर तुम अति भावुक नहीं बनोगे फिर चाहे वह अच्छा हो या बुरा। तुम क्षण भर के लिए यह सोचोगे कि क्या यह खबर सच्ची हो सकती

है? कभी कोशिश करके देखो। अगर तुमसे कोई यह कहे कि यदि तुमने ऐसा किया तो तुम्हें पुरस्कार मिलेगा तो तुम उसकी जांच कर देखोगे कि वह उचित है या नहीं। दिमाग का इस रूप में परिष्कार करना जो सुनकर किसी बात पर शांत भाव से सोच सकता है, बहुत अच्छी बात है। यदि तुम्हारा दिमाग दूसरों के विचारों तथा विश्वासों से भरा हुआ है तो वह ऐसे भंडार गृह के समान है जिसमें तिल मात्र भी जगह नहीं और न ही जिसकी कोई खिड़की है। क्या यह बात सच नहीं है?

तब क्या तुमने गौर किया है कि जब तुम भीड़ भाड़ से दूर, बिलकुल अकेले, शायद रात के समय होते हो तब कुछ वैयक्तिक प्रश्न तुम्हारे दिमाग में उठते हैं?

आज मैं ''क'' पर क्यों क्रोधित हुआ?

मैं छोटी-छोटी बातों पर क्यों क्रोधित हो जाता हूँ?

चिंता क्या है? मुझे किन बातों का भय है?

छोटे बड़े प्रश्न, कभी बेतुके प्रश्न और कभी गंभीर प्रश्न। यह उस समय होता है जब तुम अपने आप से वार्तालाप कर सकते हो, जब तुम्हें अन्य कोई अपने प्रश्नों से तंग नहीं कर सकता। यदि हम इसी प्रकार अपने आप से प्रश्न करना सीख लें, अपने अंदर हो रही बातों को जान लें, तब हम अपने अंदर की दुनिया की कई दिलचस्प बातों के बारे में जान सकते हैं, ठीक उसी प्रकार जैसे हमने अपने बाहर की दुनिया के विषय में कई प्रश्न उठाए और नए तथ्यों का पता लगाया।

अपने आप से बातचीत करने का एक उदाहरण देखो, जहाँ एक प्रश्न से दूसरा प्रश्न निकलता है।

आज मैं इतना घबराया हुआ क्यों हूँ?

क्या इस कारण कि मेरी परीक्षा होने वाली हैं?

जब मैंने अच्छी तरह से पढ़ाई की है तो फिर मैं क्यों डर रहा हूँ?

क्या मुझे इस बात का डर है कि मैं अनुत्तीर्ण हो जाऊँगा?

तुम शायद अनुत्तीर्ण न हो।

पर हो सकता है मैं अनुत्तीर्ण भी हो जाऊँ।

तब क्या तुम्हारा भय वास्तविक है?

बिलकुल तो नहीं, परंतु यह एक ऐसा विचार कि शायद कुछ होगा।

विचार क्या है ?

वह जो दिमाग में उत्पन्न होता है।

क्या यह कोई वस्तु है ?

शायद ऐसी ही है हालांकि हम उसे उस तरह नहीं देख सकते जिस तरह हम कुर्सी देखते हैं।

विचार कहाँ रहते हैं ?

शायद दिमाग में।

वे कैसे जन्म लेते हैं ?

हमारे बाहर के लोगों के संबंध के कारण। उदाहरण के लिए मेरे मन में यह विचार आया कि मैं अनुत्तीर्ण हो जाऊँगा क्योंकि मेरा सामना परीक्षा से हुआ है। फिर व्यक्ति को विचारों से क्यों डरना चाहिए। हाँ, यह बेतुकी बात तो है फिर भी ऐसा ही है।

विचार प्रक्रिया क्या है ?

अब इन प्रश्नों के आधार पर प्रश्न करते चलो और तुम शायद कुछ नई महत्वपूर्ण वस्तु की खोज कर पाओगे, शायद उतनी ही महत्वपूर्ण जितनी कि आइंस्टाइन की खोज।

अपने अंदर तथा बाहर हो रही बातों पर प्रश्न करने में बड़ा मज़ा मिल सकता है।

वे सब के सब शहर के किशोर भवन में वैज्ञानिक विषय पर एक चित्र देखने के लिए इकट्ठे हुए थे। सबकी उम्र चौदह वर्ष के आसपास थी। वे सब वहां समय से पहले ही पहुँच गए थे अगैर उनमें से एक लड़का अपने साथ एक फिल्मी पत्रिका लेकर आया था। बस यही बहुत था। उनके बीच एक उत्साह भरा वार्तालाप प्रारंभ हो गया था। वार्तालाप का प्रारंभ एक चलचित्र तारिका के बालों के फैशन से प्रारंभ हुआ और धीरे-धीरे अत्याधुनिक प्रकार के पैंटों, कुरतों, साड़ी आदि पर चर्चा होने लगी और स्मिता पाटिल, राखी, रेखा, नीतू, जीनत के नाम बार बार सुनाई देने लगे। यह बात बिल्कुल स्पष्ट थी कि लड़कियां अपनी अपनी प्रिय फिल्मी हीरोइनों के समान ही अपने आप को सजाती थीं।

लड़कों के अपने हीरो थे। धर्मेंद्र के नाम की चर्चा की गई कि किस प्रकार उसने उक्त फिल्म में अपना नाम बना लिया। किसी का हीरो कमल हासन था। एक कोने में दो लड़के अमिताभ बच्चन की तरह ''डिशूम डिशूम'' की नकली लड़ाई लड़ रहे थे।

फिल्मी हीरों से बात क्रिकेट पर आ पहुँची और लड़के और लड़कियां दोनों के ही सुनील गावस्कर, बेदी, कपिलदेव, यशपाल शर्मा, इमरान खान तथा क्लाइव लॉयड आदि प्रिय खिलाड़ी थे। रन संख्या, बल्लेबाज़ी तथा गेंदबाजी और कौन कब आउट हुआ इन सब के विषय में छोटी से छोटी सी बात भी उन सबको ज्ञात थी। विचित्र बात यह थी कि यही छात्र इतिहास में तिथियां याद नहीं रख पाते थे और शिक्षकों को बड़ी कठिनाई होती थी। वे येह समझ लेते कि शायद उनकी स्मरण शक्ति अच्छी नहीं हैं। क्रिकेट और उनके हीरों के प्रति उनके लगाव की तुलना किसी वस्तु से नहीं की जा सकती थी। चलचित्र तथा क्रिकेट उनके जीवन के केंद थे।

पदमा किसी और साँचे में ढली थी। वह इतिहास की कई पुस्तकें पढ़ती और माँनवता को शांति देने वाले तथा सहायता करने वाले फ्लोरेंस नाइटिंगेल, गौतम बुद्ध, अशोक सेंट फ्रांसिस जैसे महापुरूषों के जीवन से बहुत प्रभावित हुई थी। वह आजकल के चलचित्र भी

देखती थी और कभी-कभी उसे अच्छा भी लगता था। साथ ही वह क्रिकेट में भी रुचि लेती थी तथा सुनील गावस्कर के कारनामों में भी उसे मज़ा आता था। परंतु एक विषय में वह सबसे अलग थी। वह दूसरों की प्रशंसक थी पर अपनी स्वतंत्रता का मूल्य भी पहचानती थी। वह अपने मित्रों के साथ इस बात पर बहस करती कि वह किसी हीरो अथवा हीरोइन की नकल नहीं करेगी। वह अपनी मौलिकता नहीं खोना चाहती थी, और स्वयं वस्तुओं के बारे में जानना चाहती थी।

उस दिन शाम उनमें से एक के घर में वृद्ध कांग्रेस कार्यकर्त्ताओं की एक सभा थी जिसमें सबने बड़ी भक्ति से महात्मा गाँधी के त्याग, सरदार पटेल के लौह व्यक्तित्व, जवाहरलाल नेहरू की आकर्षण शक्ति, मौलाना आज़ाद की प्रतिभा, सरोजनी नायडू की मोहिनी शक्ति, राजगोपालाचारी की चतुराई, सी. आर. दास के वक्तृत्व प्रतिभा को याद किया। अनेक बड़े बड़े व्यक्तियों के नाम याद किए गए जिन्होनें देश की स्वतंत्रता के लिए अपना सब कुछ त्याग दिया था। वे हर प्रकार के कष्टों का सामना करने के लिए तैयार थे क्योंकि उनके सामने भारत की स्वतंत्रता ही सब से बड़ी वस्तु थी। यह स्पष्ट था कि आज उपस्थित कांग्रेस व्यक्तियों के जीवन का केन्द्र यही नेता थे। यही व्यक्ति कभी कांग्रेस के स्वयंसेवक तथा कार्यकर्ता थे। पुराने दिनों की याद से उनकी आंखें भर आई थीं। आज की पीड़ी के लिए यह केवल नाम थे जिनको उनके अध्यापक कक्षा में दुहराते थे और महान जीवनियों के उदाहरण के रूप में उनके सामने रखते थे। उनमें से कुछ ने अपने मन ही मन यह निश्चय कर लिया था कि बड़े होकर वे भी इतिहास के इन महान व्यक्तियों के समान बनेंगे। उन्हें महापुरूषों की जीवनियों से प्रेरणा मिली थी। अन्य छात्रों की इन कहानियों में कोई रूचि नहीं थी। वे अपने जीवित हीरो की नकल करना चाहते थे।

उस रात जब पदमा ने अपने छोटे भाई को बिस्तर पर लिटाया और उससे पूछा कि वह कौन सी कहानी सुनना चाहता है तो चटाक से उत्तर मिला ''मुझे अंतरिक्ष यात्री की कहानी सुनाओ जो पृथ्वी पर आता है और किस प्रकार उसकी भेंट पृथ्वी के लड़के से होती है।'' पदमा ने उसे यह कहानी सुनाई और जल्दी ही वह सो गया। यह अजीब किंतु सत्य बात है कि अंतरिक्ष मानव तथा रोबो आजकल के नन्हे मुन्नों के हीरो बन गए हैं और वे ''स्टार–बार'' गेलटिका एंटर प्राइस तथा स्टार ट्रैक के नायकों की पूजा करते हैं।

ध्यान दो कि किस प्रकार इन तीन चार पीढ़ियों में हमारे हीरो बदलते मूल्यों, अपने

निकट के वातावरण तथा हर नई चुनौती के कारण कितना बदल गए हैं। क्या मनुष्यों द्वारा निर्मित मशीनें हमारे नए हीरो बनेंगी?

जो प्रश्न हमें स्वयं से करना है, वह यह कि मेरा भी अपना कोई हीरो है जिसकी जाने अनजाने में मैं नकल करता हूँ? अगर है तो वह फिर कौन है? मेरे विचार और मेरी आदतें किस प्रकार उनसे प्रभावित हुई हैं? क्या मैं भी बड़ा होकर रोबो तथा अन्य कंप्यूटर नायकों के पीछे भागूंगा? तब उस समय मेरा क्या होगा?

पुस्तकों से जूझना

सीखने के कई ढंग हैं। प्रकृति को ध्यान से देखने पर हम पौधों तथा वृक्षों के बारे में, पशु पक्षियों के बारे में बहुत कुछ अध्ययन कर सकते हैं। दूसरे व्यक्तियों से भी बहुत कुछ सीखते हैं। अनुभव भी हमें बहुत कुछ सिखाता है और स्कूल में तो हम शिक्षकों तथा किताबों से बहुत कुछ सीखते हैं।

पाँच वर्ष की आयु में जब अपर्णा को हिंदी,अंग्रेज़ी तथा गणित की किताबें मिलीं तो वह बहुत प्रसन्न थी। पहले दिन पहली कक्षा में उसे तस्वीरों के अलावा कुछ बहुत अधिक समझ में नहीं आया, सिवाय इसके कि उसे किताबें, उनकी महक बड़ी अच्छी लगी और सबसे बड़ी बात तो यह थी कि वह अपने आपको बहुत बड़ा महसूस कर रही थी। अध्यापिका ने उसे उन किताबों पर जिल्द चढ़ाने को कहा और उस दिन माँ को कोने की दुकान से भूरे रंग का कागज लाना पड़ा। उन्होंने उसकी किताबों और कापियों पर जिल्द चढ़ाकर उन पर साफ-सुथरा नाम का लेबल चिपका दिया था। दूसरे दिन जब अध्यापिका ने यह देखा और उसकी प्रशंसा की कि उसकी किताबों पर बड़ी सावधानी से जिल्द चढ़ा दी गई है तब अपर्णा और अन्य बच्चे प्रसन्न थे।

पहली कक्षा से कक्षा पाँच तक की यात्रा बड़ी ही उत्साहपूर्ण थी और वह तथा उसका मित्र संजय दोनों ही अपनी किताबों से प्यार करते थे और उन्हें साफ सुथरा रखते थे। धीरे-धीरे उन्होंने पढ़ना और लिखना सीख लिया और अब बिना शिक्षक पर निर्भर हुए अपने आप भी पढ़ लेते थे। उन्हें इस बात का गर्व था कि बिना माँ की या शिक्षक की सहायता के गणित के कई प्रश्न वे अपनी पाठ्य पुस्तक से हल कर लेते थे।

छठी कक्षा से कुछ परिवर्तन होने लगा। किताबें बड़ी कठिन थीं और उनकी भाषा उनकी समझ से बाहर थी। विषय अधिक थे। पढ़ाई के घंटे भी बड़े छोटे-छोटे होते थे और अपनी आवश्यकता के लिए वे किसी एक शिक्षक पर निर्भर नहीं रह सकते थे। हर घंटी के साथ एक दूसरा शिक्षक आता था। हर एक विषय के लिए एक अध्यापक होता था और उन्हें

अंग्रेज़ी, हिंदी, प्रांतीय भाषा, संस्कृत, गणित, बीज गणित, रेखा गणित, सामान्य विज्ञान, सामाजिक अध्ययन, कला और संगीत की शिक्षा दी जाती थी। नए-नए शिक्षकों को जानने मे एक प्रकार का मजा था लेकिन धीरे-धीरे वे घबराने लगे। पुस्तकों के साथ उनके संबंध टूटते जा रहे थे। उनकी देखरेख के प्रति भी बहुत कम ध्यान दिया जा रहा था। हरदम एक दौड़ सी लगी रहती। अपर्णा और संजय ने सोचा कि यदि वे स्वयं पढ़ने की कला की ओर ध्यान दें तो वही बहुत है। वे पढ़ाई में दिलचस्पी लेते थे और परिश्रमी थे परंतु उनकी सारी कोशिश शिक्षक की बातों को सुनने में लग जाती थी। कभी-कभी तो उनकी बातें बड़ी अच्छी तरह से समझ में आती थीं और कभी-कभी केवल आधी ही बात समझ में आती थी। अध्यापक की कही कई बातों को वे एक कॉपी में उतार लेते और घर पर या कक्षा में उन पर आधारित कुछ प्रश्न कर लेते। इस प्रक्रिया के दौरान किसी विषय के प्रति लगाव नाम की कोई वस्तु ही न रह गई थी और न ही अधिक से अधिक जानने की इच्छा ही रह गई थी। वे केवल हर दिन दौड़ लगाते रहते और यह सिलसिला कक्षा आठ तक चलता रहा। और विषय, और किताबें, कम होती रुचि और बँटा हुआ ध्यान, यही उनका जीवन हो गया था। वे खेलों में अपना मन लगाते। वे वाद-विवाद, नाटकों में भी भाग लेते। वे कैंपों में भी जाकर नए–नए मित्र बनाते। वे अपनी उम्र के हिसाब से कई वस्तुएं जानते थे परंतु किताबों से उनकी कोई घनिष्ठता नहीं थी, जिनसे कभी वे प्यार करते थे। उन्हें सहन करने के सिवाय अन्य कोई चारा न था। वास्तव में अब भी जो किताबें उनको अच्छी लगती थीं, वह थीं कॉमिक्स जो उन्हें स्कूल से नहीं मिलती थीं। वे उन्हें बाहर से खरीदते थे और आपस में एक दूसरे को देते थे। संजय, अपर्णा तथा उनके मित्रों ने एस्टरिक्स, सुपरमैन, टार्जन, अमर चित्र कथा की सभी किताबें पढ़ डाली थीं। वे इन किताबों को घोंटकर पी जाते थे परंतु उन्हें इतिहास या विज्ञान की कोई किताब बोझ के समान लगती थी।

नवीं तथा दसवीं कक्षा में कहानी कुछ दूसरी ही थी। हर सप्ताह छोटी–छोटी परीक्षाएं होती थीं। एक सत्र के पश्चात् बड़ी परीक्षा होती और साल के अंत में वार्षिक परीक्षा होती थी। यद्यपि वे स्कूल में छह से सात घंटे तथा घर में एक दो घंटे पढ़ते थे पर उन्हें ऐसा लगता कि वे किताबों से युद्ध लड़ रहे हों। विषयों में बढ़ती हुई जटिलता, अधिक कठिन किताबें तथा कक्षा में बढ़ती हुई अपेक्षाएं। दसवीं कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते इस प्रणाली ने उनकी कमर तोड़ दी थी और वे मन ही मन इन सबसे घृणा करने लगे थे – अपर्णा और संजय भी।

याद है उन्होंने पाँच साल की आयु में कितने चाव से पढ़ाई प्रारंभ की थी।

जैसे-जैसे परीक्षाओं का समय पास आने लगा वैसे-वैसे जीवन में भी परिवर्तन होने लगा। उन्होंने देखा कि केवल रात के समय ही वे पूरा ध्यान लगाकर पढ़ सकते हैं। दिन में वे सो जाते। वे रात को साढ़े नौ बजे पढ़ाई आरंभ करते और सुबह दो बजे तक उसमें लगे रहते। सुबह पाँच बजे वे उठते और फिर से जुट जाते। दिमाग तो ताजा होता किंतु किताबें, विचार तथा विषय सभी बासी थे। उन्हें बहुत कुछ याद रखना होता। लेकिन उनको नोट्स बनाने या संदर्भ ग्रंथों को पढ़कर सूचना ग्रहण करने का अभ्यास न था। उन्होंने बहुत देर से यह अनुभव किया कि वे अध्यापक तथा पाठ्य-पुस्तक से बंधे हुए हैं। वे जब अपनी परीक्षाओं की तैयारी में जुटे हुए थे तब मन में यह पछतावा था कि उनका कितना समय व्यर्थ हो गया। वे घबराए हुए थे।

अपर्णा और संजय ने कहाँ गलती की? क्या तुम भी उसी अवस्था में हो? क्या तुम भी बिना मन लगाए कई किताबों से हाथापाई कर रहे हो? इसके पहले कि बहुत देर हो जाए क्या तुम कुछ करना चाहोगे?

स्कूल में पढ़ते समय पढ़ने की एक कला होती है और उसके लिए सबसे पहले आवश्यकता इस बात की है कि मन के अंदर की स्वाभाविक उत्सुकता को उसी प्रकार जीवित रखा जाए जिस प्रकार वह हमारे बाल्यकाल में हमारे मन के अंदर होती है। क्या तुम यह जानना नहीं चाहते कि इन किताबों के अंदर क्या है? क्या तुम किताबों की मूल बातों को ग्रहण कर उससे आगे बढ़ सकते हो? क्या तुम इतिहास या फिर रसायन शास्त्र की किताब को बैसाखी जैसा मानकर अपनी रुचि बनाए रखते हुए खोज की एक लंबी यात्रा तय कर सकते हो? आश्चर्य तथा उत्सुकता से ही रुचि उत्पन्न होती है और यह बहुत आवश्यक है। बचपन में तुम्हारे दिल में उत्सुकता की ज्वाला जलती रहती थी। कैसी भी हालत में इसे बुझने मत दो। वह तुम्हारी अपनी संपत्ति है।

बिना समझे पढ़ना न केवल समय को व्यर्थ करना है, किंतु इस प्रकार पढ़ने से दिमाग में कुछ नहीं घुसता। पढ़ने और स्वयं उसका अर्थ निकालने के मार्ग में कौन-कौन सी बाधाएँ आती हैं? सबसे पहले उनके बारे में मालूम करो। मेरी क्या कठिनाइयाँ हैं? वह कोई बाहर की वस्तु हो सकती है उदाहरण के लिए : तुम शब्दो से अपरिचित हो और अर्थ निकालने के लिए हर बार तुम्हे शब्दकोश की आवश्यकता पड़ती है और जल्दी ही तुम ऊब जाते हो।

विचार बड़े जटिल होते हैं। तुम्हारी समझ में कुछ नहीं आता। कठिनाइयाँ मन के अंदर भी होती हैं, उदाहरण के लिए जब तुम्हारी आँखें किताबों में छपे अक्षरों में होती हैं, उस समय तुम्हारा दिमाग कहीं और होता है। उस समय दिमाग पढ़ने में नहीं होता, तुम पढ़ना नहीं चाहते, शायद किसी कारण तुम्हे डांट पड़ी, तुम्हारे मन को चोट लगी और किताबों में तुम्हारी कोई दिलचस्पी नहीं। तुम्हारे मन में आने वाली परीक्षाओं का इतना भय है कि तुम सामने रखी किताबों पर ध्यान नहीं देते। पढ़ाई के लिए न केवल उचित किताबों का होना आवश्यक है, परंतु उनके प्रति इच्छा या रुचि का होना भी उतना ही ज़रूरी है। अगर दिमाग में हलचल मची हो और किताब भी कठिन हो तब वहाँ पर किस प्रकार पढ़ाई हो सकती है? विश्व के विद्वानों ने पहले अपने अंदर की ज्ञान पिपासा को बढ़ाया और विश्व के अन्य विद्वानों के कार्यों से प्रेरणा ग्रहण की। यही कारण था कि किताबों से उन्हें बहुत प्रेम था। क्या तुम अपने दैनिक जीवन में शिक्षा को लेकर खोजने की भावना उत्पन्न कर सकते हो? इस विषय में तुम क्या कर सकते हो? और हम बड़े लोग तुम्हें इस दिशा में सही मार्गदर्शन देने के लिए क्या कर सकते हैं?

स्कूली शिक्षा के दौरान और भी कई कुशलताएँ सीखनी पड़ती हैं जैसे केवल शिक्षक पर ही निर्भर न रहकर अपने आप भी सीखने का प्रयत्न करना, शब्दकोश में से किसी शब्द को देखकर उसका सही संदर्भ में अर्थ पहचानना, संदर्भ ग्रंथों में से आवश्यक बातों को चुनने का प्रयत्न करना, ली गई जानकारी को सही ढंग से लिखना, दिमाग को बेकार बातों से बोझिल न बनाकर केवल उन्हीं बातों को याद रखना जो आवश्यक हैं, सुलेख की कला, प्रश्न का संक्षिप्त उतर देना, किसी बात को भली-भांति समझकर उसके बाद अपना निर्णय देना, अपने विचारों को बताते हुए किसी विषय पर निबंध लिखना, आत्मविश्लेषण करने की क्षमता तथा आलोचना को स्वीकार करना आदि, ज्ञान प्राप्त करने के क्षेत्र में यह बहुत महत्वपूर्ण है। हमारा दिमाग ही हमारा एकमात्र औजार है। अगर इसे तीखा और जीवित रखा जाए तब यह एक अच्छे औजार की तरह हमारे काम आएगा और ज्ञान प्राप्त करने में निरंतर हमारी सहायता करेगा। इस तरह उत्सुकता को जगाना और उसे बनाए रखना तथा कई तरह की कुशलताएँ प्राप्त करना बहुत आवश्यक है।

क्या तुम इस विषय में कुछ करोगे या फिर पढ़कर और पह कहते हुए कि ''कितना सच है'' चुपचाप सो जाओगे?

स्कूल की सबसे ऊँची श्रेणी के विद्यार्थियों से "मानवीय आत्मशक्ति" पर निबंध लिखकर लाने को कहा गया।

इस कक्षा के कई छात्र किताबी कीड़े थे तथा हल्की फुल्की किताबें न पढ़कर अंग्रेज़ी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में साहित्यिक किताबें पढ़ते थे। यही कारण था कि उनकी अध्यापिका ने उन्हें इतना कठिन विषय दिया। अध्यापिका ने उन्हें बताया कि वे या तो अपने अनुभवों के आधार पर अथवा किसी महान व्यक्ति के जीवन को अपने निबंध का आधार बना सकते हैं। इस निबंध को लिखने के लिए उन्हें तीन सप्ताह का समय दिया गया।

बच्चों के निबंध उनको मिले तो उनमें बच्चों जैसी उमंग तथा उत्सुकता थी क्योंकि वह यह जानना चाहती थीं कि चुनौतियों का सामना करने पर बच्चे किस प्रकार सोचते हैं। उनका विश्वास था कि स्कूल में अक्सर बच्चों को कठिन कार्य की चुनौती नहीं दी जाती और कई बार हम उनकी क्षमता को पहचान नहीं पाते।

कुल मिलाकर इन निबंधों में आत्मिक शक्ति को हर दृष्टि से सराहा गया था। अधिकांश निबंधों में "साहस" की चर्चा की गई थी तथा मनुष्यों द्वारा कठिन से कठिन परिस्थितियों में किए गए साहसिक कार्य पर निबंध लिखे गए थे। कुछ बच्चों ने अपने निबंध में मनुष्य के साहस तथा धैर्य की चर्चा की थी। कुछ बच्चों ने एडमंड हिलैरी द्वारा हिमालय पर्वतारोहण को सबसे बड़ा साहसिक कार्य माना था। एक लड़के ने इस चढ़ाई का विस्तृत वर्णन बड़े ही रोमांचक ढंग से किया था। तीन सौ फुट की कठिन चढ़ाई जहाँ तापमान शून्य से कई गुना कम होता है, जहाँ आक्सीजन यंत्र में गड़बड़ी हो जाती है तथा चढ़ाई के अंतिम चरण का विस्तृत रूप से वर्णन हुआ था। एक अन्य लड़की करूणा ने बछेंदरी पाल द्वारा हिमालय की चढ़ाई को अपने निबंध का विषय बनाया था। वह यह सिद्ध करना चाहती थी कि साहसिक कार्य करने में स्त्रियाँ भी किसी से कम नहीं।

कुछ अन्य बच्चों ने समुद्री यात्राओं के रोमांच पर निबंध लिखे। उन्होंने बताया

कि किस प्रकार पहले साधारण नावों द्वारा कोलंबस, मार्को पोलो तथा वास्कोडिगामा ने अज्ञात स्थानों की यात्रा की। उन्होंने उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों की कठिन यात्रा अभियान पर भी निबंध लिखे।

अरब के लारेंस जैसे साहसी व्यक्तियों को रेगिस्तान ने अपनी ओर आकर्षित किया है। एक छात्रा ने रेगिस्तान में ऊँट पर यात्रा से संबंधित विस्तृत जानकारी प्राप्त की थी। उसने अपने निबंध में रेगिस्तान के दिन की तपती गर्मी और रात की ठिठुरती ठंड का बड़ा ही सहज तथा स्वाभाविक वर्णन किया था। उसने मानव की असीमित शक्ति का भी वर्णन किया था।

स्वतंत्रता के लिए अपना सब कुछ अर्पण करने वाली ऐतिहासिक विभूतियों जैसे जोन आफ आर्क, झांसी की रानी लक्ष्मीबाई तथा अब्राहम लिंकन के भी उदाहरण छात्रों ने दिए। आत्मसंतोष की प्राप्ति के लिए मनुष्य हर प्रकार की चुनौतिगों का सामना करता है। यह सिद्ध करने के लिए एक लड़की ने राजकुमार सिद्धार्थ के जीवन का उदाहरण दिया तथा बताया कि किस तरह मनुष्य के दुःखों के कारण को खोजने के मार्ग में जितनी भी कठिनाइयाँ आईं उन्होने उन सबका सामना बड़े धैर्य से किया।

एक छोटी सी लड़की फ्लोरेंस नाइटिंगेल की सेवा भावना से बहुत प्रभावित थी और एक अन्य छात्रा ने अलबर्ट श्वाइत्ज़र द्वारा अफ्रीका के घने जंगलों में अस्पताल की स्थापना के बारे मे लिखा। साहस और धीरज के अतिरिक्त अटल भक्ति तथा सेवा भावना भी मनुष्य के चरित्र के मुख्य अंग हैं। बाबा आम्टे की कुष्ठ रोगियों की सेवा तथा मदर टेरेसा और हमारे अपने देश के उन अज्ञात लोगो की सेवा भावना के बारे मे ज़रा सोचकर देखो।

कुछ विद्यार्थियों का प्रिय विषय अंतरिक्ष यात्रा था और उस विषय से संबंधित सभी जानकारी उन्होंने जमा की थी। उन्होंने प्रथम रूसी अंतरिक्ष यात्री यूरी गागारिन तथा अमरीकी यात्री एलियन ग्लैन का वर्णन किया। एक छात्र ने नील आर्मस्ट्रांग द्वारा प्रथम बार चंद्रमा पर पैर रखने के विषय में लिखा और एक अन्य ने भारत रूस के संयुक्त अंतरिक्ष अभियान तथा राकेश शर्मा को अपने निबंध का विषय बनाया।

एक बच्चे ने अपोलो 13 अभियान की असफलता को अपने निबंध का विषय बनाया। उसने बताया कि किस प्रकार विभिन्न स्थानों पर स्थित वैज्ञानिकों के सामूहिक प्रयत्नों द्वारा उसे पृथ्वी पर वापस लाया जा सका। समस्या आक्सीजन और बिजली की कमी की थी और यह अत्यावश्यक था कि अधर में लटके उन यात्रियों को सुरक्षित रूप से पृथ्वी पर वापस

लाया जाए और यह निश्चय, कड़ी मेहनत तथा कुशलता द्वारा ही सम्पन्न हो सका। इस तरह धैर्य, निःस्वार्थ भाव, सहयोग आदि भी मानवीयता के प्रमुख गुण हैं।

कुछ लड़कियों ने उन बहादुर बच्चों के बारे में लिखा जिन्हें बाल दिवस के दिन वीरता पुरस्कार से सम्मानित किया गया था। एक बच्चे ने अपने प्राणों की चिंता न करते हुए बाढ़ में बहते हुए अपने छोटे भाई को बचाया, एक अन्य ने पूरे परिवार को जलने से बचाया। एक अन्य लड़की ने एक छोटे बच्चे को रेलगाड़ी के नीचे आने से बचाया। यह सब बहादुर बच्चे थे जिन्होंने दूसरों को खतरे में देखकर अपने प्राणों की चिंता न की।

कुल मिलाकर यह उस वर्ष की सबसे सफल परियोजना थी। तुम भी अपने अनुभवों से कुछ अन्य उदाहरण दे सकते हो। मनुष्य की अन्दर की शक्ति असीमित है। कभी-कभी साहसिक कार्यों को करने की भावना उसे जागृत करती है। अन्य अवसर पर कोई बड़ा दुःख मनुष्य की आंतरिक शक्ति को प्रकट करने में सफल होता है जिस प्रकार अपाहिज होने के बाद भी हेलन केलर ने इतना कुछ कर दिखाया। मानवता के दुःख ने कई आत्माओं को मानवता की सेवा के लिए प्रेरित किया है। इससे पता चलता है कि हममें असीम धैर्य, सहन शक्ति, निस्वार्थ भावना,साहस है जो जीवन को प्रज्वलित रखता है।

क्या तुम्हारे जीवन में ऐसे क्षण आए हैं जब तुमने साहस दिखाया है। शायद पल भर के हों पर उन क्षणों में तुमने या तुम्हारे मित्र ने वास्तविक शक्ति का परिचय दिया होगा। ऐसे रोमांचक क्षण हमारे नियमित दिनों में भी आ सकते हैं। क्या तुमने कभी इसका अनुभव किया है?

इन पृष्ठों में चर्चित महापुरुषों के बारे में और जानकारी प्राप्त करो और इस पर चर्चा करो कि उनके जीवन से क्या शिक्षा मिलती है।

अपने गाँवों को जानना

30

यह किरपाल सिंह तथा कमलजीत कौर की कहानी है जिनका पालन पोषण शहर में हुआ था और जो गाँवों के बारे में कुछ नहीं जानते थे। यह कहानी उन लड़के लड़कियों के लिए भी है जो वास्तविक भारत के बारे में बहुत कम जानते हैं, यह भारत जो हमारे गॉवों में रहता है।

उनके चाचा हरिंदर ने कई बार उन्हें अपने गाँव में आने का निमंत्रण दिया था। उनके भाई गुरूमिंदर जो कि शहर के आरामों के कारण वहीं बस गए थे, हरिंदर गाँव में अपनी खेती बाड़ी के बीच बस गए थें। वह कभी-कभी अपने भाई से मिलने के लिए शहर आया करते थे और कभी-कभी उनके साथ उनका बेटा देविंदर भी उनके साथ जाया करता था। देविंदर एक सीधा-सादा लड़का था और गाँव की पाठशाला में आठवीं कक्षा में पढ़ता था। वह बहुत प्रतिभावान छात्र था तथा हमेशा संतुष्ट रहता था। उसे अपने चचेरे भाई तथा बहन के साथ घुलने-मिलने में थोड़ी कठिनाई होती थी क्योंकि वे अलग भाषाएँ बोलते थे। उसे लगता था कि उनकी रुचि बड़ी विचित्र है और उनका व्यवहार भी उसे बड़ा अजीब लगता था। जब भी वह शहर जाता तो बड़ी जल्दी उसका मन ऊब जाता था और उसका मन अपने गाँव लौटने के लिए बेचैन हो जाता, जहां वह अपने मित्र सुरिंद्र के साथ गुल्ली डंडा या आँख मिचौनी खेल सकता था। अपने मित्र के साथ खेलते वह शाम को बड़ा खुश रहता था।

इस बार किरपाल तथा कमलजीत ने छुट्टियों में अपने चाचा के गाँव जाने का निश्चय किया। वास्तव में उनके पिताजी की भी बहुत इच्छा थी कि वे गाँव जाएँ। वे गाँव तो गए हालांकि उनके मन उत्साह तथा संदेह से भरे हुए थे। खैर वे वहाँ पहुँच गए। पहले दिन वे बड़े निराश हुए यद्यपि उनके चाचा का घर पक्का था जिसमें एक सुंदर ऑगन था। घर के ठीक सामने एक चमकती नदी थी। किंतु शाम तक उन्हें इतनी अच्छी-अच्छी चीजें खाने को मिलीं कि गाँव ने उनका मन जीत लिया। ताजे अमरूद, भुट्टा, लस्सी के बड़े-बड़े गिलास, मक्खन तथा रात में मकई की रोटी तथा सरसों का साग। इतनी स्वादिष्ट चीजें उन्हें पहले कभी नहीं मिली थीं । बच्चों के मन बड़े सरल होते है और वह किसी एक बात से

चिपके नहीं रहते। वे हमेशा नई-नई बातें सीखने और नए मित्र बनाने के लिए तैयार रहते हैं। उन्होंने देविंदर का एक नया रूप हँसमुख रूप देखा और देविंदर भी खुश था कि उन्हें उसका घर अच्छा लगा। रात होते-होते चाचा ने वचन दिया कि अगर वे दूसरे दिन सुबह जल्दी उठेंगे तो वे उन्हें अपना खेत तथा गाँव दिखाने ले जाऐंगे।

कमलजीत सुबह पाँच बजे उठकर बैठ गई। शहर में रहते हुए इतनी सुबह उठने की तो वह कल्पना भी न कर सकती थी। चूंकि उसे प्रकृति से प्रेम था इसलिए वह आंगन में चहल कदमी करने लगी। उसने दूर-दूर तक फैले आसमान की ओर देखा। इसके पहले उसका ध्यान कभी इस ओर नहीं गया था। उसकी चाची गोशाला में गायों के दुहने की निगरानी कर रही थी। कमलजीत के लिए यह बिलकुल नई बात थी क्योंकि इसके पहले उसने कभी भी गायों को दुहते हुए न देखा था। उसकी चाची ने बिना उबाले ही उसे थोड़ा दूध पीने को दिया। कमलजीत को विश्वास नहीं हुआ कि इस प्रकार भी दूध पिया जा सकता है। शहरी लोगों को दूध बोतलों से मिलता है, गायों से नहीं।

लड़के भी उठ चुके थे और पूरा घर चहल-पहल से भर गया। सुबह के नाश्ते के बाद वे बाहर जाने के लिए तैयार थे। उनके आश्चर्य की सीमा न थी जब उन्होंने दूर तक फैली गेहूँ की फसल देखी जो कि कटाई के लिए तैयार थी। सुनहली-सुनहली यह फसल सम्पन्नता का प्रतीक थी। हरिंदर चाचा तथा अन्य किसानों के खेतों में खेती के लिए कई मशीनें का उपयोग होता था। हल और बैल अधिक नहीं दिखाई देते थे, बस इक्के दुक्के ही दीख पड़ते थे। खेती का अधिकांश काम ट्रैक्टर से होता था और अन्य कई तरह की छोटी-छोटी मशीनें थीं जिनसे काम करना आसान हो जाता था। खेतों के बीच नहरें थीं और वहाँ नलकूप भी लगे हुए थे। सिंचाई के नए-नए ढंग के बारे में जानकारी प्राप्त करने में बच्चे तल्लीन थे। इसमें संदेह नहीं कि यह सब अपनी भूगोल की किताब में उन लोगो ने पढ़ा था किंतु उस समय वह इतना रूखा और अस्पष्ट लगा था। केवल नाम मात्र था। अब सारी बातें उनके दिमाग में स्पष्ट हुई और उनके भाई को इस विषय में इतनी जानकारी थी कि वे चकित हो गए। थोड़ी देर बाद उन्होंने खाद तथा कीट नाशी दवाइयों के बारे में भी जानकारी प्राप्त की। यहाँ जिन वस्तुओं के वह केवल नाम जानते थे, उनको उन्होंने स्वयं देखा। पहली बार उन्होंने अपने हाथों से मिट्टी को छुआ। उन्होंने घास-फूस साफ़ की। वे घास से खेलते रहे, गेहूँ के ढेर देखकर उनकी आँखें फटी की फटी रह गयीं। जो भी वस्तु उन्होने देखी वही उन्हें भा गई।

लगता था जैसे वे बिलकुल बदल गए हों।

दूसरे दिन वे गाँव की दुग्धशाला देखने गए जहाँ हर काम मशीन से होता था। उन्होंने देखा कि किस तरह वहाँ की गायें स्वस्थ हैं और उन्हें भर पेट चारा दिया जाता है, वहाँ की गौशालाएँ कितनी साफ सुथरी हैं तथा कितनी बुद्धिमानी से उनका निर्माण हुआ है। उन्होंने गायों को दिया जाने वाला चारा देखा। वे गायों और भैसों के साथ खेलते रहे। कभी उन्हें लात भी खानी पड़ती और फुटबाल के समान उछलकर गिरते। उन्होंने ''हरित क्रांति'' तथा ''खेत क्रांति'' जैसे नारे सुने थे और उनकी शिक्षिका ने उन्हें समझाने का पूरा प्रयत्न किया था। पर शायद उन्होंने भी कभी गाँव नहीं देखा था अन्यथा उसे और स्पष्ट तथा सरल तरीके से समझा पातीं। किरपाल ने सोचा कि हर शिक्षक के लिए गाँव की यात्रा अनिवार्य कर दी जानी चाहिए।

उनके बाकी दिन इस ''आधुनिक'' गाँव की नई-नई वस्तुओं का पता लगाने में हँसी खुशी में बीते। उन्होंने गाँव का अस्पताल तथा प्राथमिक चिकित्सा केंद्र भी देखा जहाँ बीमारों की देखभाल की जाती थी। वे देविंदर की पाठशाला भी गए। वह पाठशाला एक छोटे से भवन में थी किंतु वह सुव्यवस्थित थी। ऐसा लगा कि वहाँ बड़ा आनंद आता होगा।

जब घंटी बजी तो सब बच्चे अपनी-अपनी चटाई लेकर एक खुले स्थान में बैठ गए और इस प्रार्थना सभा में उन्होंने गीत गाए। एक छोटे लड़के ने समाचार पढ़ा। वे देश के अन्य भागों में हो रही बातों से भली भांति परिचित थे। कक्षा में वे सब चटाई पर बैठते थे और उन सब के सामने एक-एक चौकी रखी हुई थी। वहाँ बहुत अधिक नक्शे या श्यामपट् नहीं थे किंतु कमलजीत ने देखा कि उन बच्चों के लेख उसके तथा उसकी सहेलियों से कहीं अधिक सुगढ़ हैं। पहले वे स्लेट पर लिखते थे और उसके बाद कलम तथा स्याही से। हर पृष्ठ सुंदर था। इस पाठशाला में एक कामचलाऊ प्रयोगशाला भी थी जहाँ डिब्बों तथा बक्सों, चरखेंथा बोतलों की मदद से विज्ञान के सिद्धांत सिखाए जाते थे। उनके शिक्षक ने शहर में एक संगोष्ठी में यह सारी बातें सीखी थीं। देविंदर उस पाठशाला का होशियार बच्चों में था।

जब वे घूमने के लिए निकले तब उन्होंने देखा कि इस गाँव के लोग हृष्ट पुष्ट हैं। वे बड़े मेहनती हैं और उनके दिमाग में नई-नई बातें आतीं। उन्होंने एक दुकान देखी जहाँ एक नौजवान साइकिलों, पंपसेटों, हाथ के औजारों और घर के अन्य सामानों की भी मरम्मत करता था। गाँव में एक बढ़ई भी था जो पलंग, मेज़ तथा शेल्फ आदि बनाता था। गाँव के

मिस्त्री अच्छे कपड़े पहनते थे तथा सुबह से शाम तक मेहनत करते थे। खेतों में काम करने वाली औरतें काम करते समय ज़ोर से गातीं या बातें करतीं। वे कई बार आपस में झगड़ा भी करतीं। इस गाँव में जीवन का सच्चा रूप देखने को मिला था क्योंकि यहाँ के लोगों में अच्छे जीवन के लिए प्यार था।

एक दिन शाम को वे गाँव पंचायत के सरपंच से मिले। वे एक वृद्ध व्यक्ति थे जिनकी लंबी सफेद दाढ़ी थी और सर पर चमकती सुनहरी पगड़ी। किरपाल तथा कमलजीत दोनों ही शर्मीले स्वभाव के थे और सोच रहे थे कि वे उनसे क्या बातें करें किंतु उन महाशय ने इतनी मजेदार बातें सुनाईं कि उनकी झिझक दूर हो गई। उन्होंने मिलकर गन्ने के रस का गिलास भी पिया। उन्होंने देखा कि इस गाँव के गिलास उनके घर के गिलास से कहीं अधिक बड़े हैं। सरपंच जी ने गाँव की कहानियाँ सुनाईं और गुरुग्रंथ साहिब की उक्तियाँ तथा अन्य गुरुओं की वाणियों से उन्हें और रोचक बनाया। बच्चे बड़े प्रभावित हुए, वे बड़े खुश थे। एक और शाम वे अपनी चाची के साथ एक शादी में गए और उसका भरपूर आनंद उठाया। वहाँ सब में अतिथि सत्कार की भावना थी।

उनके चाचाजी फिर उन्हें गाँव में भांगड़ा दिखाने ले गए और उसे देखकर तो उनकी प्रसन्नता की सीमा न रही। हिंदू मुसलमान सिक्ख सभी धर्मों के लोग एक साथ नाच रहे थे। जब उन्होंने इन दोनो नए बच्चों को देखा तो उन्हें भी अपने साथ मिला लिया और वे भी सब के साथ मिलकर खूब नाचे। यह भांगड़ा स्कूल के मंच पर किए गए भांगड़ा नृत्य से कितना अलग था। यहाँ अधिक आनंद था, दर्शकों की कोई चिंता न थी।

क्या गाँव में गरीबी नाम की कोई वस्तु नहीं है? किरपाल ने पूछा और क्या सभी गाँव इसी प्रकार के हैं? उसके चाचा ने समझाया कि बीस साल पहले इस गाँव में आज के समान गेहूँ या मक्का नहीं उगता था और आज भी ऐसे कई लोग थे जिनके पास स्वयं की बहुत कम जमीन थी, कई ऐसे भी थे जिनके पास जमीन थी ही नहीं और वे अपेक्षाकृत गरीब थे। परंतु गाँव में रेडियो तथा कुछ कृषि अधिकारियों द्वारा बताई गई बातों को सुनकर गाँव के कई किसान अपनी पुरानी आदतों को छोड़कर खेती के नए ढंग अपनाने को तैयार थे। इसके लिए समय अवश्य लगा और कुछ तो अब भी संदेह करते थे। हरिंदर पाल को स्वयं आगे आना पड़ा और यह दिखाना पड़ा कि ट्रैक्टर की सहायता से उपज बढ़ाई जा सकती है। लोगों को सिंचाई तथा खाद का महत्व समझाने के लिए उन्हें स्वयं बहुत मेहनत करनी पड़ी। किंतु एक

बार जब उन्होंने परिणाम देखा तो सब को भरोसा हो गया। यहाँ तक कि गाँव की औरतों ने भी खेती संबंधी, खाना बनाने, बच्चों की देखभाल, स्वास्थ्य तथा बीमारी और सफाई संबंधी कई, नई बातें सीखीं। चाचाजी ने बताया कि यह विचार कि गाँव के लोग अज्ञानी हैं और नई बातें सीखना नहीं चाहते, बिलकुल गलत है। गाँव के कई प्रौढ़ व्यक्तियो ने पढ़ना तथा लिखना सीखा था। परंतु सबसे बड़ी बात तो यह थी कि वे नई बातों को सीखने, अपने आप को बदलने और प्रगति के लिए तैयार थे। उनमे नई बातों के प्रति जोश था, दिलों में उमंग थी और स्वभाव से वे संतोषी थे। बच्चों के लिए गाँव की यह सैर इतनी शिक्षाप्रद थी कि जब वे वापिस लौटे तो बड़े प्रसन्न थे और कई दिनों तक वे वहाँ की बातें याद करते रहे। गाँव के जीवन के प्रति उनके विचार ही बदल गए थे। अपने नन्हे चचेरे भाई देविंदर के प्रति उनके मन में प्रेम और बढ़ गया और उन्होंने उसे वचन दिया कि वे हर छुट्टियों में गाँव लौटेंगे।

क्या तुम किसी गाँव की सैर पर गए हो ? क्या तुम्हारे निजी अनुभव भी इन्हीं दो बच्चों के अनुभवों के समान हैं ? एक संपन्न और सुखी गाँव के विषय में क्या तुम इन बातों के अलावा और भी कोई बात बता सकते हो ?

अगर तुम्हारे अनुभव भिन्न हैं तो वह कौन-सी बात है जिसने तुम्हें उदास बना दिया है ? यह ध्यान रखना होगा कि हमारे देश के सभी गाँव इतने ही समृद्ध नहीं है। हमारे देश के वे गाँव तो समृद्ध हैं जहाँ गेहूँ, चावल, कपास, मक्का, दाल तथा इसी प्रकार की फसल उगाई जाती हैं। हमारे यहाँ चाय और काफी के बागान भी हैं परंतु इनमें से कुछ ही समृद्ध हैं। वहाँ रहने वाले लोगों में से अधिकांश गरीब हैं और उन्हें मुश्किल से एक समय का भोजन मिलता है। गाँव के सभी लोगों के पास जमीन नहीं होती। केवल कुछ किसानों के पास अपनी जमीन होती है, अन्य उनके खेतों में उनके लिए काम करते हैं, उनका खेत जोतते हैं। उन्हें बहुत कड़ी मेहनत करनी पड़ती है और उन्हें बहुत कम मजदूरी मिलती है। इस तरह उनका शोषण होता है। यहाँ निर्धनता, गंदगी, बीमारियाँ सभी कुछ हैं। यहाँ अंधविश्वास भी है। बहुत कम लड़कियाँ स्कूल जाती हैं। लड़कों की तुलना में लड़कियों को निम्न माना जाता है। औरतों को बहुत कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। प्रायः पुरुष शराब पीते हैं। यहाँ बहुत दुःख है। ऐसी वास्तविकताएँ हैं जो हमें कई गाँवों में स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती हैं। परंतु प्रश्न उठता है कि यदि बीस वर्षों में देविंदर के गाँव जैसे कुछ गाँव समृद्ध बन सकते हैं तो अन्य क्यों नहीं हो सकते ? क्या इसका कारण यह है कि हमने

उनकी तरफ ध्यान नहीं दिया, अपनी शिक्षा तथा ज्ञान को उनके साथ बाँटने की दिशा में कुछ ध्यान नहीं दिया।

गाँवों में जाकर स्वयं देखो कि भारत की वास्तविक दशा क्या है। यह खुशी की बात होगी यदि एक दिन तुम्हारे मन मे उनके विए कुछ करने और उनकी हालत सुधारने की भावना जाग्रत हो।

क्या तुमने कभी इस प्रश्न पर विचार किया है कि तुम्हारे दैनिक जीवन में तुम्हारे ऊपर किस प्रकार के दबाव पड़ते हैं ?

एक दबाव तो परियोजना कार्य को, गृह कार्य को पूरा करने का होता है। फिर परीक्षाओं का दबाव सिर पर नंगी तलवार के समान लटकता रहता है। प्रगति पत्र का भी बहुत दबाव रहता है।

ऐसे भी शिक्षक होते हैं जो अपने व्यक्तित्व, अपने-तुम्हारे परस्पर संबंध, तथा अपने विचार एवं अपनी रुचि-अरुचि के अनुरूप तुम्हारे ऊपर दबाव डालते हैं।

शायद तुम इसे न मानो परंतु तुम पर तुम्हारे सहपाठियों का भी बहुत अधिक दबाव पड़ता है। तुम्हें यह लगता है कि तुम उनसे वेशभूषा में, बोलचाल में, खेलों में और मनोरंजन के साधनों में अलग नहीं रह सकते। सारा समूह एक अकेले पर दबाव डालता है।

फिर तुम्हारे माता-पिता भी तुम पर बहुत दबाव डालते हैं। शायद तुम्हें और तुम्हारे माता-पिता दोनों को ही यह बात अच्छी न लगे। साधारणतया उनकी अपेक्षा यह होती है कि तुम कक्षा में सबसे अच्छे हो अथवा कक्षा के उत्तम छात्रों में तुम भी एक हो, तुम हर विषय में अधिक अंक प्राप्त करो, भले ही वह विषय तुम्हें अच्छा लगे या न लगे, स्कूल की परीक्षा बहुत अच्छे अंकों से उत्तीर्ण करो, आई. आई. टी. विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय की हर परीक्षा में तुम सफलता प्राप्त करो। विश्वविद्यालय में भी अच्छी पढ़ाई करो, तुम्हें एक अच्छी नौकरी मिले, खूब कमाओं, तुम्हारी शादी ठीक जगह पर हो और ज़िंदगी बस जाए। हर माता-पिता चाहते हैं कि उनका बच्चा जीवन में सफल हो और अधिकांश व्यक्तियों की दृष्टि में सफलता का अर्थ होता है, अच्छी नौकरी मिलना, अच्छा नाम कमाना, खूब पैसा कमाना, हर प्रकार के आराम प्राप्त करना और सुखपूर्वक रहना। जो कुछ वे अपने जीवन में करना चाहते थे और पाना चाहते थे और पा सके, वह चाहते हैं कि उनके बच्चों को वह सब कुछ अथवा उससे भी अधिक मिले। उनका प्यार और उनकी चिंता तुम्हारे लिए दबाव बन

जाते हैं और तुम्हारे जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग। तुम उनकी इच्छाओं के अनुसार अपने आप को ढाल लेते हो। क्या तुमने यह ध्यान दिया है कि वही सब कुछ तुम्हारे साथ हो रहा है।

और यह बड़े आश्चर्य की बात है कि तुम्हारे बड़े तथा तुम्हारे माता-पिता स्वयं भी समाज के द्वारा डाले जा रहे दबाव के शिकार हैं। केवल सफल व्यक्तियों का ही समाज में स्थान है। समाज में धन और पदवी की ही पूछ है। ऐसा लगता है कि समाज पैसे और पद की पूजा करता है और इसलिए वह पैसा और पद बनाए रखने के लिए अभिभावकों पर दबाव डालता है। ऐसा लगता है कि वे समाज के इस चक्र में फंस गए हैं। प्रश्न यह है कि हम क्या करें ?

क्या हम इस प्रश्न पर विचार करें कि समाज क्या है और वह हम पर इतना दबाव क्यों डालता है ? क्या तुम इस बात से सहमत हो कि समाज व्यक्तियों का समूह है जिसमें तुम और दूसरे व्यक्ति भी शामिल हैं ? अगर ऐसा है तो क्या हम आँखें मूंद कर यह बात मान लें कि जो समूह कहता है, वही ठीक है और सब को उसी के पीछे चलना चाहिए ? अगर समूह यह सोचता है कि व्यक्ति को अंतर्जातीय विवाह नहीं करना चाहिए तब समाज पुरुष और स्त्री पर इसका दबाव डालता है। क्या हमें अपने आप से यह प्रश्न नहीं करना चाहिए कि क्या यह अनुचित है ? समूह के विचार पुराने दकियानूसी हो सकते हैं और जो मनुष्य समाज से डरता है वह उसके दबाव में आ जाता है। परंतु यदि कोई व्यक्ति यह सोचता है कि मनुष्यों को इस प्रकार जातियों में बांटना बुरा है तब वह समाज के विचारों की परवाह नहीं करता। उसके विचार जितने स्पष्ट होंगे, उसके कार्य भी उतने अच्छे होंगे। इसलिए समाज के विचारों का अंधानुकरण करने के बजाए अपने विचारों में स्पष्टता लानी चाहिए। किंतु इसके साथ ही हम कुछ पश्चिमी देशों के नौजवानों को भी देखते हैं जो समाज के विचारों के विरुद्ध विद्रोह करते हैं और हिप्पी कहलाते हैं। वे गंदे कपड़े पहनते हैं, दाढ़ी नहीं बनाते, नशीली वस्तुएँ लेते हैं और बिना कोई काम किए सारी दुनिया घूमते हैं। क्या तुम सोचते हो कि इस प्रकार के विद्रोह में बुद्धिमानी है ? क्या यह उन्हें नष्ट नहीं कर देगा ? क्या इस प्रकार का विद्रोह उचित है ?

यदि हम इस समाज के विरुद्ध इस विपरीत ढंग से विद्रोह करते हैं तो वास्तव में हम एक नए समूह का निर्माण करते हैं जिसके अपने दबाव होते हैं। तो प्रश्न यह उठता है कि

हम किस प्रकार समाज में रहते हुए कार्य करें और फिर भी अपने ऊपर दबाव न पड़ने दें ? इसके लिए आवश्यक यह है कि प्रारंभ हम अपने से करें क्योंकि समाज का निर्माण करने वाले हम ही हैं। हमें यह समझना होगा कि हमारे विचार किस प्रकार बनते हैं, कैसे बिना देखे जाने हम विचार बना लेते हैं, किस प्रकार समाज हमारे कार्यों को प्रभावित करता है। तभी हम इस दबाव से मुक्त हो सकते हैं।

अगली बार जब तुम्हें परीक्षा देनी हो या कोई भाषण देना हो, या अपना प्रगति पत्र घर ले जाना हो या अपने माता-पिता को यह बताना हो कि तुम कहाँ गए थे, अगली बार जब तुम यह अनुभव करो कि तुम पर दबाव है तो क्या तुम इस पर विचार कर सकते हो और अपने आप को इससे मुक्त कर सकते हो ? चलो हम छोटी-छोटी बातों से प्रारंभ करें और यह देखें कि किस प्रकार छोटे दबाव हमारे जीवन को दु:खी बना देते हैं। इसी समझ के साथ तुम्हें उन्मुक्तता तथा आनंद मिल सकता है।

विभाजन का दुःख

संसार का सबसे बड़ा दुःख यह है कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य से बँटा हुआ है। हमारी यह पृथ्वी जहाँ अनंत सागर हैं, जहाँ रेगिस्तान से लेकर बर्फीली चोटियाँ हैं, जहाँ विभिन्न मौसमों तथा संस्कृति में जमीन आसमान का अंतर देखने को मिलता है, जहाँ सूर्य, चंद्र तथा नक्षत्रों का अपना सौंदर्य है, मनुष्य के रहने के लिए एक असाधारण स्थान बन सकती है। जहाँ वह अपना समय तथा शक्ति प्रकृति के अनेक रहस्यों को ढूंढने में लगाकर सुख से रह सकता है। किंतु यदि तुम ध्यान से देखो तो पाओगे कि इस धरा को सबकी संपत्ति न मानकर लोंगो ने अपने आपको राष्ट्रों में बाँट लिया है जैसे फ्रेंच, जर्मन, अंग्रेज, अमरीकी, रूसी, चीनी, जापानी, भारतीय, पाकिस्तानी आदि। हर देश की अपनी एक भौगोलिक सीमा है और पृथ्वी के उस भाग के रहने वाले लोग उस भाग से, अपनी जाति से और अपने रीति रिवाज से, भाषा तथा अपने जीने के ढंग से जुड़े होते हैं। यह बंधन इतना मजबूत होता है कि पड़ोस मे रहने वाले किसी अन्य सीमावासी को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। राष्ट्रों के बीच दीवार खड़ी हो जाती है और यह स्वाभाविक ही है जब हम अपने आपको दूसरों से अलग करते हैं। इस तरह हम अपने आपको इस पृथ्वी पर रहने वाले मनुष्यों के इस विशाल परिवार के सदस्य के रूप में नहीं देखते परंतु विभिन्न राष्ट्रों के रूप में देखते है जिनके अलग-अलग नेता हैं, विभिन्न आर्थिक समस्याएं और अलग-अलग नीतियाँ हैं। यह बड़े दुर्भाग्य की बात है। इसका परिणाम यह होता है कि इस धरती का केवल बाहरी रूप में भौगोलिक दृष्टि से ही विभाजन नहीं होता परंतु मनुष्यों के दिमाग भी बँट जाते हैं। वस्तुतः यह विभाजन मनुष्य के दिमाग में उत्पन्न होता है और यह कई रूपों में बाहर प्रकट होता है जैसे राष्ट्र के विरुद्ध राष्ट्र, धर्म के विरुद्ध धर्म, दल के विरुद्ध दल। इन सब के परिणाम हैं विनाशकारी युद्ध और यह पृथ्वी ने देखे भी हैं।

युद्ध इसलिए होते हैं क्योंकि दुनिया के लोगों के दिमाग अपने देश के प्रति प्रेम और दूसरों के प्रति घृणा की भावना से भरे होते हैं। हिंसा जीवन का एक अंग बन गया है। क्या

तुम सोच सकते हो कि इसका क्या अर्थ है? इसका अर्थ यह है कि यदि तुम अंग्रेज हो और यदि जर्मनी के साथ तुम्हारे देश की लड़ाई चल रही है जैसे कि अंतिम विश्व युद्ध में हुआ था, यदि तुम्हारा शहर हवाई आक्रमण का शिकार है तो एक दिन सुबह उठकर तुम पाते हो कि तुम्हारे माता-पिता, बीबी, बच्चों की उसी क्षण मृत्यु हो गई है, तुम्हारा घर जल चुका है, तुम्हारे मित्र मर चुके हैं और जहाँ तक दृष्टि जाती है वहाँ तक केवल विनाश का तांडव ही दिखाई पड़ता है। भोले भाले लोगों की इसलिए मृत्यु हुई क्योंकि उन्होंने अपने आप को अंग्रेज कहा। यह दूसरे ढंग से भी हो सकता है। जर्मन परिवार भी तहस-नहस हो सकता है। यही है युद्ध का अर्थ जिसमें सिर्फ हत्या ही होती है, जिसका कोई लाभ नहीं होता। दुःख तो इस बात का है कि मनुष्य तरह-तरह के नए शस्त्र जमा कर रहा है। तुमने शायद उनके बारे में सुना हो मिसाइल एफ सोलह का मिग आण्विक बम, जहाजी पोत, आण्विक शस्त्र आदि। ये केवल और अधिक निर्दयता से हत्या करने के साधन हैं। करोड़ों घायल तथा जीवन भर के लिए अपंग हो जाते हैं। शहरों और संस्कृतियों का नामों निशान तक नहीं बचा है क्योंकि मनुष्य सदियों से इस प्रकार के युद्ध में लगा हुआ है। अंतर केवल इतना है कि अब यदि आण्विक युद्ध प्रारंभ हुआ तब यह पृथ्वी बच नहीं सकती क्योंकि आणविक शस्त्र में केवल मनुष्यों के जीवन को नष्ट करने की ही शक्ति नहीं होती परंतु वह प्रकृति, पशु-पक्षियों का भी विनाश कर सकती है।

आज भी अरब और यहूदियों, ईराक तथा ईरान के बीच जो विभाजन है, उस पर जरा सोचो। सोच कर देखो कि किस प्रकार लोग काले तथा गोरे रंग के कारण विभाजित हैं और किस तरह दक्षिण अफ्रीका के लोग यातनाएँ भुगत रहे हैं। अपने पड़ोसी देश पाकिस्तान, बंगला देश तथा भारत के बीच कितनी बड़ी दरार है।

इसी तरह धर्मों के विभाजन ने भी कई ऐतिहासिक युद्धों को जन्म दिया है और आज भी हिंदू तथा मुसलमानों, ईसाई तथा यहूदियों के बीच यह युद्ध चल रहा है।

धर्म को मनुष्य की इस प्रकार सहायता करनी चाहिए कि वह इस संसार में अपने अस्तित्व को समझ सके, ईश्वर के साथ अपने संबंधों को स्पष्ट कर सके। इन सांसारिक बंधनों से, मोह माया से वह ऊपर उठ सके। किंतु इसके बदले में धैर्य के कारण क्रोध, निराशा, प्रभुत्व, हिंसा तथा घृणा ही फैल रही है। क्या यह मनुष्य का सबसे बड़ा दुःख नहीं है?

विशेषज्ञ कहते हैं कि दुनिया की सरकारें हर साल शस्त्रों पर खरबों रुपये खर्च कर रही हैं और अगर सारे युद्ध बंद कर दिए जायें तो सारी दुनिया के लोगों को खाना, कपड़ा तथा रहने के लिए घर दिए जा सकते हैं। एक अन्य विभाजन के बारे में सोचकर देखो जो कि अमीर तथा गरीब देशों के बीच है, जहाँ निर्धनता मनुष्य की आत्मा की हत्या कर देती है। यही क्यों एक ही देश के गरीब तथा अमीरों के बीच के विभाजन के बारे में सोचकर देखो। यह कितनी बड़ी विडम्बना है।

हमारे देश भारत की ओर देखो। इस देश के अंदर ही किस प्रकार के विभाजन हैं। क्या तुम यह कहते हो कि "मैं मराठी हूँ", "मैं बंगाली हूँ", "मैं तमिल हूँ", "मैं पंजाबी हूँ" या यह कहते हो कि "मैं भारतीय हूँ"। क्या तुम यह कहना पसंद करोगे कि मैं मानव हूँ? इस देश के बड़े लोग आज क्या कह रहे हैं? क्या उनके दिल और दिमाग विभाजित नहीं हैं जिसके कारण उनके आचरण में भी विभाजन है? एक प्रांत के खिलाफ दूसरा प्रांत, एक जाति के खिलाफ दूसरी जाति, एक उपजाति के खिलाफ दूसरी उपजाति। हमें यह क्या हो रहा है? क्या यह दुःख की बात नहीं है कि एक महान संस्कृति से संबद्ध होते हुए भी हम विभक्त हैं? क्या हम इस विभाजन की जड़ तक पहुँचने का प्रयत्न करें अर्थात इस समस्या को बिलकुल अलग ढंग से समझने के लिए मनुष्य के मन को समझने की कोशिश करें?

क्या हम यह देख सकते हैं कि सभी विभाजन दुःखों की जड़ हैं? अंततः सभी मनुष्य एक समान हैं। हम सभी दुःखी होते हैं, प्रसन्न होते हैं। हमें क्रोध भी आता है और हममें ईर्ष्या की भावना भी होती है। हमारे मन में आकांक्षाएँ हैं। हममें दया- करूणा है तथा भावनाएँ भी हैं तथा हमें वेदना भी पहुँचती है। हम नई वस्तुएँ खोज निकालते हैं। यद्यपि हम ऊपर से अलग-अलग दिखते हैं किंतु क्या हममें समानता नहीं है? कुछ गोरे हैं, कुछ काले, कुछ भूरे, कुछ पीले, कुछ लंबे तो कुछ नाटे, कुछ सुंदर तो कुछ कुरूप। परंतु इन सभी सतहों के पीछे मनुष्य एक है।

समय आने पर क्या तुम एक बेहतर संसार बनाओगे? क्या तुम अपने इन छोटे बड़े प्रयत्नों से विभाजन का यह दुःख समाप्त करोगे? क्या तुम इस सुंदर पृथ्वी की देखभाल कर उसे इसी प्रकार सुंदर बनाए रखोगे ताकि वह संसार के सभी लोगों का घर बन सके? यह निश्चय ही एक महान कार्य है।

क्या तुमने गौर किया है कि सभी स्वतंत्रता चाहते हैं? बच्चे स्कूल में स्वतंत्रता चाहते हैं, माँ घर में स्वतंत्रता चाहती है, पिताजी दफ्तर में, शिक्षक और प्रधानाचार्य भी स्वतंत्रता चाहते हैं। पक्षी स्वतंत्र रहना चाहते हैं और पेड़ों को भी बढ़ने के लिए स्वतंत्रता चाहिए। पिंजड़े में बंद पशु कभी खुश नहीं होता। राजनीतिज्ञ भी स्वतंत्रता चाहते हैं। वैज्ञानिक स्वतंत्रता की माँग करता है। पशु, पक्षी, मनुष्य सभी स्वतंत्रता चाहते हैं, अपना विकास करने के लिए उन्मुक्तता चाहते हैं। कोई भी बंधन में नहीं रहना चाहता। क्या तुमने इस पर ध्यान दिया है? क्या हम इस विषय पर और बातें कर सकते हैं?

एक दिन शिक्षिका ने कक्षा में इस प्रकार का वार्तालाप प्रारंभ किया। यह सुनकर बच्चों के चेहरे खिल उठे क्योंकि गणित, भौतिकी, इतिहास या भूगोल सीखने की अपेक्षा यह कहीं अधिक दिलचस्प विषय था। इस तरह कक्षा में सजीव चर्चा प्रारंभ हुई जो कुछ इस प्रकार थी:

शिक्षक : जब तुम यह कहते हो कि तुम्हें ''स्वतंत्रता'' चाहिए तब तुम्हारा क्या अर्थ होता है?

विधार्थी : मेरे विचार से इसका अर्थ यह है कि वह सब कुछ करना जो एक व्यक्ति करना चाहता है, न कि जो उसे करना पड़ता है।

शिक्षक : अच्छा ! यदि सोचो कि तुम्हें देर तक सोना अच्छा लगता है, उसी समय उठना अच्छा लगता है जब तुम्हारा मन करे, अपने मन के अनुसार तुम नहाना चाहते हो या नहीं चाहते, तुम गंदे कपड़े पहनकर उस समय आराम से स्कूल आते हो, जब प्रार्थना सभा समाप्त हो चुकी हो, तब क्या तुम स्वतंत्रता का अनुभव करोगे?

छात्र : नहीं यह ठीक नहीं क्योंकि इस तरह मैं कई बातों से वंचित रह जाऊँगा। किंतु जब हमें कभी-कभी देर हो जाती है, तब हमें उसकी सजा नहीं मिलनी चाहिए। जब हमें सजा मिलती है तब हम स्वतंत्रता का अनुभव नहीं करते। इसके बाद शिक्षिका ने इस प्रश्न का एक दूसरा रूप लिया क्योंकि वह चाहती थी कि कक्षा उस समस्या को एक अन्य दृष्टिकोण से

भी देखे।

शिक्षिका : ठीक है, चलो हम देखें कि एक शिक्षक के जीवन में स्वतंत्रता का क्या अर्थ होता है ? क्या एक शिक्षक अपनी मनमानी कर सकता है ?

छात्र : [एक साथ] बिलकुल नहीं।

शिक्षिका : उदाहरण के लिए वह यह नहीं कह सकता कि वह उसी समय कॉपियाँ जांचेगा जब उसका मन करे, वह कक्षा में बिना तैयारी किए आकर पढ़ा नहीं सकता, वह प्रधानाचार्य द्वारा सौपे गए उत्तरदायित्व को अस्वीकार नहीं कर सकता।

छात्र : हाँ, पर प्रधानाचार्य पर क्या उत्तरदायित्व होता है ? क्या वह मनमानी कर सकता है ?

शिक्षिका : नहीं, अभिभावकों, जनता और उसका समूचे समाज के प्रति उत्तरदायित्व होता है। साथ ही स्कूल के शिक्षकों तथा छात्रों के प्रति भी उसका दायित्व होता है। जब हम मिलकर कोई काम करते हैं, तब हमारी स्वतंत्रता का अर्थ उस समूह के प्रति बहुत जिम्मेदारी का होता है। यह बात सरकार पर भी चरितार्थ होती है। विधायकों की उन लोगों के प्रति जिम्मेदारी है जिन्होंनें उन्हें चुना है तथा इसी प्रकार प्रधान मंत्री तथा मन्त्री परिषद् का विधायकों के प्रति उत्तरदायित्व है और उन के माध्यम से लोगों के प्रति भी उनका उत्तरदायित्व है।

छात्र : क्या तानाशाही में कोई स्वतंत्रता होती है ?

शिक्षिका : नहीं, क्योकि तानाशाही मे केवल एक व्यक्ति ही निर्णायक होता है और अन्य सभी उससे डरते हैं क्या तुमने नहीं सुना कि जहाँ भय होता है वहाँ स्वतंत्रता नहीं होती।

छात्र : पर जनतंत्र में भी कभी-कभी हमें भय की अनुभूति होती है।

शिक्षिका : क्या तुम कोई उदाहरण दे सकते हो ?

छात्र : व्यापारी कानून से डरता है, गरीब आदमी अमीर आदमी से डरता है और व्यवस्था हड़ताल से डरती है।

शिक्षिका : परंतु जनतंत्र में लोग इसकी चर्चा कर सकते है, इस विषय पर लिख सकते है, है ना ?

छात्र : हाँ किंतु अखबार सारी गलत खबरें छाप देते हैं और इसलिए लोगों को बहुत सतर्क होना चाहिए।

शिक्षिका : हाँ वास्तव में जनतंत्र में लोगों की स्वतंत्रता के लिए प्रेस ही एक मार्ग है।
छात्र : किंतु इसके बाद भी लोग डरे रहते हैं।
शिक्षिका : अच्छा! यह बताओ, क्या तुम डरते हो?
छात्र : हाँ, हमें भी कभी-कभी डर लगता है।
शिक्षिका : यदि तुम डरे हुए हो तो क्या कुछ सीख सकते हो?
छात्र : नहीं उस समय हम बड़े उत्तेजित रहते हैं।
शिक्षिका : तब तुम क्या करोगे? तुम क्या करते हो?
छात्र : मैं पढ़ना छोड़कर कुछ और करता हूँ।
शिक्षिका : परंतु ऐसा करना बुद्धिमानी नहीं है। क्या तुम्हें पहले यह नहीं जान लेना चाहिए कि तुम्हें क्यों डर लगता है और किससे डर लगता है? इसके बाद क्या तुम्हें उस डर को समझ नहीं लेना चाहिए ताकि तुम अपने दिमाग से इन सब बातों को निकाल दो।

इस तरह उस दिन उनका वार्तालाप चलता रहा। शायद तुम भी इन प्रश्नों पर विचार कर सकते हो।

मनुष्य उत्सुकता तथा आश्चर्य से भरा हुआ होता है। उसने प्रकृति के विषय में जाँच कर सब कुछ जानने का प्रयत्न किया है। उसने बड़े धैर्य से पशुपक्षियों के जीवन के विषय में अध्ययन किया है। उसने अंतरिक्ष की छानबीन की है और तारों, ग्रहों और इस सृष्टि के बारे में सब कुछ जानने का प्रयत्न किया है। वह सागर की गहराइयों में उतरा है तथा उसने सीपियों, मोतियों, ह्वेल मछली, सील तथा सूँस मछली के बारे में बहुत जानकारी प्राप्त की है। उसने सागर तल की दुनिया की सभी बातें जानने का प्रयत्न किया है। उसने मनुष्य की कहानी और संस्कृतियों का अध्ययन किया है। उसने चट्टानें, गुफाएँ और जीवाश्म ढूंढ निकाले हैं उनकी कहानी समझी है। उसने दवा तथा शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में असाधारण खोज की है। इस तरह उसके मन में बाहर की दुनिया को लेकर बहुत जिज्ञासा है और इस विषय में बहुत ज्ञान प्राप्त किया है।

शिक्षिका इस कक्षा में छात्रों से अपने अंदर की दुनिया को खोजने के लिए कह रही है। वह चाहती है कि वे अपने दिल दिमाग में झांककर देखें ताकि वह यह समझ सकें कि कौन-सी वस्तु शिक्षा में सहायक है और कौन-सी नहीं। वह उनसे स्वतंत्रता के मार्ग में आने वाली रुकावटों के प्रति सजग रहने के लिए कह रही है। वह चाहती है कि वे अपने अवरोधों,

डर, चिंता, रुचि और ध्यान आदि के विषय को अच्छी तरह समझें।

क्या तुम इस बात से सहमत हो कि अपने आप के बारे में जानना उतना ही महत्वपूर्ण है, जितना बाहरी दुनिया का ज्ञान ?क्या तुम इस विषय पर अपनी कक्षा में चर्चा करना चाहोगे ? इस विषय पर ज़रा सोचो।

रवि चौदह वर्ष का एक संवेदनशील लड़का था। आठ नौ साल की उम्र से ही उसके मन में किसी अज्ञात वस्तु के लिए किसी अवर्णनीय वस्तु के लिए एक गहरी भावना थी और यह भावना बनी रही। जब भी वह सूर्योदय देखता, अकेले चलते समय, संगीत सुनते समय, किसी पौधे की देखभाल करते समय उसके अंदर एक ललक उठती कि वह यह पता करे कि भगवान कहाँ रहता है ? क्या किसी ने उसे देखा है ? इत्यादि। वह देखता कि किस प्रकार शाम तक गुलाब का फूल मुरझा जाता है, कैसे हर प्रकार के जीवन का अंत हो जाता है। जब वह कक्षा में नहीं होता तो सदा अकेला ही रहता। उसकी माँ एक धर्मपरायण हिंदू थी और पास के मंदिर में नियमित रूप से प्रार्थना करने जाती। रवि भी कभी-कभी शाम को उसके साथ जाता। उसे मूर्ति के चारों तरफ का वातावरण बहुत सुंदर लगता। मंदिर के दीप-अगरबत्ती और सुंदर तथा पवित्र आरती उसके मन को छू लेते। वह सोचता क्या ईश्वर उस प्रतिमा के अंदर है ? किंतु यदि ईश्वर सर्वशक्तिमान है तो वह केवल पत्थर की मूर्तियों के अंदर क्यों रहता है ? क्या ईश्वर आदमी के समान ही कोई है ? यह प्रश्न उसे प्रायः कचौटते।

उसकी बहिन ने एक ईसाई के साथ गिरजाघर में शादी की थी। उस दिन वह भी वहीं था, वहाँ की सुंदर व्यवस्था, पवित्रता, गीत तथा सादे समारोह ने उसे बहुत प्रभावित किया था। गिरजाघर के गुंबदों की सुंदरता, मोम बत्तियों की रोशनी ने उसे नई अनुभूति दी थी। उसके मन में प्रश्न उठा कि क्या ईश्वर केवल यहीं रहता है ? वे उसे मुक्तिदाता कहकर क्यों पुकारते हैं ? उस दिन सोने के पहले उसने बाइबिल के कुछ अंश पढ़े।

उसके घर के पास एक मस्जिद थी। अपने घर की छत से दोपहर के समय वह हजारों लोगों को घुटने टेके प्रार्थना में लीन देखता और उनकी तन्मयता तथा प्रार्थना की गूंज उनके दिल को छू देती। क्या इस्लाम उसके प्रश्न का उत्तर दे सकता था ? वह सोचता।

उसका सबसे अच्छा मित्र एक मुसलमान लड़का था, उसका नाम कासिम था।

कासिम के पिता ने उसे समझाया कि इस्लाम शब्द का अर्थ है ''शांति''। मुसलमानों का यह विश्वास है कि सारे मनुष्य भाई-भाई हैं और उन्हें शांति से तथा मिलजुलकर रहना चाहिए।

स्कूल में अपनी इतिहास की कक्षा में उसने राजकुमार सिद्धार्थ की कहानी पढ़ी थी। उसने पढ़ा था कि किस प्रकार उन्होंने सारे राजकीय सुखों का त्याग किया, अपनी पत्नी तथा बच्चे का त्याग किया और सब कुछ त्याग कर सत्य की खोज में जंगल में गए। वे उस सत्य की खोज में थे जो सारी मानवता को मुक्ति दिला सके। उन्हें वह सत्य प्राप्त हुआ और वे गौतम बुद्ध के नाम से जाने गए। बुद्ध जिन्होंने अपना ''धर्म'' सारे संसार को दिया। ''धम्म'' ने लोंगो को यह बताया कि मनुष्य के दुःखों का मूल कारण क्या है और दुःखों से बचने का मार्ग भी बताया। रवि की टेबल पर बुद्ध की एक छोटी-सी मूर्ति थी और उस मूर्ति की शांत तथा सौम्य मुद्रा रवि को बहुत प्रभावित करती। स्कूल में उसने गुरु नानक, सिक्खों के धर्म उसकी गहराई तथा महानता, उसके शांति तथा प्रेम के संदेश तथा मानवता के प्रति प्यार के संदेश के बारे में भी पढ़ा था। उसने जैन धर्म के गुरु महावीर के विषय में भी पढ़ा था जिन्होंने सभी जीवों के प्रति आदर का संदेश दिया था।

हर धर्म के पीछे मनुष्य की कुछ महान गुणों, उच्च आदर्शों को प्राप्त करने की लालसा स्पष्ट थी। हर धर्म में दया और भाईचारे का संदेश था। वह यह सोचकर बड़ी उलझन में पड़ जाता था कि क्यों अलग-अलग धर्मों के लोगों के बीच खून खराबा होता है जबकि हर धर्म के गुरुओं ने भाईचारे, प्रेम और किसी को चोट न पहुँचाने की बात कही है उसके माता-पिता यह देखकर बड़े गर्व का अनुभव करते थे कि ऐसी छोटी-सी उम्र में वह इतना समझदार है। कभी-कभी कक्षा में उसे ''दार्शनिक'' कहकर पुकारा जाता था लेकिन उसका आदर सभी लोग करते थे।

एक बार उसके पिता के साथ उसकी एक गंभीर बहस छिड़ गई। उसके पिता विश्वविद्यालय में दर्शनशास्त्र पढ़ाते थे। विभिन्न धर्म क्या कहते हैं? उनमें क्या समानता है? उसके पिताजी ने समझाया कि केवल धर्म के बाहरी रूप अलग हैं। जैसे कर्म कांड में, पूजा के स्थानों, त्यौहारों तथा रीतिरिवाजों में अंतर है परंतु यह केवल बाहरी अंतर है। सभी धर्मों के मूल में यही भावना है कि सभी मनुष्य एक हैं और उनका संदेश भी यही है कि हम सबको प्रेम और शांति से रहना चाहिए। सभी धर्म यह कहते हैं कि इस संसार की हर वस्तु नश्वर है। जो पैदा होता है, वह मरता है। परिवर्तन ही जीवन का नियम है। रवि सुनता रहा और

सोचने लगा कि किस प्रकार वह स्वयं सत्य ही खोज करें।

उसके एक चाचा थे जो बड़े प्यार से उसे समझाते कि उनके विचार में ईश्वर एक परम शक्ति है जो विश्व के हर प्राणी में छाई हुई है। मनुष्य के मन में सदा इस बात की ललक होती है कि वह आत्मकेंद्रित जीवन की छोटी-छोटी बातों से ऊपर उठकर उस शक्ति से एक हो सके।

उन्होंने बताया कि इस महान शक्ति को मंदिरों या अन्य पूजा स्थलों तक ही सीमित नहीं रखा जा सकता। उनकी दृष्टि में अन्य मनुष्यों, पेड़-पौधों तथा पशु-पक्षियों की सेवा तथा देखभाल ही सबसे बड़ा धर्म है।

उनकी बातों को सुनकर रवि को लगा कि उनकी बातों में बहुत सार्थकता है किंतु वह उन अन्धविश्वासों के बारे में चिंतित था जो हर धर्म के साथ जुड़ गए थे। वह उसका वैज्ञानिक आधार चाहता था। वह किसी एक व्यक्ति या समूह के विश्वास का अंधानुकरण नहीं करना चाहता था।

एक बार रवि को स्कूल के पुस्तकालय में धर्मों के इतिहास पर एक किताब मिली और अपने अध्ययन के घंटे में उसने उसे उलट-पलट कर देखा। उसने एक दिलचस्प बात पढ़ी, जब आदि मानव ने अनंत आकाश को देखा और बिजली के कड़कने तथा बादल के गरजने को उनका कुपित रूप माना तो उसके मन में भय उत्पन्न हुआ और उसने प्रकृति की पूजा करनी प्रारंभ कर दी। क्रमशः उसने प्रकृति का अनोखा रूप सूर्योदय, सूर्यास्त, मौसम और अनंत सागर में देखा और उसने प्रकृति के साथ अपनत्व का अनुभव किया। आदि मानव ने प्रकृति पर विजय पाने की कभी कोशिश न की। उसने आकाश और तारों, वृक्षों और पेड़ पौधों, मछलियों तथा मुर्गियों, सागर तथा नदियों से गहरे संबंध का अनुभव किया। प्राचीन भारत के मनुष्य के मन में हर प्राणी के प्रति श्रद्धा थी। वह उनके धार्मिक विचारों का आधार था। रवि इन विचारों से बहुत प्रभावित हुआ। सच ही तो है प्रकृति के साथ अपने संबंधों के विषय में जानना ही सत्य की खोज का पहला कदम है, उसने सोचा।

क्या तुमने कभी जीवन पर गंभीरता से विचार किया है? क्या तुम्हें नहीं लगता कि जीवन में धर्म का बहुत महत्व है? ग्रह तथा अंतरिक्ष के जीवन का अध्ययन करने वाले बड़े-बड़े वैज्ञानिकों को भी इस सृष्टि में व्याप्त आंतरिक शक्ति की झलक मिलने लगी है। अगर तुम भी रवि जैसा सोचते हो तो खोज की इस भावना को दबाओ मत। जीवन का अर्थ समझने का प्रयत्न करो।

क्या आदि काल से चल कर अब तक पहुँचे हुए मानव ने प्रगति की है ? प्रगति का क्या अर्थ है ? सभ्यता का क्या अर्थ है ?

इस पर सोचो। अगर तुम मानव की कहानी पढ़कर देखो तो पाओगे कि इस दौरान उसके रहन-सहन, उसके कार्य आदि में निःसंदेह कई परिवर्तन हुए हैं। जरा उस आदि मानव के बारे में सोचकर देखो जो जंगल में शिकार की खोज में घूमता था। वह गड़रिया जो हरे-हरे चारागाहों में अपनी भेड़ें चराता है और आधुनिक मनुष्य, विशेषकर एक वैज्ञानिक युग का मनुष्य अपने आविष्कारों का पूरा लाभ उठा रहा है, प्रगति का यह एक पहलू है।

उस जमाने के किसान तथा आज के किसान के जीवन में बहुत अंतर है। पहले वह छोटे-छोटे समूहों में रहता था और खेती के लिए सीधे-सादे औजारों का प्रयोग करता था। इसके विपरीत आज का किसान खेती के लिए कई मशीनों का उपयोग करता है और उस धरती से कई गुना अधिक फसल उत्पन्न करता है। मशीनों ने मनुष्यों के काम को बहुत सरल बना दिया है। मनुष्यों के कपड़ों में परिवर्तन हुए हैं, हाथ से बने कपड़े, चरखे से लेकर आज का कपड़ा उद्योग जिसमें सूती अथवा सिंथेटिक कपड़े तैयार किये जाते हैं। मिट्टी से बने घरों से गगनचुंबी भवन, दफ्तर, कारखाने देखने वालों को हैरान कर देते हैं लेकिन यह यात्रा एक लम्बी यात्रा है। खान-पान, पोशाक, आवास सभी में प्राचीन काल से लेकर अब तक बहुत परिवर्तन हुए हैं। हर शताब्दी में उन्नति हुई है।

फिर प्रगति क्या है ? क्या यह मनुष्य के दिमाग तथा योग्यता की उत्क्रांति है, क्या वातावरण के अनुकूल अपने को ढालने की क्षमता है ? प्रकृति के दास बनने की बजाए उनका स्वामी बनना है ?

उसके विकास के एक अन्य भाग, अंतरिक्ष तथा समय पर विजय की ओर देखो। यह कहानी क्रमशः बैलगाड़ी से जेट विमानों की, कबूतरों द्वारा पत्र भेजने से लेकर उपग्रहों द्वारा तत्काल ही समाचार भेजने तथा वापस कैमरे से दूरदर्शन की तथा वीडियो सम्मेलनों की

कहानी है। जहाँ लोग अन्य शहरों में बैठे हुए एक दूसरे को देख सकते हैं। बाहरी अंतरिक्ष पर मनुष्य की विजय तथा अंतरिक्ष विज्ञान की उन्नति, चाँदी के थाल कहे जाने वाले चंद्रमा पर मनुष्य की उड़ान, अन्य ग्रहों की खोज, समय तथा स्थान को समाप्त करने की दिशा में मनुष्य की वैज्ञानिक प्रतिभा के विषय में सोचो। तुम मनुष्य द्वारा प्रकृति के रहस्यों की खोज के उदाहरण पा सकते हो।

जीवविज्ञान एक सादा विज्ञान था परंतु डी. एन. ए. के आविष्कार से एक नया मार्ग खुल गया है। आज मनुष्य एक नली में जीव उत्पन्न कर सकता है। उत्पति के संबंध में विज्ञान ने उसे उन दिशाओं में परिवर्तन का भी मार्ग दिखाया है। जीव टेक्नोलोजी के आश्चर्य अब हमारे समक्ष आने वाले हैं। क्या मनुष्य अंतरिक्ष का भी स्वामी बनने वाला है? इस पर चर्चा करो और जीवविज्ञान की अन्य अनोखी बातों की जानकारी प्राप्त करो। अब यह केवल मेंढक या तिलचट्टे को काटना नहीं है। धरती पर मनुष्य के जीवन की यह एक नई खिड़की है? उसी तरह इसी से संबंधित चिकित्साशास्त्र में भी शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति हुई है। हृदय प्रतिरोपण, दिमाग का आपरेशन, तंत्रिका का आपरेशन तथा खतरनाक बीमारियों जैसे तपेदिक तथा कैंसर रोगों का निदान वास्तविक सफलता है।

एक और आश्चर्यजनक खोज है कंप्यूटर। यह यंत्र दिमाग का हर काम अधिक कुशलता तथा स्पष्टता से कर सकता है। अब यह आवश्यक नहीं है कि मनुष्य तथ्यों का बोझ अपने दिमाग पर लादे। कंप्यूटर उसका विश्वासी बैंक है। मनुष्य को गणित के बड़े-बड़े सवालों को हल करने के लिए अंकों से उलझने की आवश्यकता नहीं रह गई है। कंप्यूटर यह काम मिनटों में कर देता है। कंप्यूटर किसी भी वस्तु का चुनाव करने में तुम्हारी सहायता करता है, वह तुम्हारे लिए निर्णय ले सकता है, व्यापार कर सकता है, कारखाने चला सकता है, यातायात सरल कर सकता है, संगीत तथा कविता का सृजन कर सकता है और अपनी गलतियाँ भी ठीक कर सकता है। मनुष्य के अधिकांश कार्य कर सकता है और इस कारण मनुष्य के पास अन्य शरारतों के लिए बहुत समय है।

तब प्रगति का क्या अर्थ है? क्या यह मनुष्य की अन्वेषण तथा खोज की प्रतिभा का विकास है? जब हम यह कहते हैं कि मनुष्य ने जंगली जीवन से आज के सभ्य जीवन तक उन्नति की है तब हमारे दिमाग में मनुष्य की संपन्नता के यह सारे प्रतीक रहते हैं, है ना? और एक स्तर पर कोई भी इस उन्नति को, धरती पर प्रकृति के ऊपर समय तथा स्थान पर

प्राप्त की गई विजय को झुठला नहीं सकता। प्रौद्योगिकी के इस विकास को परे नहीं रखा जा सकता है।

पर मनुष्य इतनी उन्नति के बाद क्या अपने पूर्वजों से कम हिंसक, कम लालची और कम स्वार्थी है ? क्या वह आपसी संबंधों के प्रति अधिक सभ्य है ? क्या वह पहले से अधिक विचारशील है ? क्या वह न्याय और औचित्य पर बल देता है ? क्या वह सुसंस्कृत है ? इतने वर्षों में उसने जिस कला और संगीत को जन्म दिया है, क्या उन्होंने उसे और परिष्कृत बना कर एक सच्चे मानव का रूप दिया है ? क्या बड़े औद्योगिकी समाज सुखी हैं ? क्या मनुष्य ने इस पृथ्वी पर पाई जाने वाली व्यवस्था से अपने संबंध को पहचाना है ? क्या वह भावनाओं के प्रति संवेदनशील है ? क्या उसके पास हृदय है ?

यदि उसके अंदर कोई परिवर्तन नहीं हुआ तब ''प्रगति'' का क्या अर्थ है ? जीवन, सभ्यता तथा संस्कृति का क्या अर्थ है ?

क्या यह संभव है कि हम औद्योगिकी प्रगति का लाभ उठाते हुए अंदर से मानव बने रहें और प्रेम कर सकें ? प्रेम क्या है ?

इन बातों पर सोचो।